ISSN No. 2582-9548

nbt.india
एकः सूते सकलम्

साहित्य और संस्कृति की द्विमासिकी

पुस्तक संस्कृति

वर्ष - 7 ◆ अंक - 3 ◆ मई - जून 2022 ◆ मूल्य ₹40.00

- धर्मवीर भारती की पत्रकारिता
- क्रांतिकारी अजीजन बाई
- मधुबनी की लोककला
- प्रेमचंद की कहानियों में खेलों का महत्व
- रवीन्द्रनाथ ठाकुर का पहला हिंदी भाषण

सीएसआईआर-केंद्रीय सड़क अनुसंधान संस्थान

(आईएसओ प्रमाणित आरएंडडी प्रयोगशाला)

राजभाषा गृह पत्रिका "सड़क दर्पण"

"राजभाषा हिंदी का प्रचार एवं जन-मानस में वैज्ञानिक चेतना का प्रसार"

❖ वैज्ञानिक तथा तकनीकी लेख
❖ जनमानस के लिए लोक रूचि के विषय
❖ संस्थान की विभिन्न गतिविधियों की जानकारी
❖ संस्थान के अनुसंधान और विकास (आरएंडडी) संबंधित जानकारी
❖ विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विविध पहलु
❖ हिंदी में साहित्यिक अभिव्यक्ति
❖ समसामयिक जानकारी

संपर्क -

संपादक, 'सड़क दर्पण'
राजभाषा अनुभाग, सीएसआईआर-केंद्रीय सड़क अनुसंधान संस्थान
दिल्ली-मथुरा मार्ग, डाकघर सीआरआरआई, नई दिल्ली- 110025
दूरभाष : 26929175, 26831760, 26832325, 26832427/165
ई-पत्रिका का लिंक : **https://www.crridom.gov.in/content/sadak-darpan-hindi-magazine**

प्रधान संपादक
प्रो. गोविंद प्रसाद शर्मा

संपादक
पंकज चतुर्वेदी

सहायक संपादक
दीपक कुमार गुप्ता

संपादकीय सहयोग
विजय कुमार, मोहन शर्मा

विज्ञापन एवं प्रसार
कंचन वांचु शर्मा

उत्पादन
अनुज कुमार भारती, पवन दुबे

रेखाचित्र
अरूप गुप्ता

सज्जा/डिजाइन
ऋतुराज शर्मा, समरेश चटर्जी

शब्द संयोजन/कार्यालयीन सहयोग
प्रवीन कुमार

सदस्यता शुल्क
व्यक्तियों के लिए
एक प्रति : ₹ 40.00
वार्षिक : ₹ 225.00
(शुल्क भारत के लिए मान्य)

संपादकीय पत्र-व्यवहार
संपादक
पुस्तक संस्कृति
राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत
पता : नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया
फेज़-II, वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070.
फोन : 011-26707876
ई-मेल: editorpustaksanskriti@gmail.com

प्रकाशक व मुद्रक अनुज कुमार भारती द्वारा नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया (राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत) नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया, फेज़-II, वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070 के लिए प्रकाशित और रेक्मो प्रेस प्रा. लि., सी-59, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया फेज़-I, नई दिल्ली-110020 से मुद्रित।

संपादक
पंकज चतुर्वेदी

सर्वाधिकार सुरक्षित : प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए लेखक और प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। प्रकाशित रचनाओं के विचार से प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत से संबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल दिल्ली न्यायालय के अधीन होंगे।

ISSN NO. 2582–9548

पुस्तक संस्कृति

साहित्य एवं संस्कृति की द्विमासिकी

वर्ष-7; अंक-3; मई-जून, 2022

इस अंक में

संपादकीय — *प्रो. गोविंद प्रसाद शर्मा* — 2

विरासत — **धर्मवीर भारती की पत्रकारिता**—*डॉ. धनंजय चोपड़ा* — 4

साहित्य — **युग-द्रष्टा और स्रष्टा दिनकर : कविता और जीवन में सामरस्य की साधना**—*डॉ. शैलेन्द्रकुमार शर्मा* — 7

आलेख — **वैदिक दर्शन में उदात्त राष्ट्रीयता का समावेश**—*रामसागर दुबे* — 11

लेख — **प्रेमचंद की कहानियों में खेलों का महत्व** —*कृष्णवीर सिंह सिकरवार* — 15

अमृत महोत्सव — **क्रांति और कलम के अमर सेनानी डॉ. भगवान दास माहौर**—*शिवजी श्रीवास्तव* — 18

अमृत महोत्सव — **क्रांतिकारी अजीजन बाई**—*सीमा 'असीम' सक्सेना* — 21

अमृत महोत्सव — **देश की आजादी में पहाड़िया जनजाति का योगदान**—*संजय कृष्ण* — 24

लेख — **सिंहगढ़ के लिए तानाजी मालुसरे का बलिदान**—*सीताराम गुप्ता* — 27

आलेख — **भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में बंगाल के हिंदी पत्र-पत्रिकाओं की भूमिका**—*डॉ. मनोज कुमार सिंह* — 29

शब्द ज्ञान — **आओ भारतीय भाषाएँ सीखें** — 32

लेख — **वन और पानी का संबंध**—*संजय गोस्वामी* — 34

लोककला — **मधुबनी की लोककला**—*डॉ. रामचंद्र राय* — 37

कहानी — **अंतिम ग्राहक**—*निरंजन* — 40

लेख — **रवीन्द्रनाथ ठाकुर का पहला हिंदी भाषण** —*डॉ. कमलकिशोर गोयनका* — 44

पुस्तक समीक्षा — 46

पुस्तकें मिलीं — 59

साहित्यिक गतिविधियाँ — 61

पाठकीय प्रतिक्रिया — 64

इतिहास का पुनर्लेखन

इतिहास के माध्यम से हम अपने अतीत को जानने की कोशिश करते हैं। इतिहास हमें बतलाता है कि हमारा अतीत कैसा था? हमारी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था कैसी थी? हमारी शक्ति क्या थी और हमारी कमजोरी क्या थी? विचारक मानते हैं कि इतिहास में देने के लिए बहुत कुछ है। वह कई तथ्यों को उद्घाटित करता है तथा कई पर्तों को खोलता है। यदि हम इतिहास द्वारा प्रदाय पूर्व में प्राप्त जानकारी तक अपने को सीमित रखते हैं तब वह उतना ही देता है जो वह दे चुका है, पर यदि हम इतिहास से प्रश्न पूछते हैं, अपनी जिज्ञासा के साथ कुछ जानना चाहते हैं और इस दृष्टि से उसकी गहराई में जाते हैं तब हमें लगता है कि इतिहास में पूर्व में उसने जो बतलाया और दिया वही अंतिम नहीं होता, अपितु वह अध्येता के सम्मुख नई घटनाओं, संदर्भों और साक्ष्यों को उद्घाटित करता है, जो नई स्थापनाओं को स्थापित करती हैं, यही इतिहास का पुनर्लेखन है।

भारत में इतिहास लेखन को लेकर विचार मंथन निरंतर होता रहा है। जो इतिहास हमें पढ़ाया जाता रहा है, उस इतिहास को समाज और प्रबुद्ध वर्ग ने स्वीकार नहीं किया है। अतः इतिहास के पुनर्लेखन को लेकर बार-बार आवाज उठती रही है। तात्कालिक रूप से यदि देखा जाए तो सीबीएसई के छात्रों को जो इतिहास पढ़ाया जा रहा है, उसके कारण इतिहास के पुनर्लेखन की माँग तीव्रता से बढ़ रही है। इतिहास की इन पुस्तकों में ऐतिहासिक घटनाओं का विश्लेषण और तथ्यों को एक विशेष विचारधारा से प्रभावित होकर लिखा गया है तथा भारतीय इतिहास के उन संदर्भों और तथ्यों की उपेक्षा की गई है जो भारत के गौरव को बढ़ाने वाले और आत्मविश्वास को जागृत करने वाले हैं।

इतिहास में एक काल खंड ऐसा आया जब यूरोपीय शक्तियों ने विश्व के विभिन्न भागों में जाकर अपने साम्राज्य की स्थापना की और देशों को पराधीन किया। इन शक्तियों को कहीं से भी विशेष प्रतिरोध का सामना नहीं करना पड़ा और कमोबेश देशों ने इनके स्वामित्व को स्वीकार भी कर लिया। अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड में ऐसा ही हुआ, पर भारत में साम्राज्यवादी शक्तियों का अनुभव अलग रहा। वे यहाँ अपने को असहज अनुभव करते रहे। इसका कारण यह था कि यहाँ आने के बाद उन्हें अहसास हुआ कि वे एक समुन्नत संस्कृति और सभ्यता वाले देश में आ गए हैं जो सांस्कृतिक, साहित्यिक और वैचारिक दृष्टि से उनसे बहुत आगे है। ई.पू. तीसरी शताब्दी में यूरोपीय यात्री मेगस्थनीज ने 'इंडिका' नामक पुस्तक में तथा चीनी यात्री फाहियान और ह्वेनत्सांग ने क्रमशः पाँचवीं और सातवीं शताब्दी में भारत भ्रमण के समय जो लिखा, और 17वीं सदी में इटली के रॉवेर्तो नोविली अथवा 18वीं सदी में आए फ्रांस के फादर पोंस ने जो लिखा, वह तथा इसके पूर्व अरब के इतिहासकार अलबरूनी ने जो भारत में गणित, ज्योतिष और आयुर्वेद के संबंध में लिखा, वह इस तथ्य को प्रमाणित करता है। अतः स्वतंत्रता के पूर्व भारत का जो इतिहास लिखा गया, वह साम्राज्यवादी हितों को ध्यान में रखकर विजेताओं द्वारा लिखा गया। उसका उद्देश्य भारत के आत्मगौरव को कम करना था। सुंदरलाल ने लिखा है कि, "संसार के इतिहास में जब-जब और जहाँ-जहाँ, एक कौम दूसरी कौम के शासन में आई है, वहाँ कुदरती तौर पर शासक कौम के लेखकों की गरज़ अपनी रचनाओं से यही रही है कि अपनी कौम के लोगों में देशभक्ति, आत्मविश्वास, स्वाभिमान और साहस जागृत हो और शासित कौम वालों में इन्हीं गुणों को कम करें या पैदा ही नहीं होने दें। अंग्रेजों के लिखे हुए भारतीय इतिहास करीब-करीब शुरू से आखिर तक इसी दोष में रंगे हुए हैं।" (*सुंदरलाल : भारत में अंग्रेजी राज, भाग-एक, पृ.सं. 2*)

साम्राज्यवादी इतिहासकारों/विचारकों को यह आवश्यक था कि वे विजित देश की संस्कृति, सभ्यता और परंपराओं को अपने से हीन और स्वयं (विजेता) की संस्कृति तथा उपलब्धताओं को श्रेष्ठ बतलाएँ। इसका कारण यह है कि यदि विजित प्रदेश की संस्कृति तथा उसके निवासी विजेताओं से श्रेष्ठ हैं तब विजेता शक्तियों को विजित देश पर शासन करना आसान नहीं हो पाता। जैसा अमर्त्य सेन ने कहा है, "किसी अन्य देश पर, उसके निवासियों को अपने समान मानकर, शासन कर पाना आसान नहीं होता।" (*अमर्त्य सेन : भारतीय अर्थतंत्र, इतिहास और संस्कृति, पृ.सं. 141*) यही कारण है कि जेम्स मिल ने सन् 1817 में लिखी अपनी पुस्तक 'हिस्ट्री ऑफ ब्रिटिश इंडिया' में भारतीय संस्कृति, सभ्यता और परंपराओं को हीन और असभ्य बतलाया था तथा भारत को 'असभ्य देश' कहा था। जेम्स मिल ने दंभपूर्वक कहा, "भारतीय सभ्यता भी अन्य ज्ञात घटिया संस्कृतियों जैसी ही है, लगभग वैसी ही जैसी चीन, फारस या अरबों की या फिर जापान, हिंद-चीनी, स्याम, बर्मा, मलाया, लंका और तिब्बत आदि के गुलाम देशों की।" (*वही*) जेम्स मिल द्वारा लिखित यह पुस्तक भारतीय प्रशासनिक सेवा में भर्ती सभी अधिकारियों को पढ़ना आवश्यक थी। इसके कारण प्रशासनिक अधिकारियों में भारत की नकारात्मकता और हीन देश होने की छवि अंकित हुई। उसने भारत के इतिहास को

विकृत तरीके से प्रस्तुत किया। आश्चर्यजनक यह भी है कि जेम्स मिल कभी भी भारत नहीं आया और न किसी भारतीय भाषा की उसे जानकारी थी। इसी प्रकार मैकाले के, 'मिनट्स ऑन इंडियन एजुकेशन' में भारतीय ज्ञान को हीन दर्शाया गया।

इतना ही नहीं, अपितु साम्राज्यवादी ताकतों ने भारत के इतिहास को विकृत करने के लिए लालच और पैसा देकर तथा झूठ का सहारा लेकर गलत इतिहास लिखवाया। इस क्रम में उन्होंने भारतीय राजाओं का चरित्र हनन भी किया। सुंदरलाल ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि, "....जिस सिराजुद्दौला ने अपने नाना अलीवर्दी खाँ की अंतिम आज्ञा के अनुसार तख्त पर बैठने के दिन से मरने के समय तक कभी मदिरा को हाथ नहीं लगाया और जिसके व्यक्तिगत चरित्र में कोई दोष नहीं था, उसे अंग्रेजों ने अपनी पुस्तक में पहले दर्जे का दुराचारी बतलाया।" (*वही पृष्ठ 8*) इतना ही नहीं, अनेक भारतीय और अन्य लेखकों को फारसी और दूसरी भाषाओं में झूठे ऐतिहासिक वृत्तांत लिखने के लिए ईस्ट इंडिया कंपनी की ओर से समय-समय पर धन मिलता रहा। सुंदरलाल ने उदाहरण देते हुए लिखा है कि, "हैदरअली की फारसी में एक जीवनी लिखने के लिए मिरजा इक़बाल को कंपनी की ओर से रुपये दिए गए। हैदरअली की यह जीवनी प्रारंभ से अंत तक झूठे कलंकों और पक्षपात से भरी हुई है।" (*वही पृ.सं. 9*)

साम्राज्यवादी इतिहास लेखकों तथा उन जैसे अन्य भारतीय इतिहासकारों द्वारा जो इतिहास लिखा गया है, उसे लेकर राममनोहर लोहिया की चिंता भी विचारणीय है। लोहिया ने इतिहास लेखन के संदर्भ में यह प्रश्न उठाया है कि भारत में इतिहास लेखन आनुपातिक दृष्टि से गलत है। एक लंबे समय के सांस्कृतिक और राजनीतिक काल को, जो शताब्दियों तक रहा, उसे समझने के लिए इतिहास की पुस्तकों में कम जगह दी गई है तथा जिसका शासन भारत में सबसे कम समय तक रहा, उसे इतिहास की पुस्तकों में ज्यादा जगह दी गई। लोहिया कहते हैं, "In one book, ancient India of over 4,000 years has been given 39 pages and in the other, less than 20. Muslim India of around 150 years has been allotted in one book about 100 pages and about 120 in the other. British India of around 50 years has been allotted 150 pages in one book and 70 in the other. This certainly is not history. It may at best be called the impressions of Indian history as felt by a British observer and at worst the distorted vision of the past by an imperialist eye." (*Rammanohar Lohia : Interval During Politics. Page No. 157*)

"अर्थात एक पुस्तक में प्राचीन भारत जो चार हजार वर्षों से भी अधिक प्राचीन है, उसे समझने के लिए 39 पृष्ठ दिए गए हैं और दूसरी पुस्तक में 20 पृष्ठों से भी कम पृष्ठ दिए हैं। मुस्लिम भारत को, जिसकी कालावधि लगभग 150 वर्ष रही है, उसके लिए एक पुस्तक में 100 पृष्ठ दिए गए हैं तथा दूसरी पुस्तक में 120 पृष्ठ दिए गए हैं। ब्रिटिश भारत, जिसकी अवधि 50 वर्ष के करीब है, उसे एक पुस्तक में 150 पृष्ठ दिए हैं तथा दूसरी पुस्तक में 70 पृष्ठ दिए हैं। निश्चित रूप से यह इतिहास नहीं है। इसे अधिक-से-अधिक यह कहा जा सकता है कि यह ब्रिटिश अध्येताओं का भारत के इतिहास के संबंध में आकलन तथा बुरे-से-बुरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि यह साम्राज्यवादी दृष्टि से भारत के इतिहास को विकृत करने का प्रयास है।"

कम या अधिक यह क्रम आज भी कायम है। प्राचीन भारतीय इतिहास को कमतर आँकने तथा स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय कई वैचारिक धाराओं की उपेक्षा करने या उन्हें कमतर आँकने का कार्य किया जा रहा है। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के समय घटित कई घटनाओं के आकलन के लिए जिस शब्दावली का प्रयोग अथवा जिस नीति का प्रयोग अंग्रेजों ने किया, कई इतिहासकार उसी का अनुसरण आज भी कर रहे हैं। भारत के इतिहास लेखन को जिस प्रकार पाश्चात्य इतिहासकारों ने विकृत किया, उसी प्रकार साम्यवादी इतिहासकारों ने भी विकृत किया। इतिहास के संबंध में मार्क्सवादी धारणा वर्ग संघर्ष पर आधारित है। उसने इतिहास के स्वरूप को आर्थिक परिवर्तनों के आधार पर निरूपित किया। इतिहास, सांस्कृतिक चेतना के आत्मविकास का होता है, पर मार्क्सवादी इतिहास लेखन ने भारत की सामाजिक चेतना के सूत्रों की, जो मूलतः सांस्कृतिक और परंपरागत थे, उपेक्षा ही नहीं की, अपितु उन्हें नकारा भी। इसके परिणामस्वरूप समाज में संघर्षों की स्थितियों को तो रेखांकित किया गया, पर सामाजिक एकता के सूत्रों की अवहेलना हुई। उन्होंने ऐतिहासिक तथ्यों को मनमाने ढंग से प्रस्तुत किया। भारतीय इतिहास में वर्ग संघर्ष की स्थितियों पर वर्ग संबंध और सामाजिक एकता के सांस्कृतिक सूत्र हमेशा हावी रहे हैं। इसके साथ ही मार्क्सवादी इतिहास लेखन से जुड़े विद्वानों को हिंदू गौरव और हिंदू उभार से चिढ़ रही है।

जब भी कभी प्राचीन भारत के वैभव और उसकी उपलब्धियों की बात की गई तथा ऐसा लेखन किया गया, उसे हिंदुत्ववादी करार दिया गया। अमर्त्य सेन ने लिखा है, "आज के भारत को समझने के लिए अतीत में झाँकने की बात आज एक उत्तेजक राजनीतिक स्वरूप धारण कर गई है। अतीत के प्रति यह उत्साह आज की हिंदुत्ववादी राजनीति अधिक दिखा रही है।" (*अमर्त्य सेन, भारतीय अर्थतंत्र, इतिहास और संस्कृति : प्राक्कथन*)

भारतीय इतिहास लेखन की मूल समस्या यह रही है कि हम औपनिवेशिक चिंतन प्रक्रिया से अपने को उभार नहीं पा रहे हैं। ध्यान रखने की चीज है कि इतिहास केवल विजेताओं का ही नहीं होता, संघर्षशीलता का भी होता है। जीवित कौम अपने संघर्ष को याद रखती है। जब भी किन्हीं इतिहासकारों ने इस दिशा में शोध किया तथा तथ्यों को सामने लाए, उन्हें हिंदुत्ववादी या पुनरुत्थानवादी कहकर उनके प्रयत्नों की उपेक्षा की गई। यदि हमें अपने वैचारिक दैत्य से निकलना है और हीनता की ग्रंथि से बाहर आना है तब नए तथ्यों के आधार पर इतिहास के पुनर्लेखन का स्वागत किया जाना चाहिए। यह स्वतंत्र और आत्मगौरव से युक्त समाज की आवश्यकता है।

(प्रो. गोविंद प्रसाद शर्मा)

प्रधान संपादक, **पुस्तक संस्कृति**

धर्मवीर भारती की पत्रकारिता

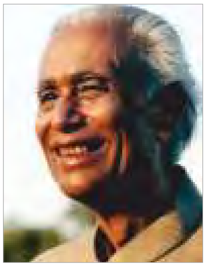

धर्मवीर भारती (25 दिसंबर, 1926-04 सितंबर, 1997) *आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रमुख लेखक, कवि, नाटककार और सामाजिक विचारक थे। वे एक समय की प्रख्यात साप्ताहिक पत्रिका 'धर्मयुग' के प्रधान संपादक भी थे। प्रमुख रचनाएँ—'सूरज का सातवाँ घोड़ा', 'गुनाहों का देवता', 'अंधा युग', 'ठंडा लोहा', 'मुर्दों का गाँव' सहित लगभग दो दर्जन पुस्तकें प्रकाशित। पद्मश्री, भारत भारती सम्मान, व्यास सम्मान से सम्मानित।*

बरास्ते 'संगम', 'निकष', 'आलोचना' और फिर 'धर्मयुग', हिंदी समाज और उसकी जातीय प्रतिभा को नए प्रतिमान देने के साथ हिंदी क्षेत्र को समर्थ भाषा और संप्रेषणीय वैचारिकता वाली परंपरा देने का अद्वितीय काम धर्मवीर भारती ने ही किया। यह धर्मवीर भारती ही थे, जो अपने लंबे पत्रकारीय जीवन में विषम परिस्थितियों को झेलते रहे, लेकिन पत्रकारिता के धरातल को कमजोर नहीं पड़ने दिया। 1971 के भारत-पाक युद्ध के समय उनकी पत्रकारिता का जो रूप सामने आया, वह उनकी रचनाशीलता की बहुआयामी छवि प्रस्तुत करने के लिए काफी था। एक सच यह भी कि यह उनकी लोक जागरूक और श्रमसाध्य रचनाशील पत्रकारिता का ही परिणाम था कि उनके संपादकत्व में 'धर्मयुग' कुछ समय में लाखों पाठकों वाली पत्रिका बन गई।

डॉ. धनंजय चोपड़ा

संप्रति : 25 वर्षों तक पत्रकारिता करने के बाद अब इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सेंटर ऑफ मीडिया स्टडीज में पाठ्यक्रम समन्वयक के पद पर कार्यरत।

प्रकाशन : विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में दो हजार से अधिक आलेख व स्तंभ के साथ-साथ 15 पुस्तकें प्रकाशित।

सम्मान : सूचना प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार का भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार, उ.प्र. हिंदी संस्थान, लखनऊ का बाबूराव विष्णु पराडकर तथा धर्मवीर भारती पुरस्कार, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, नई दिल्ली का महात्मा गांधी हिंदी लेखन पुरस्कार, विज्ञान परिषद का शताब्दी सम्मान सहित कई अन्य महत्वपूर्ण सम्मान।

संपर्क : मोबाइल— 9415235113

ईमेल— c.dhananjai@gmail.com

कहा यह भी जा सकता है कि धर्मवीर भारती पाठकों को गढ़ते थे। उसे तैयार करते थे ताकि वे अधिक जागरूकता के साथ अपने समय की रचनाओं, घटनाओं और जिज्ञासाओं को भली-भाँति समझ सकें और सत्ता-व्यवस्था के समक्ष कुछ जरूरी प्रश्न उठा सकें। उनका मानना था कि पत्रकारों को अपने परिवेश के चारों ओर से टूटते कगारों और खिसकते हुए धरातलों को ध्यान में रखते हुए अपने अंदर की लेखकीय शक्ति को बचाए रखकर स्थायी मानवीय मूल्यों को टिकाए रखने की लगातार कोशिश करते रहना चाहिए। सच तो यह है कि स्वयं भारती जी ने 'संगम' से लेकर 'धर्मयुग' तक अपने इस मंतव्य को उत्कर्ष तक पहुँचाने का काम कर दिखाया।

अपने समय की महत्वपूर्ण पत्रिका 'अभ्युदय' से पत्रकारिता का जीवन प्रारंभ करने वाले भारती जी जहाँ भी रहे, संपादक, पाठक व लेखक के त्रिकोण को संबंधों का नया आयाम देते रहे। एम.ए. की पढ़ाई का खर्च निकालने के लिए वे पद्यकांत मालवीय के संपादकत्व में इलाहाबाद से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'अभ्युदय' से जुड़े, लेकिन यहाँ अनाम रहकर काम किया।

'अभ्युदय' का सुभाष अंक भारती जी की ही देन था, जो आज भी चर्चा का विषय बनता रहता है। स्वयं भारती जी भी मानते थे कि उन्हें पत्रकारिता और संपादन कला का प्राथमिक ज्ञान 'अभ्युदय' में काम करते हुए ही प्राप्त हुआ। उन दिनों इलाहाबाद का साहित्यिक परिवेश अत्यंत समृद्ध हुआ करता था। साहित्यकारों की कई-कई मंडलियाँ हुआ करती थीं, जो बाद में गुटों में बदल गईं। इसी धरातल से भारती जी ने साहित्यिक पत्रकारिता में कदम रखा और छिटपुट लेखन का कार्य किया। 1946 में वे 'संगम' पत्रिका का सहायक संपादक बने। इलाहाबाद के लीडर प्रेस में मनोवैज्ञानिक कथा शिल्पी पं. इलाचन्द्र जोशी ने जब 'संगम' निकालने की योजना बनाई तो उन्हें सहयोगी के रूप में धर्मवीर भारती, ओंकार शरद और रमानाथ अवस्थी मिल गए।

यह सही है कि उन दिनों 'संगम' पूरी तरह इलाचन्द्र जोशी की परिकल्पना के अनुरूप ही प्रकाशित होती रही, लेकिन भारती जी की प्रतिभा उसमें साफ झलकती थी। 'संगम' के विशेषांकों, मसलन पंत और निराला पर निकले विशेषांकों के पीछे भारती जी की जीवंतता और लेखनी की तेजस्विता प्रकट होती थी। तमाम गुटों के साहित्यकारों को 'संगम' में स्थान मिला, लेकिन भारती जी ने

"वास्तव में पत्र या पत्रिका की सफलता के मूल में एक मौलिक तत्व यह निहित होता है कि उसका संपादक अपने लेखकों और पाठकों के साथ कई स्तर तक सौहार्दपूर्ण रिश्ते बना ले जाता है। स्नेहपूर्ण संपादकीय मनुहार में माहिर भारती ने इस संदर्भ में कई प्रतिमान गढ़े।"

मानवीय संवेदना-स्वातंत्र्य की हिमायत करने वाली रचनाओं को प्रमुखता से छापा। उन दिनों 'परिमल' की कई आगामी गोष्ठियों की भूमिका भारती जी 'संगम' में तैयार कर दिया करते थे।

'संगम' के साथ भारती जी का जुड़ाव दो वर्षों तक रहा। कुछ दिनों तक हिंदुस्तानी अकादमी में उपसचिव रहने के बाद वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में अध्यापक नियुक्त हो गए। यही वह समय था जब वे 'आलोचना' से जुड़े और 'निकष' का प्रकाशन किया। 'आलोचना' का हाथ में आना तो भारती जी के लिए मानो अपनी बात कहने का मंच प्राप्त करना था। वास्तव में 'आलोचना' पत्रिका विभिन्न राहों-घाटों से टकराती-भटकती चलती आ रही थी। भारती और उनकी मित्रमंडली के हाथ में आने से पहले 'आलोचना' शिवदान सिंह चौहान अपने सहयोगी नामवर सिंह के साथ संपादित कर रहे थे। यह वह समय था, जब 'आलोचना' को प्रगतिशील लेखक 'संघ और धुर मार्क्सवादी लेखकों का मंच' कहा जाता था। लेकिन, भारती जी और उनके मित्रों—रघुवंश, विजयदेव, नारायण साही तथा ब्रजेश्वर वर्मा ने इसे 'परिमल' की विचार-दृष्टि के प्रचार-प्रस्तुति का माध्यम बना दिया। बाद में विचारों के प्रति आस्था के प्रश्न पर टकराहट बढ़ी तो अपने आत्मीय शुभचिंतक पं. वाचस्पति पाठक के निर्देश पर भारती और उनके मित्रों ने स्वयं को 'आलोचना' से अलग कर लिया। 'आलोचना' का संपादन करते समय भारती जी ने यह धारणा स्थापित की कि मानवीय मूल्यों की रक्षा और गतिशीलता के लिए मनुष्य की मनीषा का स्वाधीन होना आवश्यक है।

इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य करते हुए भारती जी ने 'निकष' का भी संपादन किया। 'निकष' का वह अर्धवार्षिक अंक आज भी उतना ही महत्वपूर्ण है। लक्ष्मीकांत वर्मा के साथ संपादित किए गए इस अंक में भारती जी ने लिखा—"यथार्थ के नए स्तर नैतिकता की नई चेतना, उदार मानवीय प्रतिमान से पृथक नहीं हो सकते। नया मानवीय यथार्थ टुकड़ों में नहीं, समग्रता में ही उभारा जाना चाहिए, यह नई साहित्यिक मर्यादा की एक महत्वपूर्ण मान्यता है"। निकष के माध्यम से भारती जी ने अपने समय की कई रचनाकार पीढ़ियों को एक साथ प्रस्तुत किया। उन दिनों 'निकष' का साहित्य जगत में इंतजार किया जाता था। अज्ञेय, रेणु, केशव प्रसाद मिश्र, विद्यानिवास मिश्र आदि की रचनाएँ 'निकष' में छपीं और चर्चा का विषय भी बनीं। बाद में 'निकष' बंद हो गया, लेकिन साहित्यिक स्तर पर पहली बार हर साफ-सुथरे संपादन के लिए भारती जी ने रचनाकारों के भीतर अपनी जगह बना ली थी। यही बात जब वे धर्मयुग के संपादक बने तो काम आई।

सन् 1961 में जब भारती जी को एक बड़े व्यावसायिक घराने से मुंबई आकर 'धर्मयुग' का संपादन करने का आमंत्रण मिला तो उन्होंने तत्काल इलाहाबाद छोड़ने का निर्णय ले लिया। बिना इस बात की परवाह किए कि पत्रकारिता का क्षेत्र अनिश्चितताओं से भरा है, उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय की प्राध्यापिकी छोड़ दी और चल दिए मुंबई। 25 वर्षों तक 'धर्मयुग' के संपादक के रूप में भारती जी ने

पत्रकारिता को समृद्ध ही नहीं किया, बल्कि उसे लोक जीवन का संवाहक स्वरूप भी प्रदान किया। 'धर्मयुग' का संपादन करते हुए भारती जी का सबसे बड़ा योगदान हिंदी क्षेत्र में जागरूक व सजग पाठक परंपरा की स्थापना और हिंदी की विभिन्न विधाओं में लिखने वालों को गढ़ने में रहा। यह क्या हिंदी पत्रकारिता के लिए प्रतिमान नहीं कहा जाएगा कि 'धर्मयुग' के पाठक भारत से बाहर, उन देशों में भी थे, जहाँ हिंदी भाषी लोगों या भारतीय मूल के लोगों ने अपना बसेरा बना रखा था।

वास्तव में पत्र या पत्रिका की सफलता के मूल में एक मौलिक तत्व यह निहित होता है कि उसका संपादक अपने लेखकों और पाठकों के साथ कई स्तर तक सौहार्दपूर्ण रिश्ते बना ले जाता है। स्नेहपूर्ण संपादकीय मनुहार में माहिर भारती ने इस संदर्भ में कई प्रतिमान गढ़े। वे जिससे चाहते, जो चाहते, जब चाहते, जितना चाहते लिखवा लेते थे। उनके स्नेहपूर्ण तगादों की चर्चा उनके लेखक आज

तक करते मिल जाते हैं। वास्तव में उन दिनों 'धर्मयुग' ने कई लेखकों का परिचय हिंदी पाठकों से कराया और उन्हें लोकप्रियता हासिल करने का मंच दिया।

भारती जी मानते थे कि 'सच्चा पत्रकार स्वभाव से प्रगतिशील होता है। जनजीवन में गहराई से डूबने का आग्रह ही पत्रकार का स्वाभाविक गुण है।' और उन्होंने सदैव ही ऐसा करते रहने का प्रयत्न किया। उनकी दृष्टि महानगरों की चकाचौंध से स्वयं को मुक्त करते हुए दूर-दराज के गाँवों और कस्बों की जिंदगी में प्रवेश करती थी और उसे खँगालकर अपने पाठकों को उससे जोड़ने का प्रयास करती थी। आता था। उनके पत्रों में तुरंत, शीघ्र, यथाशीघ्र जैसे तेजगति के पर्याय शब्द कई बार आते थे। वे हाथ में आए काम को तुरंत निपटा देने में विश्वास रखते थे। बड़ी बात यह कि वे रफ्तार के साथ गुणवत्ता बनाए रखना चाहते थे। नए लेखकों के सामने वे ऐसे उदाहरण भी प्रस्तुत कर दिया करते थे।

धर्मवीर भारती को भारतीय पत्रकारिता में तीखे प्रश्न पूछने में माहिर के रूप में भी याद किया जाता रहेगा। पचास-साठ के दशक में शायद ही ऐसा कोई संपादक या पत्रकार रहा हो, जिसने अपने तीखे प्रश्नों से राजनेताओं को परेशान किया हो। भारती जी मानते थे कि

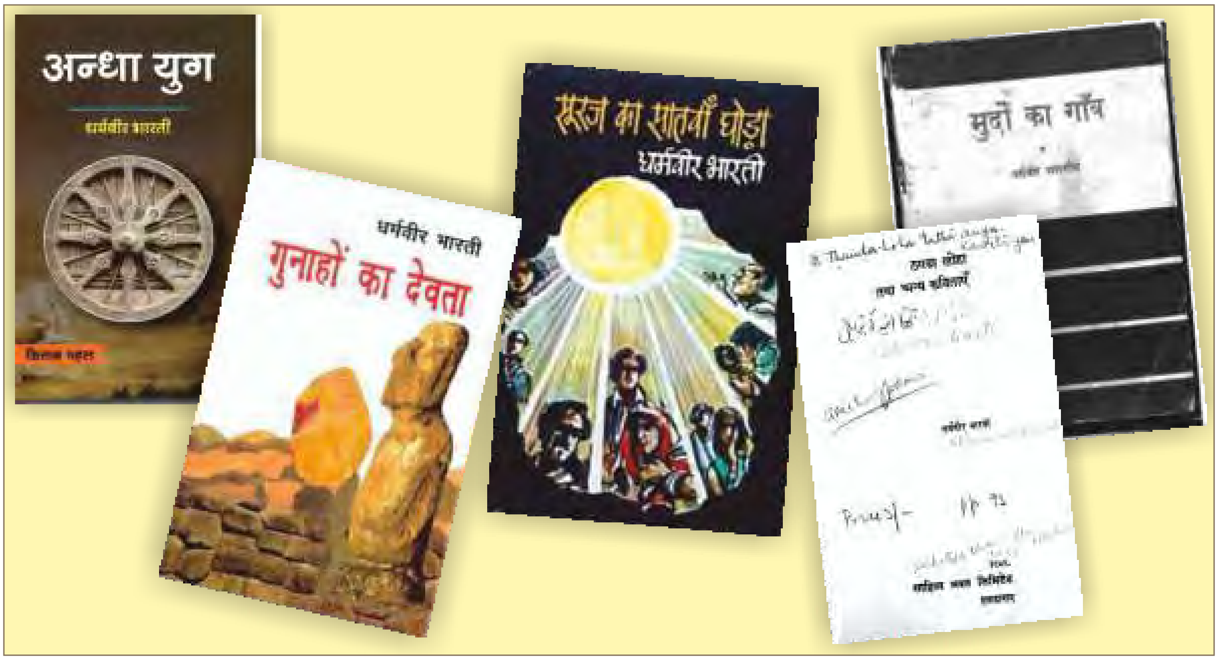

यह भारती जी की दृष्टि का ही कमाल था कि वे विचार और व्यापार को एक साथ साध लेते थे। वे लेख को फिट कर लेखक को हिट तो करते ही थे, 'धर्मयुग' की प्रसार संख्या-विज्ञापन संख्या भी बढ़ा देते थे।

भारती जी अपने समय के साक्षी बनकर पत्रकारिता करना बेहतर मानते थे। शायद यही वजह थी कि उन्होंने 1971 के भारत-पाक युद्ध और बांग्लादेश मुक्ति संग्राम का आँखों देखा हाल प्रकाशित करना बेहतर समझा। इसके लिए वे स्वयं युद्धस्थल तक गए और बाद में उसे धर्मयुग में सगौरव प्रकाशित किया। वे युद्ध के दौरान ही युद्ध के साहित्यिक पक्ष को प्रकाशित करने से नहीं चूके। पं. विष्णुकांत शास्त्री के सहयोग से उन्होंने धर्मयुग के 'बांग्लादेश विशेषांक' की योजना पर अमल किया। तमाम बांग्लादेशी साहित्यकारों के पास आज भी उन दिनों के 'धर्मयुग' अंक धरोहर के रूप में मिल जाया करते हैं।

भारती जी ने अपनी पत्रकारीय यात्रा में नए-नए साथियों को लेकर चलना उचित समझा। शायद यही वजह है कि 'धर्मयुग' का प्रत्येक अंक एक नई ऊर्जा के साथ सामने आता था। उन दिनों के उनके नए लेखक बताते हैं कि उन्हें लेखकीय शैथिल्य तनिक भी नहीं पत्रकारिता राजनीति का विश्लेषक हो सकती है, पत्रकार की अपनी राजनीति-दृष्टि भी हो सकती है, लेकिन पत्रकारिता राजनीति नहीं कर सकती और यही बात उन्हें मजबूत बनाए रही तथा उनकी जुबान पर बिंदास तीखे प्रश्न लाती रही।

धर्मवीर भारती ने अपने कविता संग्रह 'ठंडा लोहा' की भूमिका में लिखा है—'जिंदगी से अलग रहकर नहीं, जिंदगी के संघर्षों को झेलता हुआ, उस दुख-दर्द में एक गंभीर अर्थ ढूँढ़ता हुआ और अर्थ के सहारे अपने को जनव्यापी सच्चाई के प्रति अर्पित करने का प्रयास करता हुआ।' ये वाक्य एक मजबूत पत्रकारीय धरातल का रचनाकार ही लिख सकता है। तमाम विषम परिस्थितियों में तरह-तरह के घात-प्रतिघात सहते हुए भारती जी ने पत्रकारिता को जो कुछ दिया, वह अपने समय व अद्वितीय और प्रत्येक समय का अनुकरणीय माध्यम हो जाएगा।

(सेंटर ऑफ मीडिया स्टडीज, इंस्टीट्यूट ऑफ प्रोफेशनल स्टडीज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय से प्रकाशित पत्रिका 'बरगद' के वर्ष 5, अंक-1 से साभार)

युग-द्रष्टा और स्रष्टा दिनकर
कविता और जीवन में सामरस्य की साधना

आधुनिक हिंदी कविता धारा के मृत्युंजयी कवि रामधारी सिंह दिनकर (1908-1974) की ये पंक्तियाँ उनकी जीवन-दृष्टि और काव्य-दृष्टि का स्पष्ट साक्ष्य देती हैं। दिनकर ने मानव जीवन और उसकी उदात्तता के प्रति प्रतिबद्ध रचनाकार के रूप में अपनी खास पहचान बनाई है। वे शुद्ध कविता पर अपनी सजग दृष्टि से विचार करते हैं, किंतु वे कभी अपने युग-जीवन से विमुख न हो सके। उनका कथन भी है, "कविता व्यक्ति द्वारा संपादित सामाजिक कार्य है और शुद्ध कविता समाज के लिए ही लिखी जाती है।" (संचयिता, पृ. 11) ऐसा नहीं है कि दिनकर ने कला में सोद्देश्यता के प्रश्न पर निगाहें नहीं रखी हैं। वरन् वे तो सोद्देश्य कला के खिलाफ दिए जाने वाले सारे तर्कों से निरंतर जूझते रहे। इसके बावजूद उन्हें लगता है कि "कवि भी सामाजिक जीव है और निरुद्देश्य उसकी जीभ नहीं खुलनी चाहिए। सौंदर्य-सृजन की कला में असफल हो जाने पर कवि को पश्चाताप होना स्वाभाविक है, किंतु चमत्कारपूर्ण सौंदर्य के स्रष्टा को इस सूचना से सिर नीचा करने का कोई कारण नहीं दिखता कि अमुक समालोचक ने उसकी कृति में सोद्देश्यता का दोष निकाला है।" (दिनकर : संकलित निबंध, पृ. 27)

डॉ. शैलेन्द्रकुमार शर्मा

जन्म : उज्जैन।

संप्रति : आचार्य एवं कुलानुशासक, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन। साथ ही वे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्य शोध पत्रिका 'अक्षरवार्ता' के प्रधान संपादक हैं। आलोचना, निबंध लेखन, संस्मरण, साक्षात्कार, नाटक तथा रंगमंच समीक्षा, लोकसाहित्य एवं संस्कृति विमर्श, राजभाषा हिंदी एवं देवनागरी के विविध पक्षों पर लेखन एवं अनुसंधान कार्य में निरंतर सक्रिय।

लेखन एवं संपादन : लगभग 40 पुस्तकों का लेखन एवं संपादन। साथ ही केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा का हिंदी-भीली अध्येता कोश तैयार करने में संपादक के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

सम्मान : आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी सम्मान, राष्ट्रीय कबीर सम्मान, हिंदी सेवी सम्मान, भाषा-भूषण सम्मान, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार, विश्व हिंदी सेवा सम्मान आदि।

संपर्क : मोबाइल– 9826047765

ईमेल– shailendrasharma1966@gmail.com

दिनकर की स्पष्ट मान्यता है कि कला के उद्देश्य और राजनीति के उद्देश्य को जोड़ना ठीक नहीं है। उन्होंने अपने निबंध 'साहित्य और राजनीति' में क्रांति और साहित्य की भूमिका पर लिखा भी है, "क्रांति जनसमूह को जगाकर उसे नई साँस, नई संस्कृति और तरंगित होने वाले जीवन की ओर प्रेरित करती है। जीवन का आदेश है कि साहित्य नए इतिहास के निर्माण में योग दें। यह काम केवल कला को पूजने वाले साहित्य से नहीं हो सकता।" स्वयं दिनकर ने अपने इस कथन को चरितार्थ किया। उनकी कविताओं में नए इतिहास के निर्माण के अनेक सूत्र सहज ही उपलब्ध हैं। 'प्रणति' (परिवर्तित नाम 'शहीदस्तवन') की पंक्तियाँ देखिए, जहाँ दिनकर ने इतिहास गढ़ने वाले वीरों को नमन किया है। यहाँ इतिहास की सीमाओं को चिह्नित करने में भी कवि पीछे नहीं है–

जला अस्थियाँ बारी-बारी
छिटकायी जिनने चिनगारी,
जो चढ़ गये पुण्य वेदी पर
लिए बिना गरदन का मोल।
कलम, आज उनकी जय बोल।

इस नए इतिहास की रचना में दिनकर ने भारतीय सांस्कृतिक परंपरा के आख्यान-सूत्रों में निहित अनेकानेक प्रतीकों को न सिर्फ खोजा है, वरन् उन्हें युगानुकूल अर्थविस्तार और प्रासंगिकता भी दी है। प्रलयंकारी तांडव की नई भूमिका देखिए, जहाँ वे राष्ट्र-समाज के दर्द को मिटा देना चाहते हैं—

नाचो हे नाचो, नटवर!
चंद्रचूड़! त्रिनयन! गंगाधर! आदि-प्रलय! अवढर! शंकर!
....
प्रभु! तव पावन नील गगन-तल,
विछलित अमित निरीह-निबल-दल,
मिटे राष्ट्र, उजड़े दरिद्र-जन,
आह! सभ्यता आज कर रही
असहायों का शोणित शोषण
(तांडव, रेणुका, 1933)

जाहिर है दिनकर युगीन काव्यधारा के स्वर में स्वर मिलाने वाले एक कवि भर नहीं हैं, वरन् वे उसके सजग द्रष्टा और हस्तक्षेपकर्ता भी हैं। उनकी सर्जना और विचारणा में अद्भुत सामंजस्य दिखाई देता है, जो आकस्मिक या बाह्यारोपित नहीं है। इसी दृष्टि से आज दिनकर साहित्य के पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता प्रतीत होती है, अन्यथा उन्हें हिंदी आलोचना में अपेक्षित महत्व नहीं मिला है। वस्तुतः उनकी रचना और विचारणा दोनों में हर युग, हर काल के लिए सार्थक संदेश छिपे हैं। जब बात 'शक्ति या सौंदर्य' के विकल्प की आती है, तो दिनकर हमारे दौर के लिए भी प्रासंगिक संकेत दे जाते हैं। खासतौर पर मानवता विरोधी घृणा, आतंक और हिंसा के मुकाबले के लिए दिनकर का यह स्वर अधिक काम्य हो गया है—

तुम रजनी के चाँद बनोगे?
या दिन के मार्तंड प्रखर?
एक बात है मुझे पूछनी,
फूल बनोगे या पत्थर?
(शक्ति या सौंदर्य, धूप-छाँह से)

दिनकर सही अर्थों में महाकवियों की परंपरा के रचनाकार हैं, जिनके लिए काव्य और अहं के बीच द्वंद्व के लिए कोई जगह नहीं है। उन्होंने लिखा भी है, "कविता में एक स्थिति वह भी आती है जब कवि को अपने अहं का लोप करना पड़ता है अथवा समाधि की स्थिति में देर तक टिके रहने से कवि के अहं का स्वतः लोप हो जाता है। तब तो भूमि रिक्त रह जाती है, वहाँ कहीं से स्रस्त होकर कविता खुद-ब-खुद उतर आती है।" कवि दिनकर ने इसी समाधि-भूमि पर टिके रहकर सृजन किया, किंतु उनकी यह भूमि जीवन और समाज से परे किसी वानप्रस्थी की भूमि नहीं थी। वे तो तमाम विसंगतियों और विद्रूपताओं से घिरे युग परिवेश में संघर्ष करते हुए इस भूमि पर पहुँचे थे। जाहिर है दिनकर का आत्मसंघर्ष अन्य कवियों की तुलना में कहीं अधिक नुकीला और धारदार था। भारत के अतीत का गुणगान करने वाला कवि जब यह कहने को बाध्य होता है तो उसके निहितार्थ समझे जाने चाहिए—

धन पिशाच की विजय धर्म की पावन ज्योति अदृश्य हुई,
दौड़ो बोधिसत्व! भारत में मानवता अस्पृश्य हुई।
(बोधिसत्व)

दिनकर का कविमन अपने माध्यम में विलय होने के साथ ही अत्याचार और अन्याय से ग्रस्त समाज के साथ गहरा तादात्म्य लिए हुए था। वे मानते थे कि वास्तविकता के संघर्ष से असंतोष की जो चिनगारी उड़ती है, वही मेरा स्वप्न है। युगों के दर्पण में कविता-कामिनी का अपार्थिक रूप देखकर शून्य से पंख खोलकर उड़ने की इच्छा जरूर हुई; परंतु इसे देश की अपमानित मिट्टी का प्रभाव कहिए या मेरा अपना भाग्य-दोष कि कल्पना के नंदन-कानन में भी मिट्टी की गंध मेरा पीछा नहीं छोड़ सकी।" (कला में सोद्देश्यता का प्रश्न) जाहिर है कवि दिनकर मानवता की राह में अड़े हुए पहाड़ों को कैसे स्वीकार कर सकते थे? वे सभी के लिए मुक्त प्रकाश, मुक्त समीर, मुक्त गगन की कामना करते हैं, जिसकी जरूरत दिनोंदिन बढ़ती जा रही है।

है सबको अधिकार मृत्तिका
पोषक-रस पीने को,
विविध अभावों से अशंक हो
कर जग में जीने को।
सबको मुक्त प्रकाश चाहिए,
सबको मुक्त समीरण,
बाधा-रहित विकास, मुक्त
आशंकाओं से जीवन।
(कुरुक्षेत्र)

दिनकर के काव्य में सामाजिक चिंताओं की विविधायामी अभिव्यक्ति हुई है, जो आकस्मिक नहीं है। आम आदमी की पीड़ा और सामाजिक विषमता को लेकर उन्होंने गहरा असंतोष अपनी कविताओं में दर्ज किया है। स्वातंत्र्य-पूर्व भारत की पीड़ा रही हो अथवा आजाद भारत के राजनैतिक-सामाजिक जीवन में व्यापित विसंगतियाँ, दिनकर ने सभी को अपने दृष्टिपथ में रखा था। वे तटस्थ रहने वाले रचनाकार नहीं हैं और न ही एकांगी दृष्टि से युग-जीवन को देखने वाले कलाकार। वस्तुतः साहित्य की आयुष्मानता को लेकर उनका यह आदर्श स्वयं उन्हीं के रचनाकर्म में भी प्रतिफलित हुआ है, "कवि-कल्पना और सामाजिक जीवन के बीच सामंजस्य स्थापित किए बिना साहित्य आयुष्मान नहीं हो सकता। छोटी-छोटी, क्षणिक और हलकी भावनाओं का गीत-प्रणयन भी अपनी जगह मूल्य रखता है, किंतु कलाकारों में श्रेष्ठ तो वही गिना जाएगा, जो जीवन के किसी महान प्रश्न पर महान रूप से कला का रंग छिड़क सके। सच्ची कला में सुंदरता नीति-प्रचार का शिकार नहीं होती, उद्देश्य के सामने माथा नहीं टेकती। ऊँची कविता का अगर रूप सुंदर होता है तो उसकी आत्मा तथा उसके अंतर्गत भाव भी पुण्य को प्रेरित करने वाले तथा मंगलकारी होते हैं।" दिनकर ने कलम और तलवार के अंतर को अपने ढंग से पाट दिया था। वे दोनों के महत्व और महिमा को गाते हैं, वहीं दोनों की परस्पर पूरक भूमिका को भी चिह्नित करते हैं। वस्तुतः इन दोनों के रिश्ते को अपने जीवन और कृतित्व में सहेजने के कारण ही दिनकर की रचनाएँ आयुष्मान सिद्ध हुईं।

"दिनकर के बारे में ठीक ही कहा जाता है कि हृदय कुंज में बाज और कोयल दोनों ही क्रीड़ाएँ जारी रहती थीं। कवि जर्नादन प्रसाद झा 'द्विज' उनसे कहा भी करते थे, "दिनकर सावधान रहना! तुम्हारा बाज कहीं तुम्हारी कोयल को न खा जाए।" यह ठीक है कि आज दिनकर की राष्ट्र चेतना और आह्वानधर्मी कविताएँ अधिक चर्चा में रहती हैं, किंतु उनकी शृंगार और अध्यात्मपरक काव्य का भरा-पूरा संसार भी अपनी ओर आकर्षित करता है।"

कलम देश की बड़ी शक्ति है भाव जगाने वाली,
दिल ही नहीं दिमागों में भी आग लगाने वाली।
पैदा करती कलम विचारों के जलते अंगारे,
और प्रज्वलित प्राण देश क्या कभी मरेगा मारे?
(कलम और तलवार)

दिनकर ने कलम और तलवार ही नहीं और भी अनेक द्वंद्वों के बीच समन्वय की राह दिखाई है। उनके समूचे रचनाकर्म पर विचार करें तो कबीर और तुलसी दोनों समन्वित होते हुए दिखाई देते हैं। इन दोनों की क्रमशः क्रांतिभावना और समन्वयशीलता, गहरा आक्रोश और अटूट आस्था दिनकर के यहाँ हमजोली बनकर आते हैं। क्या करुणा, क्या शौर्य; क्या हिंसा, क्या अहिंसा, क्या भोग, क्या त्याग, क्या हृदय, क्या बुद्धि, क्या राष्ट्रप्रेम, क्या अखंड मानवता, क्या राष्ट्रीयता, क्या अंतरराष्ट्रीयता—इन सभी का संग-साथ दिनकर काव्य को विलक्षण बनाता है।

दिनकर ने काव्य को हवाई बनाने से सदैव परहेज किया। उन्हें जब ओज की जरूरत थी, उन्होंने अंगार के गीत रचे और जब माधुर्य और अध्यात्म की जरूरत थी तो उन्हें भी गीतों में उतारा। दिनकर के बारे में ठीक ही कहा जाता है कि हृदय कुंज में बाज और कोयल दोनों ही क्रीड़ाएँ जारी रहती थीं। कवि जर्नादन प्रसाद झा 'द्विज' उनसे कहा भी करते थे, "दिनकर सावधान रहना! तुम्हारा बाज कहीं तुम्हारी कोयल को न खा जाए।" यह ठीक है कि आज दिनकर की राष्ट्र चेतना और आह्वानधर्मी कविताएँ अधिक चर्चा में रहती हैं, किंतु उनकी शृंगार और अध्यात्मपरक काव्य का भरा-पूरा संसार भी अपनी ओर आकर्षित करता है। पहले जागृति का स्वर देखिए, जहाँ शृंगार गैर-जरूरी नज़र आता है—

प्यारे स्वदेश के हित अंगार माँगता हूँ।
चढ़ती जवानियों का शृंगार माँगता हूँ।
(सामधेनी, आग की भीख, पृ. 56)

इसी तरह कवि को हिमालय से जागने की अपेक्षा है, तपश्चर्या की नहीं—

तू मौन-त्याग कर सिंहनाद
रे तपी! आज तक का न काल।
नव-युग-शंखध्वनि जगा रही।
तू जाग, जाग मेरे विशाल।
(रेणुका, पृ. 8)

दूसरी ओर कवि दिनकर 'उर्वशी' के लिए पुरूरवा के कथन में प्रणय-सौंदर्य के अनुपम चित्र उकेरते हैं—

जब से तुम आईं, पृथ्वी कुछ अधिक मुदित लगती है;
शैल समझते हैं, उनके प्राणों में जो धारा है,
बहती है पहले से वह कुछ अधिक रसवती होकर।
जब से तुम आईं, धरती पर फूल अधिक खिलते हैं
दौड़ रही कुछ नई दीप्ति-सी शीतल हरियाली में।
सब हैं सुखी, एक नक्षत्रों को ऐसा लगता है,
जैसे कोई वस्तु हाथ से उनके निकल गई हो।
(उर्वशी)

काम को लेकर दिनकर की ये पंक्तियाँ आज कितनी अधिक काम्य हो गई हैं, यह किसी से छिपा नहीं है।

काम धर्म, काम ही पाप है, काम किसी मानव को
उच्च लोक से गिरा-हीन पशु-जंतु बना देता है।
और किसी मन में असीम सुषमा की तृषा जगाकर
पहुँचा देता उसे किरण-सेवित अति उच्च शिखर तक।
(उर्वशी)

“दिनकर ने कविता और जीवन दोनों में शिव और सुंदर के सामरस्य की साधना की थी। वे मानते हैं, “सत्य, शिव और सुंदर का समन्वय केवल कलम या कूँची से नहीं किया जा सकता। इस समन्वय की साधना आचरणों से की जाती है। पाप खूबसूरत होने पर भी पाप है चाहे वह जीवन में हो या काव्य में। इसी तरह, जो सुंदर नहीं है, वह सत्य हो या शिव, हम उसे कला की कृति नहीं कह सकते चाहे वह धर्म का ही आख्यान क्यों न हो।” (सत्यं, शिवं, सुंदरम्)”

दिनकर काव्य-कर्म की शक्ति के साथ-साथ उसकी चुनौतियों से भी अनजान नहीं हैं। वे इसे ईश्वर का वरदान मानते हैं वहीं अनेक वरदानों से वंचित होने का कारण भी। 'नेमत' शीर्षक कविता की ये पंक्तियाँ मात्र सुख-सुविधा के लिए उत्कंठित सर्जकों के नए दौर के बीच आज अधिक प्रासंगिक हो गई है—

कविता सबसे बड़ा तो नहीं,
फिर भी इच्छा वरदान है। मगर मालिक की अजब शान है।
जिसे भी यह वरदान मिलता है,
उसे जीवनभर पहाड़ ढोना पड़ता है।
एक नेमत के बदले।
अनेक नेमतों से हाथ धोना पड़ता है।
(हारे को हरिनाम)

दिनकर ने युद्धों के कोलाहली दौर में इस प्रश्न को भी उठाया कि क्या हिंसा महज हिंसा के लिए है अथवा उसकी सार्थकता अहिंसा, मानव मूल्य और न्याय की प्रतिष्ठा के लिए है? गांधी का मत था कि हिंसा से मिली विजय, पराजय के समतुल्य होती है। इस प्रेरणा-सूत्र की आवृत्ति दिनकर काव्य में कई बार हुई है। युद्ध की विभीषिका की ओर कवि ध्यान खींचता है—

युद्ध का परिणाम?
युद्ध का परिणाम ह्रास, त्रास!
युद्ध का परिणाम सत्यानाश!
रुंड-मुंड-लुंठन, निहिंसन, मीच!
युद्ध का परिणाम लोहित कीच!
(कलिंग-विजय)

वस्तुतः युद्ध और आतंकवाद से लेकर घनघोर व्यक्तिवाद तक और बाजारवाद से लेकर सर्वग्रासी सत्तातंत्र के समकालीन दौर में दिनकर-काव्य नए प्रश्न खड़े करता है। स्वराज से सुराज तक की तलाश तो आज भी जारी है—

'अटका कहाँ स्वराज? बोल दिल्ली! तू क्या कहती है?
तू रानी बन गई, वेदना जनता क्यों सहती है?
सबके भाग दबा रक्खे हैं, किसने अपने कर में?
उतरी थी जो विभा हुई बन्दिनी, बता, किस घर में?
समर शेष है, यह प्रकाश बन्दी गृह से छूटेगा,
और नहीं तो तुझ पर पापिनि! महावज्र टूटेगा।
समर शेष है, इस स्वराज्य को सत्य बनाना होगा।
जिसका है यह न्यास, उसे सत्वर पहुँचाना होगा।
धारा के मग में अनेक पर्वत जो खड़े हुए हैं,
गंगा का पथ रोक इन्द्र के गज जो अड़े हुए हैं,
कह दो उनसे, झुके अगर तो जग में यह पाएँगे
अड़े रहे तो ऐरावत पत्तों से बह जाएँगे।
(समर शेष है)

दिनकर ने कविता और जीवन दोनों में शिव और सुंदर के सामरस्य की साधना की थी। वे मानते हैं, “सत्य, शिव और सुंदर का समन्वय केवल कलम या कूँची से नहीं किया जा सकता। इस समन्वय की साधना आचरणों से की जाती है। पाप खूबसूरत होने पर भी पाप है चाहे वह जीवन में हो या काव्य में। इसी तरह, जो सुंदर नहीं है, वह सत्य हो या शिव, हम उसे कला की कृति नहीं कह सकते चाहे वह धर्म

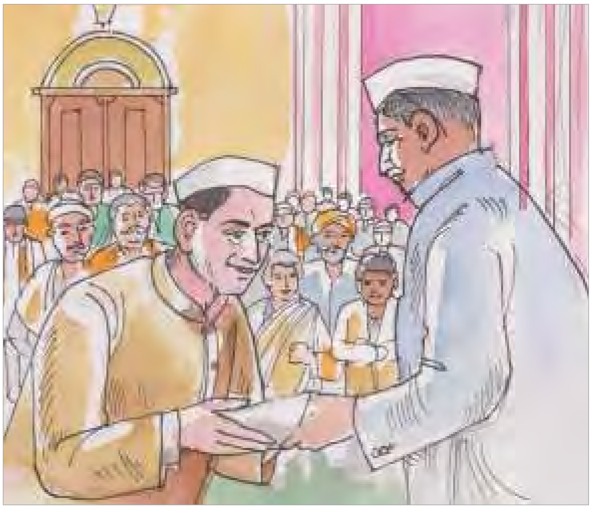

का ही आख्यान क्यों न हो।” (सत्यं, शिवं, सुंदरम्) आचरण के जरिये भी कलम की साधना को चरितार्थ करने वाले दिनकर कभी तटस्थ नहीं रहे। वे तटस्थ रह भी कैसे सकते थे? यहाँ तक कि वाणी और चिंतन के साथ कर्म की दूरी के पाट देने के लिए तो वे उत्कंठित थे ही, कर्मक्षेत्र में सिर्फ कर्म की प्रधानता के पक्षधर भी थे। उन्होंने लिखा है, “जब तक कर्म की घड़ी नहीं आती, वाणी और चिंतन अपना काम कर सकते हैं, किंतु कर्म का अखाड़ा खुलते ही कर्म ही हमारा प्रधान कर्तव्य हो जाता है। क्योंकि कर्म के अखाड़े में चिंतन की तलवार का भरोसा करने वाला मनुष्य मारता नहीं, खुद मारा जाता है। क्रिया को छोड़ चिंतन में फँसेगा, उलटकर काल तुझको ही ग्रसेगा।” जाहिर है अपनी वाणी, चिंतन और कर्म से कभी तटस्थ न रहने वाले दिनकर का यह स्वर आज भी सुना जाना चाहिए।

समर शेष है, नहीं पाप का भागी केवल व्याध,
जो तटस्थ हैं, समय लिखेगा उनका भी अपराध।

वैदिक दर्शन में उदात्त राष्ट्रीयता का समावेश

वेद संपूर्ण क्रांतिकारी परिवर्तनों की आधारशिला है। वैज्ञानिकता पर आधारित लोकोन्मुख भारतीय संस्कृति की बुनियाद वेदों में निहित है। वेदों में बहुआयामी विचारों की खनक जीवंत और लयबद्ध है। त्रिकाल के साथ प्रवहमान सार्वभौमिक सघन आत्मीय संवाद का लालित्य वेदों में सतत् गतिशील चिंतन धारा की तरह तरंगित है। वैश्विक स्तर पर फैली 'मैं और मेरा अधिकार' की सर्वव्यापकता मानवमात्र को संकुचित दायरे में जकड़ रखी है। वैदिक वांग्मय में व्याख्यायित राष्ट्र और राष्ट्रीयता का दृष्टिकोण द्रुतगति से सिमटता जा रहा है। कल तक व्यक्तिगत और राष्ट्रगत भावनाएँ अनवरत संकुचित हो रही हैं। आत्मबोध और कर्तव्यनिष्ठा जैसे श्रेष्ठ गुणों के आधार पर ही व्यक्ति, समाज और राष्ट्र अपने उत्कृष्ट शिखर को प्राप्त करता है। उदात्त राष्ट्रीय भावनाओं को अपने कर्तव्यनिष्ठ निष्ठा में पिरोने पर ही राष्ट्रीय सांस्कृतिक मूल्यों में चमक उत्पन्न होती है। सर्वप्रथम वैदिक वांग्मय से उपजी राष्ट्रीय चेतना विश्व के संपूर्ण साहित्य में परिलक्षित होती है। वैदिक ऋषियों की विश्व नीड़ में उपजी राष्ट्रीय चिंतन और उसके कल्याण की परिव्यापकता विशाल है।

रामसागर दुबे

प्रख्यात वैज्ञानिक एवं साहित्यकार। अनेक राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय पुरस्कारों से पुरस्कृत। 200 से अधिक शोधपत्र विभिन्न राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय शोध पत्रिका में प्रकाशित। सनातन धर्म की सर्वोच्च पीठ द्वारा विज्ञान भास्कर पुरस्कार से सम्मानित। वैदिक अवधारणा पर आधारित जल शोधन तकनीक का विकास। बौद्धिक एवं सामाजिक स्तर पर पर्यावरण संरक्षण हेतु अनेक महत्वपूर्ण योगदान।

संपर्क : मोबाइल– 9717269125

ईमेल– dubeyrs40@gmail.com

अपौरुषेय अनादि स्वतः प्रमाण ब्रह्मस्वरूप ज्ञानराशि वेद भारतीय संस्कृति के मूल आधार हैं, जिसमें संपूर्ण ब्रह्मांड के सारतत्व निहित है। महर्षि वेदव्यास द्वारा समायोजित चार वेद अर्थात ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद हैं। चारों वेदों में कुल मिलाकर लगभग 24,000 मंत्र हैं जो 7,68,000 शब्दराशि से परिपूरित हैं। मंत्रों की संख्या के दृष्टि से ऋग्वेद सबसे बृहद अर्थात 10 मंडल में वर्णित है। मंत्रों की दृष्टि से ऋग्वेद में 10,582 मंत्र हैं जो संपूर्ण ब्रह्मांड के बारे में मानवमात्र को पूर्ण तत्वज्ञान का अर्जन करा रहे हैं। उत्तम कर्म और उससे प्रेरित प्रतिफल का ज्ञान मानव मात्र को यजुर्वेद में वर्णित 1975 मंत्रों द्वारा प्राप्त है, ईश्वरीय शक्ति और उसकी साधना का वर्णन सामवेद के 1875 मंत्रों में वर्णित है। संपूर्ण क्रियाओं में समायोजित योग का परिज्ञान हमें अथर्ववेद के मंत्रों से प्राप्त होता है। 'अथर्व' का शाब्दिक अर्थ 'एकाग्रता' है। अथर्ववेद के 5977 मंत्रों में राष्ट्रधर्म, सामाजिक व्यवस्था, गृहस्थ कर्म, धर्म, अध्यात्मवाद, प्रकृति वर्णन, कर्म विचार आदि का विस्तारपूर्वक व्यावहारिक ज्ञान मनुष्यों के लिए समाहित है। वेदों में राष्ट्रप्रेम, देशभक्ति, लोकसेवा, सामाजिक उत्कर्ष और अनेक प्रकार के प्रेरक प्रसंगों का साँगोपाँग वर्णन किया गया है। वेद, मानवमात्र के लिए सर्वप्रधान एवं सर्वमान्य ज्ञानराशि है। वैदिक वांग्मय की परिव्यापकता विश्वव्यापी है

क्योंकि ब्रह्मांड के सभी घटकों का वर्णन ऋषियों ने बड़ी सूक्ष्मता से किया है। यही कारण है कि सर्वदा से हमारे जीवन के संपूर्ण सिद्धांतों में वैदिक ज्ञान अक्षुण्ण और प्रभावशाली है। वेदों में वर्णित ऋषियों की गौरवशाली दृष्टि की परिव्यापकता को संपूर्ण विश्व सहजभाव से प्रमाण स्वरूप स्वीकार करता है।

"वैदिक ऋषि कामना करता है कि जैसे मधुर परिपक्व फलों से लदी डालियाँ लाभदायी होती हैं, उसी प्रकार मनुष्य की वाणी अमृतमयी हो, क्योंकि शुष्क और रसहीन वाणी सर्वथा निरर्थक होती है। मनुष्य की वाणी सर्वथा मधुर, रसयुक्त और श्रवण के योग्य कोमल होनी चाहिए। क्योंकि श्रेष्ठ विचारों एवं उत्तम मानवतायुक्त भावनाओं की अभिव्यक्ति वाणी से ही होती है। वाणी ही राष्ट्र के विकास का प्रथम सोपान है। जिस राष्ट्र के निवासियों की वाणी उत्तम, मधुर एवं सत्यनिष्ठ होती है, वह राष्ट्र निस्संदेह उत्तरोत्तर प्रगतिशील पथ पर गमन करते हुए अपने उत्कर्ष को प्राप्त करता है (ऋ.1/8/8)।"

ऋषियों ने वेदों में राष्ट्रीयता की उदात्त भावनाओं का पूरा समावेश किया है। ऋषियों ने राष्ट्र के प्रति लोकमानस में सौहार्द की वैचारिकता को कूट-कूट कर भरा है। उदाहरणार्थ—

सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनासि जानाताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते॥

ऋ. 10/191/2

अर्थात ईश्वर! हमें सद्बुद्धि प्रदान करें ताकि हम सब मिलकर परस्पर साथ चलें, अमृतवाणी बोलें और एक समान हृदय से होकर स्वराष्ट्र में उत्पन्न धन-धान्य और संपत्तियों को परस्पर समान रूप से मिल बाँटकर उपयोग करें। हमारी प्रवृत्तियाँ रागद्वेष रहित हों।

समानो मंत्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्त मेषाम्।
समानं मंत्रमभि मंत्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि॥

ऋ. 10/191/3

अर्थात ऋषि का कथन है कि मैं सतकर्मो हेतु सभी के लिए समान प्रार्थना, एक जैसी सफलता, परस्पर मिलन भी भेदभाव रहित हो अर्थात एकरूप हो, वैचारिकता एक जैसी हो और सबके मनन और चिंतन करने का साधन अर्थात अंतःकरण और चित्त, विचारजन्य एवं ज्ञानयुक्त हो। मैं तुम्हारे लिए एक ही उत्कृष्ट रहस्यपूर्ण वचनबद्धता को दोहराता हूँ और तुम्हें एक समान छवि प्रदान करके सुसंस्कृत करता हूँ अर्थात अपने कर्तव्य के प्रति निष्ठावान होकर राष्ट्रहित में कार्य करने के लिए प्रेरित करता हूँ।

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति॥

ऋ. 10/191/4

उपर्युक्त मंत्र में ऋषि मनुष्यों में परस्पर भावनाओं की कामना करते हुए राष्ट्र के प्रति जनमानस को जागृत करने के लिए कहता है कि तुम्हारा संकल्प एक समान हो और तुम्हारा हृदय एक समान हो, तुम्हारी मनोवृत्ति एक जैसी हो जिससे तुम्हारा परस्पर कार्य पूर्णरूप से संगठित हो। फलतः व्यक्तिगत एवं राष्ट्रगत कार्यों का संपादन सुव्यवस्थित एवं सुसंगठित हो, यही ऋषि की कामना है। क्रांतदर्शी ऋषियों ने प्रकृति के प्रधान तत्वों का राष्ट्र के प्रति उदात्त भावना और उसके राष्ट्रीय सेवाभाव एवं राष्ट्र रक्षा के भाव की जो अभिव्यक्ति प्रस्तुत की है, वह मानवमात्र के लिए अत्यंत अनुकरणीय है (ऋ. 10/124/4)। मनुष्यों के अंदर राष्ट्रीय भावनाओं के प्रवेश करते ही अन्य सभी कुत्सित भावनाएँ विनष्ट हो जाती हैं और मनुष्य असीम सामर्थ्य को प्राप्त कर लेता है। वैदिक ऋषि ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि हे परमेश्वर! सत्य से असत्य को विलग कर अर्थात मिथ्याभाव को दूर कर मेरे हृदय में राष्ट्र के आधिपत्य अर्थात स्वामित्व को स्थापित कर मेरे विचार को उदात्त करो (ऋ. 10/124/5)। मनुष्य के हृदय में पल रही राष्ट्रीय भावनाओं की अभिव्यक्ति सर्वप्रथम ऋषियों की वाणी से परिलक्षित होती है तत्पश्चात कर्म में परिणित हो राष्ट्र का उन्नयन करती है। वैदिक ऋषि कामना करता है कि जैसे मधुर परिपक्व फलों से लदी डालियाँ लाभदायी होती हैं, उसी प्रकार मनुष्य की वाणी अमृतमयी हो, क्योंकि शुष्क और रसहीन वाणी सर्वथा निरर्थक होती है। मनुष्य की वाणी सर्वथा मधुर, रसयुक्त और श्रवण के योग्य कोमल होनी चाहिए। क्योंकि श्रेष्ठ विचारों एवं उत्तम मानवतायुक्त भावनाओं की अभिव्यक्ति वाणी से ही होती है। वाणी ही राष्ट्र के विकास का प्रथम सोपान है। जिस राष्ट्र के निवासियों की वाणी उत्तम, मधुर एवं सत्यनिष्ठ होती है, वह राष्ट्र निस्संदेह उत्तरोत्तर प्रगतिशील पथ पर गमन करते हुए अपने उत्कर्ष को प्राप्त करता है (ऋ.1/8/8)। राष्ट्र के सच्चे सपूतों का कर्तव्य होता है कि वे निंदा करने वाले राक्षसी प्रवृत्ति के लोगों को तप्त करें और प्रशंसनीय गुणों को प्रकट करने वाले सत्यवादी व्यक्तियों की रक्षा करते हुए उनके पराक्रम में अनवरत वृद्धि करें (ऋ. 2/23/14)। वैदिक नीति है कि राष्ट्रहित को ध्यान में रखते हुए पराक्रमी लोग बलों के प्रहार से उत्पन्न दुखों को भूल कर लोभियों को पशुवत समझते हुए निर्बल पर प्रहार नहीं करते हैं। राष्ट्रहित में गधे के आगे घोड़े को प्रस्तुत करना उनका कर्तव्य कदापि नहीं होता है अर्थात योग्य व्यक्ति के साथ योग्य पद का संबंध स्थापित होना चाहिए (ऋ. 3/53/23)।

सर्वप्रथम 'राष्ट्र' शब्द की विशालता, व्यापकता और उपयोगिता ऋग्वेद में उद्धृत है। ऋषियों की दृष्टि में विशाल द्युलोक एक बृहद परमराष्ट्र है और परमपिता परमेश्वर उसके परमराष्ट्राध्यक्ष है। पृथ्वी की भौगोलिक सीमाओं में फैला अनेक राष्ट्र उसी परमराष्ट्र के आंशिक घटक हैं जिसकी रक्षा, सुरक्षा और पोषण का दायित्व प्रत्येक राष्ट्राध्यक्षों के पवित्र भावों पर निर्भर करता है। प्रत्येक राष्ट्राध्यक्षों की भावनाएँ उस परमेश्वर की तरह उदार और कृपालु होनी चाहिए तभी राष्ट्र और उसमें पलने वाले नागरिक संरक्षित, सुरक्षित और

आनंदित रहते हुए अपने दायित्व का कुशलतापूर्वक निर्वाह करते हैं (ऋ. 7/82/2)।

राष्ट्र की रक्षा और राष्ट्रीयता के संरक्षण के लिए राष्ट्र के भूभाग को माँ की संज्ञा देकर मातृभूमि से संबोधित किया। ऋषियों ने मातृस्वरूपिणी, सर्वसुखदात्री मातृभूमि की सेवा के लिए लोकमानस का आह्वान किया—उप सर्प मातरं भूमिम् (ऋ. 10/18/10)।

राष्ट्र की रक्षा के लिए उत्तम वीर पुत्रों को वसुंधरा पालती है (ऋ. 10/18/9)। जन्मदात्री माँ की तरह पृथ्वी पुत्रों को अपने आंचल में पालती है और उसे राष्ट्ररक्षार्थ के योग्य बनाती है (10/18/12)। ऋषियों ने मातृभूमि अर्थात स्वदेश को नमन करते हुए अपने राष्ट्र में संजीदगी से अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने हेतु अनेक मंत्रों में राष्ट्र की रक्षा के लिए उद्घोष किया है कि 'माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः'। (यजु. 9/12, 9/23, अथ. (12/1/10, 12/1/12, 12/1/63, 3/30/1, साम.1/1/23)।

हमारा राष्ट्र और हमारी पृथ्वी हमारे लिए सर्वदा स्तुत्य है। ऋषियों ने हमारी पृथ्वी की महानता और उसकी उपादेयता को अनेक मंत्रों में उद्धृत किया है (ऋ. 1/191/3, 5/41/19, 1/22/16, 5/41/15)। वैदिक काल में विभिन्न प्रकार के राज्य शासन सामान्यतया कार्य व्यवहार में प्रचलित थे जिनका वर्णन ब्राह्मण ग्रंथों में वर्णित है—

स्वस्ति, साम्राज्यः भोज्यं स्वराज्यं वैराज्यं
पारमेष्ठयं राज्यं महाराज्यं आधिपत्यमयं समन्तपर्यायी।

(ऐतरेय ब्राह्मण)

अर्थात साम्राज्य, भौज्य, स्वराज्य, वैराज्य, पारमेष्ठयराज्य, महाराज, आधिपत्यम राज्य और समन्तपर्यायी, इस प्रकार कुल मिलाकर आठ प्रकार की राज्य व्यवस्था प्रयोग में थी, परंतु इन सभी में से स्वराज्य शासनपद्धति को सर्वाधिक उपयुक्त समझा गया था। आज स्वराज्य शासन व्यवस्था को नवीनतम अर्थात आधुनिक समझना हमारी भारी भूल कही जाएगी। स्वराज्य शासन व्यवस्था को वेदों ने उत्तम ठहराया है।

आ यद् वामीयचक्षसा मित्र वयं च सूरयः।
व्यचिष्ठे बहुपाय्ये यतेमहि स्वराज्ये॥

ऋ. 5/66/6

अर्थात दूरदृष्टि वाले, मित्र के समान जनता का हित करने वाले और बड़े ज्ञानीजन जैसे सशक्त तीनों लोग संयुक्त होकर अति विस्तृत बहुपाय्य स्वराज्य में जनता का कल्याण करने के लिए प्रयत्न करें। वैदिक काल में स्वराज्य को बहुपाय्य स्वराज्य कहा गया है, स्वराज और राष्ट्रीयता की उदात्त भावनाओं को वेदों के अनेक मंत्रों में विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है (अथर्व. 10/7/31, 20/109/2 3; साम. 2/15/2, 3; ऋ. 1/84/11,12, 2/8/5)।

राष्ट्र और राष्ट्रीयता के संरक्षण, संवर्धन और सुदृढ़ीकरण में स्वराज्य की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। स्वराज्य किसी भी राष्ट्र के सामर्थ्यवान होने का परिचायक है। वैदिक ऋषियों ने अनेक मंत्रों द्वारा शक्तिशाली राष्ट्र के निर्माण में स्वराज्य की भूमिका पर विस्तृत प्रकाश डाला है। अपने ऊपर स्वयं शासन करने अर्थात महापुरुषों द्वारा निर्धारित नियमावली और परिभाषित आचारावलियों को आचरण में उतारकर सर्वग्राही संस्कृति और लोककल्याणकारी सभ्यता को अंगीकार करने का नाम स्वराज्य है। वैदिक ऋषियों का उद्घोष है कि आचरण से मनुष्य, मनुष्य से समाज और सुसंस्कृत समाज से सभ्य राष्ट्र का निर्माण होता है। ऐसे उपाष्य राष्ट्र को कोई भी विनष्ट नहीं कर सकता है (ऋ. 1/36/7, 5/82/2)। राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत राष्ट्र का पिता द्युलोक और पृथ्वी ममतामयी माँ (ऋ. 6/51/5, 1/89/4) हो तो ऐसे मृदुभाषी उदार माता-पिता (ऋ. 5/43/2) के संरक्षण में पलने वाले मनुष्यों को परमेश्वर की कृपा से सर्वदा सद्बुद्धि प्रदान होती है और वह सुखी राष्ट्र अपने असंख्य आचरणशील वीरजनों द्वारा रक्षणीय होता है (ऋ. 5/42/16, 1/22/15, 5/66/6)। राष्ट्र में निवास करने वाले व्यक्तियों को हमेशा स्मरण रखना चाहिए कि अपने शरीर द्वारा ज्ञानेंद्रियों और कर्मेंद्रियों में संतुलन स्थापित कर दुर्व्यसनों पर पूर्णरूपेण स्वाधीनता प्राप्त करना ही स्वराज्य है। ऐसे ही स्वशासित सामर्थ्यवान गुणी एवं प्रखर महानुभाव द्वारा जब राष्ट्र का संचालन हो तो वही वास्तविक और सार्थक स्वराज्य है। वैदिक परिभाषा में स्वयंशासित, स्वावलंबी, संयमी, जितेंद्रिय, कर्मठशील उदार महापुरुषों द्वारा शासित एवं संचालित प्रणाली का नाम स्वराज्य है। स्वराज्य में स्वयंशासित शासक का व्यवहार लोकमानस के साथ हमेशा मित्रवत एवं व्यापक सौहार्दपूर्ण दृष्टि का होना चाहिए क्योंकि वह परमेश्वर का प्रतिनिधित्व करता है।

वैदिक सिद्धांतों के अनुसार नैतिक मूल्यों और सुसंस्कारों से युक्त राष्ट्राध्यक्ष का ज्ञानियों और समाज के प्रबुद्ध लोगों द्वारा उसके बल, बुद्धि और साहस में वृद्धि चतुर्दिक से सहायक होना चाहिए। फलतः राष्ट्राध्यक्ष का दायित्व है कि देश की स्वतंत्रता को शत्रुओं से मुक्त कर राष्ट्र को अभय करेगा। देशद्रोहियों को विनष्ट कर अपने स्वशासित विचारों द्वारा देश की स्वतंत्रता को अक्षुण्ण बनाते हुए राष्ट्र के अंदर ज्ञानी जनों का समुचित संवर्धन करते हुए छात्रशक्ति का अनवरत उन्नयन करते हुए अपने सामर्थ्य का उपयोग कर मनुष्य के हितों की रक्षा करना शक्तिशाली राष्ट्रनायक का परम कर्तव्य है (ऋ. 1/80/1-3)। संयमी राजाओं को ऋषियों ने संबोधित किया है कि अपने राष्ट्र की स्वतंत्रता को क्षति पहुँचाने वाले शत्रुओं को पृथ्वी से नष्ट कर दें और अपने प्रखर एवं प्रबुद्ध देशवासियों के प्राणों तथा उनके अस्तित्व की रक्षा के लिए अपने प्राणों को आहूत करना तुम्हारा राष्ट्रीय कर्तव्य है और तुम्हारा यह दायित्वबोध विद्वानों द्वारा सर्वदा वंदनीय है (ऋ.1/80/4-6, 3/44/4)।

'मायिनं मृगं मायय अवधीः' अर्थात कपटी-छली-दंभी शत्रुओं को कपट और छल से ही मारना श्रेयस्कर है (1/80/7)।

सहस्त्रं साकमर्चत परि ष्टोभत विंशतिः।
शतैनमन्वनोनवु रिन्द्राय बहृमोद्यत मर्धन्नु स्वराज्यम्।

ऋ. 1/80/9

"राष्ट्र निर्माण में सच्चे लोकतंत्र को परिभाषित करने के लिए वैदिक स्वराज का चिंतन ही मौलिक आधार है। वैदिक ऋषियों का उद्घोष है कि पराक्रमी, वीर्यवान और संयमी इंद्र की तरह स्वराज्य की पूजा करते हुए राष्ट्र के रक्षार्थ दुष्ट, कपटी एवं दुराचारी आक्रांताओं का समूल नष्ट करने के लिए किया गया कार्य हिंसात्मक नहीं होता है।"

अर्थात मनुष्यों को सहस्रों की संख्या में एकत्रित होकर ईश्वर की प्रार्थना, पूजन-अर्चन करना चाहिए। सहस्त्रों की संख्या में अभाव होने पर सैकड़ों अथवा बीसों की संख्या में एकत्र होकर अपने इष्ट की अवश्य आराधना करें। परिणामस्वरूप देशवासियों की संगठनात्मक विचारधारा और सहयोगात्मक क्रियाकलापों से राष्ट्र संगठित और सुदृढ़ होता है। यही संगठनात्मक शक्ति ही राष्ट्रनायक की आधारशिला होती है। जैसे सब देवों से प्राप्त कर्तृत्व की शक्ति द्वारा वीर्यवान पराक्रमी इंद्र ने अपने स्वराज्य की पूजा करते हुए वृत्त राक्षस का अंत किया है, उसी प्रकार संगठनों से प्राप्त शक्ति द्वारा राष्ट्राध्यक्ष को भी अपने राष्ट्र के प्रति उठाने वाले शत्रुओं को समूल नष्ट कर देना चाहिए (ऋ. 1/80/10-16)। राष्ट्र, राष्ट्रीयता और स्वराज्य के बीच स्थापित अभिनवभाव संबंधों और उसके महात्म्य को बड़ी गंभीरता से वैदिक ऋषियों ने सर्वप्रथम लोकमानस के लिए प्रस्तुत किया है। ईश्वरप्रेरित राष्ट्र की संगठनात्मक शक्ति ही राष्ट्राध्यक्ष की सामर्थ्य होती है और राष्ट्राध्यक्ष का मित्रवत परोपकारी नेतृत्व ही देशवासियों को सुसंगठित करता है। राष्ट्र में ज्ञानियों की अभिवृद्धि, शस्त्रों का निर्माण और वीर सपूतों का संरक्षण एवं उत्साहवर्धन और दुष्ट एवं कपटी शत्रुओं का विनाश करना यह राष्ट्राध्यक्ष का मौलिक कर्तव्य है। वैदिक शास्त्रों में वर्णित स्वयंशासित, जितेंद्रिय राष्ट्राध्यक्ष और उसका शासन तथा मित्रवत व्यवहार द्वारा सर्जित एवं संगठित राष्ट्र और उसकी राष्ट्रीयता सर्वदा दीर्घकाल तक अनुकरणीय और पूजनीय होती है ।

स्मरण रहे ऐश्वर्ययुक्त वृत्तहन्ता सर्वसमर्थ वज्रधारी इंद्र अर्थात परमेश्वर ही द्युलोक और पृथ्वी लोक का सम्राट है (ऋ. 1/100/1)। वैदिक दृष्टि में पृथ्वी के भूखंडों पर बिखरे शेष विकसित, विकासशील और अविकसित राष्ट्र और उसके राष्ट्राध्यक्ष उस परमेश्वर के प्रतिनिधिमात्र हैं। परमेश्वर ब्रह्मांड का केंद्र है और राष्ट्राध्यक्ष अपने राष्ट्र की धुरी है (ऋ. 1/32/15)। राष्ट्राध्यक्ष को नियमानुगामी (ऋ. 8/25/16) और यज्ञप्रेमी अर्थात कर्म स्नेही (ऋ. 1/26/7) होना चाहिए, तभी पंचजन लोग उसके सत्कार में जयघोष करते हैं (ऋ. 8/63/7)। ऐसे पवित्र वैदिक विचारधारा को अंगीकार कर प्रत्येक राष्ट्राध्यक्ष आपसी सौहार्द और मित्रवत व्यवहार के तहत कार्य करें तो आपसी विद्वेष समाप्त हो जाएगा और प्रत्येक राष्ट्र अपने उत्कर्ष को सरलतापूर्वक प्राप्त कर आनंदित हो सकता है। वैदिक स्वराज की अवधारणा में सांस्कृतिक स्वाधीनता और नैतिक मूल्यों का पूर्ण समावेश है। राष्ट्र निर्माण में सच्चे लोकतंत्र को परिभाषित करने के लिए वैदिक स्वराज का चिंतन ही मौलिक आधार है। वैदिक ऋषियों का उद्घोष है कि पराक्रमी, वीर्यवान और संयमी इंद्र की तरह स्वराज्य की पूजा करते हुए राष्ट्र के रक्षार्थ दुष्ट, कपटी एवं दुराचारी आक्रांताओं का समूल नष्ट करने के लिए किया गया कार्य हिंसात्मक नहीं होता है।

संपूर्ण चिंतनशील मनुष्यों को सर्वदा यह स्मरण रखना चाहिए कि सर्वव्यापी सर्वज्ञ ऊर्जा उनके अंदर निहित है। वही आपका नियंता अर्थात नेतृत्वकर्ता है जो आपकी सारी वैचारिक शक्तियों को नियंत्रित करता है। आपकी भावनाओं का उद्वेलक है। राष्ट्र और राष्ट्रीयता के निर्माण का नेतृत्व इसी चिंतन शक्तियों पर आधारित है। हमारा राष्ट्रनायक इन्हीं शक्तियों का संगठनात्मक मूर्तरूप है। असंग्रही राष्ट्राध्यक्ष अर्थात राष्ट्रीय नेता का दायित्व है कि लोकमानस में प्राप्त संगठित शक्तियों का उपयोग राष्ट्र और राष्ट्रवासियों के हित में उसी प्रकार में करे जैसे औषधियों में निहित ऊर्जा चतुर्दिक से घेर कर रोगों का विनाश करती है (ऋ. 1/98/2',3, 1/99/1)।

आ बहृमन् ब्राहृमणो बहृमवर्चसी जायताम्। आराष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायताम्। दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषां जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम्। निकामे-निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्।

यजु. 22/22

उपर्युक्त मंत्र में ऋषि राष्ट्र के लिए प्रार्थना करता है कि हे सर्वव्यापी शक्तिशाली परमेश्वर! हमारे राष्ट्र में ब्रह्मवर्चस्वी ब्राह्मण और शूरवीर, लक्ष्यभेदी, महापराक्रमी शत्रुओं को जीतने वाले महारथी योद्धा क्षत्रियजन उत्पन्न हों। शीघ्रगामी अश्व, भारवाही वृषभ, दुधारू गायें उत्पन्न हों। राष्ट्र (नगर) का नेतृत्व करने वाली नारियाँ सर्वगुण संपन्न हों। रथी सर्वदा विजयशील हों। पराक्रमी युवा सभा के योग्य आचरणशील संपन्न हों। हमारे राष्ट्र में आवश्यकतानुसार मेघों द्वारा जलवृष्टि हों। हमारे राष्ट्र के लिए परिपक्व औषधियाँ सर्वदा फलदाई हों और हमारा योगक्षेम उत्तम रीत से निरंतर संपन्न होता रहे। राष्ट्र और राष्ट्रवासियों के चतुर्दिक से मंगल हेतु वैदिक ऋषियों ने प्राणों (यजु. 22/23), दिशाओं (यजु. 22/24) एवं समस्त प्राकृतिक कारकों अथवा घटकों (यजु. 25-34) के प्रति आहुति प्रदान करते हुए प्रार्थना करता है कि संपूर्ण प्राणियों का शुभ हो।

प्रेमचंद की कहानियों में खेलों का महत्व

हिंदी साहित्य के मूर्धन्य कथाकार-रचनाकार मुंशी प्रेमचंद की लगभग तीन सौ से कुछ अधिक प्रकाशित कहानियों की बारीकी से जाँच-पड़ताल करें तो हमें पता चलता है कि भारतीय जनमानस में खेलों के महत्व को समझते हुए उन्होंने इनका प्रयोग अपनी कहानियों में प्रमुखता के साथ किया है। प्रेमचंद की खेलों पर आधारित प्रमुख कहानियाँ इस प्रकार हैं—'मनावन', 'धोके की टट्टी', 'धर्मसंकट', 'परीक्षा', 'दीक्षा', 'विनोद', 'डिक्री के रुपये', 'भाड़े का टट्टू', 'बड़े बाबू', 'मंत्र', 'अलग्योझा', 'होली का उपहार', 'दूध का दाम', 'स्वाँग' आदि। यह वे कहानियाँ हैं, जिनमें प्रेमचंद किसी-न-किसी रूप में खेलों का वर्णन अवश्य करते हैं। कहीं-कहीं उन्होंने इन खेलों का विस्तार दिया है, कहीं केवल जिक्र कर छोड़ दिया है। प्रेमचंद ने इन कहानियों में जिन-जिन खेलों का वर्णन किया है, वे हैं—'हॉकी', 'फुटबॉल', टेनिस', 'गुल्ली-डंडा', 'गोल्फ', 'दंगल', 'बच्चों का खेल सवार-सवार', 'शतरंज', 'कनकौआ' (पतंग), 'क्रिकेट मैच' आदि। इसके अलावा तीन कहानियों के शीर्षक खेलों पर आधारित हैं, जैसे—'शतरंज के खिलाड़ी', 'गुल्ली-डंडा' एवं 'क्रिकेट मैच'। 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी ऐतिहासिक एवं राजनैतिक पृष्ठभूमि पर आधारित है, जिसके केंद्र में शतरंज के खेल को मुख्य तौर पर दर्शित किया गया है। 'गुल्ली-डंडा' एवं 'क्रिकेट मैच' कहानी विशुद्ध रूप से खेलों पर ही केंद्रित है जिसमें ग्रामीण खेल 'गुल्ली-डंडा' एवं आधुनिक खेल 'क्रिकेट मैच' को बड़े ही रोचक तरीके से वर्णित किया गया है। 'बड़े भाई साहब' कहानी में प्रेमचंद जीवन में शिक्षा के साथ-साथ खेलकूद की महत्ता को भी महत्वपूर्ण मानते हैं। इस लिहाज से यह कहानी महत्वपूर्ण बन जाती है। इसके अलावा बालमन पर केंद्रित 'चोरी', 'कजाकी', 'खेल', 'ईदगाह' आदि कहानियों में बालमन के माध्यम से खेलों का वर्णन किया है। एक कहानी ऐसी भी है, जिसमें खेलों का संदर्भ है और लेखक उनसे भी कुछ कहना चाहता है। कहानी है 'सैलानी बंदर' (फरवरी 1924) जो पशु और मनुष्य के संबंधों की हृदयस्पर्शी कहानी है।

प्रेमचंद की कहानी 'खेल' (अप्रैल 1931) गाँव के बालकों के खेल-खेल में किए गए एक नाटक की कहानी है, जो खेल होने पर भी बाल जीवन का वास्तविक चित्र बन जाता है। जीवन, कहानी बनता है और कहानी, जीवन और यह खेल-खेल में होता है। 'ईदगाह' (अगस्त 1933) कहानी यद्यपि बालक हामिद की अपनी दादी अमीना के प्रति घनीभूत संवेदना की कहानी है, लेकिन उसमें ईदगाह के आस-पास खिलौनों की दुकानों की चर्चा की गई है।

मनावन (जमाना, उर्दू मासिक पत्रिका, जुलाई 1912 में प्रकाशित) : कहानी में प्रेमचंद हॉकी खेल का वर्णन करते हुए कहते हैं कि "बंबई और यू.पी. के डेलीगेटों में एक हॉकी मैच की ठहर गई...खैर, पाँच बजे खेल शुरू हुआ। दोनों तरफ के खिलाड़ी बहुत तेज थे, जिन्होंने हॉकी खेलने के सिवा जिंदगी में और कोई काम ही नहीं किया। खेल बड़े जोश और सरगर्मी से होने लगा। कई हजार तमाशाई जमा थे। उनकी तालियाँ और बढ़ावे खिलाड़ियों पर मारू बाजे का काम कर रहे थे और गेंद किसी अभागे की किस्मत की

कृष्णवीर सिंह सिकरवार

जन्म : 01 मई, 1974, ग्वालियर, मध्य प्रदेश।

शिक्षा : एल.एल.बी.।

संप्रति : राजीव गांधी प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, भोपाल में 15 वर्षों से कार्यरत।

प्रकाशन : वर्ष 2016 में यश पब्लिकेशंस नई दिल्ली से 'प्रेमचंद्र शोध की निरंतरता' पुस्तक प्रकाशित, रचनाएँ कई प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित।

संपर्क : मोबाइल— 9826583363

ईमेल— krishanveer74@gmail.com

तरह इधर-उधर ठोकरें खाती फिरती थी। दयाशंकर के हाथों की तेजी और सफाई, उनकी पकड़ और बेऐब निशानबाजी पर लोग हैरान थे, यहाँ तक कि जब वक्त खत्म होने में सिर्फ एक मिनट बाकी रह गया और दोनों तरफ के लोग हिम्मत हार चुके थे तो दयाशंकर ने गेंद ली और बिजली की तरह विरोधी पक्ष के गोल पर पहुँच गए। एक पटाखे की आवाज हुई, चारों तरफ से गोल का नारा बुलंद हुआ। इलाहाबाद की जीत हुई और इस जीत का सेहरा दयाशंकर के सिर था।"

धर्मसंकट (जमाना, उर्दू मासिक पत्रिका, मई 1913 में प्रकाशित) : कहानी के पंडित कैलाशनाथ लखनऊ के प्रतिष्ठित बैरिस्टरों में से थे...हाँ, क्रिकेट का शौक अब तक ज्यों-का-त्यों बना था। वह कैसर क्लब के संस्थापक और क्रिकेट के प्रतिष्ठित खिलाड़ी थे। यदि मि. कैलाश को क्रिकेट की धुन थी, तो उनकी बहन कामिनी को टेनिस का शौक था।

शंखनाद (हमदर्द, उर्दू पत्र, जून 1913 में प्रकाशित) : कहानी का गुमान बड़ा रंगीला जवान था। खँजड़ी बजा-बजाकर जब वह मीठे स्वर से ख़याल गाता, तो रंग जम जाता। उसे दंगल का ऐसा शौक था कि कोसों तक धावा मारता पर घरवाले कुछ ऐसे शुष्क थे कि उसके इन व्यसनों से तनिक भी सहानुभूति न रखते थे।

परीक्षा (प्रताप, हिंदी साप्ताहिक पत्र, विजयदशमी अंक, अक्तूबर 1914 के अंक में हिंदी में प्रकाशित प्रेमचंद की पहली कहानी) : कहानी में रियासत देवगढ़ के लिए दीवान पद के लिए आए उम्मीदवारों में से एक दिन नए फैशनवालों को सूझी कि आपस में 'हॉकी' का खेल हो जाए। यह प्रस्ताव हॉकी के मँजे हुए खिलाड़ियों ने पेश किया...चलिए तय हो गया, कोर्ट बन गए, खेल शुरू हो गया और गेंद किसी दफ्तर के अप्रेंटिस की तरह ठोंकरें खाने लगी। रियासत देवगढ़ में यह खेल बिलकुल निराली बात थी। पढ़े-लिखे भले मानस लोग शतरंज और ताश जैसे गंभीर खेल खेलते थे। दौड़-कूद के खेल बच्चों के खेल समझे जाते थे। खेल बड़े उत्साह से जारी था। धावे के लोग जब गेंद को लेकर तेजी से बढ़ते तो ऐसा जान पड़ता था कि कोई लहर बढ़ती चली आती है। लेकिन दूसरी ओर के खिलाड़ी इस बढ़ती लहर को इस तरह रोक लेते थे मानो लोहे की दीवार है। संध्या तक यही धूमधाम रही। लोग पसीने में तर हो गए। खून की गरमी आँख और चेहरे से झलक रही थी। हाँफते-हाँफते बेदम हो गए, लेकिन हार-जीत का निर्णय न हो सका।

दीक्षा (माधुरी, हिंदी मासिक पत्रिका, सितंबर 1924 में प्रकाशित) : कहानी का कथावाचक अपने बचपन के समय को याद करते हुए कहता है कि "जब मैं स्कूल में पढ़ता था, गेंद खेलता था और अध्यापक महोदयों की घुड़कियाँ खाता था, अर्थात् मेरी किशोरावस्था थी।" परंतु भविष्य में यह सुख जाते रहते हैं, तब वह कहता है कि "यह भी कोई जिंदगी है? कोई सुख नहीं, मनोरंजन का कोई सामान नहीं। दिन भर काम करने के बाद टेनिस क्या खाक खेलूँगा?"

शतरंज के खिलाड़ी (माधुरी, हिंदी मासिक पत्रिका, अक्तूबर 1924 में प्रकाशित) : कहानी के दो दोस्त मिर्जा और मीर साहब शतरंज के खेल को लेकर किस कदर डूबे हुए हैं, यह देखना बड़ा दिलचस्प है। यह एक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर लिखी गई रोचक कहानी है। लेखक कहता है कि "वाजिदअली शाह का समय था। लखनऊ विलासिता के रंग में डूबा हुआ था। छोटे-बड़े, गरीब-अमीर सभी विलासिता में डूबे हुए थे। कोई नृत्य और गान की मजलिस सजाता था, तो कोई अफीम की पीनक ही के मजे लेता था... सभी की आँखों में विलासिता का मद छाया हुआ था। संसार में क्या हो रहा है, इसकी किसी को खबर न थी। बटेर लड़ रहे हैं। तीतरों की लड़ाई के लिए पाली बदी जा रही है। कहीं चौसर बिछी हुई है; पौ-बारह का शोर मचा हुआ है। कहीं शतरंज का घोर संग्राम छिड़ा हुआ है। राजा से लेकर रंक तक इसी धुन में मस्त थे।"

विनोद (माधुरी, हिंदी मासिक पत्रिका, नवंबर 1924 में प्रकाशित) : कहानी विद्यालयों में होने वाली विनोद लीलाओं के बड़े मनोरंजक एवं विनोदपूर्ण चित्र उपस्थित करती है। "विद्यालयों में विनोद की जितनी लीलाएँ होती रहती हैं, वे यदि एकत्र की जा सकें, तो मनोरंजन की बड़ी उत्तम सामग्री हाथ आए। वहाँ अधिकांश छात्र जीवन की चिंताओं से मुक्त रहते हैं...वहाँ, जहाँ किसी महाशय ने किसी विभाग में विशेष उत्साह दिखाया (क्रिकेट, हाकी, फुटबॉल को छोड़कर) और वह विनोद का लक्ष्य बना।" कहानी की पात्र लूसी ने कहानी नायक चक्रधर से इच्छा प्रकट की, "मैं आपको अंग्रेजी खेल खेलते देखना चाहती हूँ। मैंने आपको कभी फुटबाल या हॉकी खेलते नहीं देखा। अंग्रेज जेंटिलमैन के लिए हॉकी, क्रिकेट आदि में सिद्धहस्त होना परमावश्यक है।" इस प्रकार यह कहानी पूरी तरह से हास्य-व्यंग्य में डूबी हुई रोचक कहानी है।

डिक्री के रुपये (माधुरी, हिंदी मासिक पत्रिका, जनवरी 1925 में प्रकाशित) : कहानी दो सहपाठियों नईम और कैलाश की मित्रता और परीक्षा की कहानी है। कहानी अनुसार, "नईम और कैलाश में इतनी शारीरिक, मानसिक, नैतिक और सामाजिक अभिन्नता थी, जितनी दो प्राणियों में हो सकती है। नईम दीर्घकाय विशाल वृक्ष था, कैलाश बाग का कोमल पौधा; नईम को क्रिकेट और फुटबाल, सैर और शिकार का व्यसन था, कैलाश को पुस्तकावलोकन का।"

भाड़े का टट्टू (माधुरी, हिंदी मासिक पत्रिका, जुलाई 1925 में प्रकाशित) : कहानी दो शिक्षित सहपाठियों यशवंत और रमेश की है।

यशवंत आत्मा को मानता है और रमेश धन को, इसलिए यशवंत रमेश को 'भाड़े का टट्टू' कहता है। "यशवंत और रमेश साथ-साथ स्कूल में दाखिल हुए और साथ-ही-साथ उपाधियाँ लेकर कॉलेज से निकले। यशवंत कुछ मंदबुद्धि, पर बला का मेहनती था। जिस काम को हाथ में लेता, उससे चिमट जाता और उसे पूरा करके ही छोड़ता। रमेश तेज था, पर आलसी। घंटे-भर भी जमकर बैठना उसके लिए मुश्किल था। एम. ए. तक तो वह आगे रहा और यशवंत पीछे, मेहनत बुद्धि-बल से परास्त होती रही, लेकिन सिविल-सर्विस में पाँसा पलट गया। यशवंत सब धंधे छोड़कर किताबों पर पिल पड़ा; घूमना-फिरना, सैर-सपाटा, सर्कस-थिएटर, यार-दोस्त, सबसे मुँह मोड़कर अपने एकांत कुटीर में जा बैठा। रमेश दोस्तों के साथ गपशप उड़ाता, क्रिकेट खेलता रहा। कभी-कभी मनोरंजन के तौर पर किताबें देख लेता।"

बड़े बाबू (बहारिस्तान, उर्दू मासिक पत्रिका, फरवरी 1927 में प्रकाशित) : पूर्णरूप से व्यंग्यपूर्ण कहानी है। कहानी में आद्योपांत ऐसा तीव्र व्यंग्य इससे पूर्व की कहानियों में कम ही दिखाई पड़ता है। कहानी का कथावाचक कहता है कि "खुदा के फजल से लहीम-शहीम आदमी हूँ, जिन दिनों कॉलेज में था, मेरे डील-डौल और मेरी बहादुरी और दिलेरी की धूम थी। हॉकी टीम का कप्तान, फुटबॉल टीम का नायब कप्तान और क्रिकेट का जनरल था।"

मंत्र (विशाल भारत, हिंदी मासिक पत्रिका, मार्च 1928 में प्रकाशित) : कहानी में लेखक कहता है कि "संध्या का समय था। डॉक्टर चड्ढा गोल्फ खेलने को तैयार हो रहे थे। मोटर द्वार के सामने खड़ी थी कि दो कहार एक डोली लिए आते दिखाई दिए। डोली के पीछे एक बूढ़ा लाठी टेकता चला आता था...बूढ़े ने हाथ जोड़कर कहा—'हुजूर, बड़ा गरीब आदमी हूँ। मेरा लड़का कई दिन से...डॉक्टर चड्ढा ने कलाई पर नजर डाली। केवल दस मिनट समय और बाकी था।' गोल्फ-स्टिक खूँटी से उतारते हुए बोले—'कल सबेरे आओ, कल सबेरे; यह हमारे खेलने का समय है।" कहानी जीवन जीने का मंत्र सिखाती है।

अलग्योझा (माधुरी, हिंदी मासिक पत्रिका, अक्तूबर 1929 में प्रकाशित) : कहानी ग्रामीण जीवन में संयुक्त परिवार के टूटने और उसे जोड़ने की कहानी है। लेखक कहता है कि "भोला महतों ने पहली स्त्री के मर जाने के बाद दूसरी सगाई की, तो उसके लड़के रग्घू के लिए बुरे दिन आ गए। रग्घू की उम्र उस समय केवल दस वर्ष की थी। चैन से गाँव में गुल्ली-डंडा खेलता फिरता था। माँ के आते ही चक्की में जुतना पड़ा।"

होली का उपहार (माधुरी, हिंदी मासिक पत्रिका, अप्रैल 1931 में प्रकाशित) : कहानी का शीर्षक 'होली का उपहार' है, लेकिन यह कहानी स्वाधीनता संग्राम के उपहार की कहानी है। "मैकूलाल अमरकांत के घर शतरंज खेलने आए, तो देखा वह कहीं बाहर जाने की तैयारी कर रहे हैं।"

गुल्ली-डंडा (हंस, हिंदी मासिक पत्रिका, फरवरी 1933 में प्रकाशित) : कहानी खेल विमर्श की दृष्टि से प्रेमचंद की एक महत्वपूर्ण कहानी है। पाठक इसके शीर्षक से ही यह बखूबी अंदाजा लगा लेता है कि, यह ग्रामीण परिवेश के महत्वपूर्ण खेल गुल्ली-डंडा को व्यक्त करती एक महत्वपूर्ण कहानी है। कहानी के कथावाचक की नजर में विदेशी खेल बहुत महँगे होते हैं, जबकि ग्रामीण खेल जैसे गुल्ली-डंडा बहुत ही सस्ता खेल है, यह बच्चों का प्रिय खेल है। अगर दो लोग भी इकट्ठे हो जाएँ तो खेल शुरू हो सकता है। कहानी की शुरुआत में ही लेखक कथावाचक के माध्यम से इस खेल की विशेषता एवं ग्रामीण क्षेत्रों में इसकी उपयोगिता को एक लंबे अवतरण द्वारा परिभाषित किया है। पाठकों के लिए महत्वपूर्ण इस अवतरण का विशेष महत्व है, इसलिए यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। कथावाचक कहता है कि "हमारे अंग्रेजीदाँ दोस्त मानें या न मानें, मैं तो यही कहूँगा कि गुल्ली-डंडा सब खेलों का राजा है। अब भी कभी लड़कों को गुल्ली-डंडा खेलते देखता हूँ, तो जी लोट-पोट हो जाता है कि इनके साथ जाकर खेलने लगूँ। न लॉन की जरूरत, न शिनगार्ड की, न नेट की, न थापी की। मजे से किसी पेड़ की एक टहनी काट ली, गुल्ली बना ली, और दो आदमी भी आ गए, तो खेल शुरू हो गया। विलायती खेलों में सबसे बड़ा ऐब है कि उनके सामान महँगे होते हैं। जब तक कम-से-कम एक सैकड़ा न खर्च कीजिए, खिलाड़ियों में शुमार ही नहीं हो सकता। यहाँ गुल्ली-डंडा है कि बिना हर्र-फिटकरी के चोखा रंग देता है; पर हम अंग्रेजी चीजों के पीछे ऐसे दीवाने हो रहे हैं कि अपनी सभी चीजों से अरुचि हो गई है...ठीक है, गुल्ली से आँख फूट जाने का भय रहता है। तो क्या क्रिकिट से सिर फूट जाने, तिल्ली फट जाने, टाँग टूट जाने का भय नहीं रहता। अगर हमारे माथे में गुल्ली का दाग आज तक बना हुआ है, तो हमारे कई दोस्त ऐसे भी हैं, जो थापी को बैसाखी से बदल बैठे। खैर, यह तो अपनी-अपनी रुचि है। मुझे गुल्ली ही सब खेलों से अच्छी लगती है और बचपन की मीठी स्मृतियों में गुल्ली ही सबसे मीठी है। वह प्रातःकाल घर से निकल जाना, वह पेड़ पर चढ़कर टहनियाँ काटना और गुल्ली-डंडे बनाना, वह उत्साह, वह लगन, वह खिलाड़ियों के जमघटे, वह पदना और पदाना, वह लड़ाई-झगड़े, वह सरल स्वभाव, जिसमें छूत-अछूत, अमीर-गरीब का बिलकुल भेद न रहता था, यह उसी वक्त भूलेगा तब...जब...।"

समग्रतः कहा जा सकता है कि प्रेमचंद ने अपनी कहानियों में इन खेलों की महत्ता को समाहित कर कहानियों को ऊर्जावान बना दिया।

क्रांति और कलम के अमर सेनानी डॉ. भगवान दास माहौर

"मेरे शोणित की लाली से कुछ तो लाल धरा होगी ही।
मेरे वर्तन से परिवर्तित कुछ तो वसुंधरा होगी ही।"

क्रांति के इस ओजस्वी गीत के रचयिता, डॉ. भगवानदास माहौर आजादी की लड़ाई के एक ऐसे जुझारू क्रांतिकारी थे जिनका इतिहास में सम्यक मूल्यांकन नहीं हुआ है। वे चंद्रशेखर आजाद के अनन्य साथी तथा सरदार भगतसिंह के विश्वस्त सैनिक थे।

शिवजी श्रीवास्तव

जन्म : 19 जनवरी 1955, झाँसी (उ.प्र.)।

संप्रति : सेवानिवृत्त एसोसिएट प्रोफेसर, श्री चित्रगुप्त पी.जी. कॉलेज मैनपुरी (उ.प्र.)।

लेखन/प्रकाशन : कहानी, कविता, रेडियो-नाटक, एकांकी, पटकथा, वार्ता, संस्मरण, आलेख, समीक्षा, रिपोर्टिंग, गीत, नवगीत, ग़ज़ल, हाइकु इत्यादि हिंदी की अनेक विधाओं में लेखन-प्रकाशन, एक कहानी संग्रह 'यक्ष प्रश्न' प्रकाशित।

सृजन/सम्मान : ऑल इंडिया रेडियो द्वारा आयोजित 'अखिल भारतीय सर्वभाषा रेडियो नाट्य लेखन प्रतियोगिता', 1992 में रेडियो नाटक 'ऐसे तो घर नहीं बनता मम्मी' को द्वितीय पुरस्कार, अखिल भारतीय कहानी प्रतियोगिताओं में तीन कहानियाँ पुरस्कृत।

संपर्क : मोबाइल– 9557518552

ईमेल– shivji.sri@gmail.com

सांडर्स-वध के समय वे भगतसिंह के साथ थे, जलगाँव अदालत में पुलिस अभिरक्षा के बीच मुखबिरों पर गोली चलाने वाले साहसी नायक थे। इसके साथ ही वे एक भावुक कलाकार, अच्छे कवि, गंभीर चिंतक एवं उत्कृष्ट लेखक भी थे। 'यश की धरोहर' में लिखे गए उनके संस्मरण हिंदी साहित्य की अनमोल धरोहर हैं। ऐसे जुझारू क्रांतिकारी और विलक्षण मेधा के धनी भगवानदास माहौर का जन्म 27 फरवरी, 1909 को दतिया (म.प्र.) के बड़ौनी ग्राम में श्री रामचरन माहौर जी के घर हुआ था, प्रारंभिक शिक्षा दतिया में ही पूरी करके वे आगे अध्ययन हेतु अपने मामा कवींद्र नाथूराम माहौर के यहाँ झाँसी आ गए। झाँसी में रहते हुए ही उनके क्रांतिकारी जीवन का सूत्रपात हो गया।

भगवानदास माहौर को क्रांति की इस धारा में लाने का श्रेय श्री शचीन्द्रनाथ बख्शी को है। सन् 1924 में रामप्रसाद 'बिस्मिल' के क्रांतिकारी संगठन 'हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन' के झाँसी के जिला संगठनकर्ता शचीन्द्रनाथ बख्शी उत्साही नवयुवकों को इस संगठन के लिए तैयार कर रहे थे, उन्होंने भगवानदास माहौर को भी इस संगठन के लिए तैयार किया। चंद्रशेखर आजाद इन नवयुवकों से मिलने झाँसी आए। भगवानदास माहौर उनके आत्मीय व्यवहार के साथ ही, उनके बलिष्ठ शरीर और तीव्र मेधा से बहुत अधिक प्रभावित हुए। चंद्रशेखर आजाद ने भी भगवानदास माहौर की निर्भीकता और धैर्य की कठिन परीक्षा ली जिसमें वे खरे उतरे और आजाद के प्रिय हो गए।

इस मुलाकात के कुछ महीनों बाद ही 09 अगस्त, 1925 को हुए 'काकोरी-प्रकरण' के बाद आजाद फरार होकर झाँसी आ गए और झाँसी को ही अपना केंद्र बना लिया। यहीं रहकर उन्होंने भगतसिंह आदि साथियों के साथ मिलकर 'हिंदुस्तान सोशलिस्ट आर्मी'

का गठन किया। इस आर्मी का नाम बाद में 'हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन' कर दिया गया, पर माहौर जी सदा उसे 'आर्मी' ही कहते रहे और स्वयं को इस आर्मी का सक्रिय सैनिक मानते रहे। माहौर ने आजाद से निशानेबाजी की ट्रेनिंग ली, शीघ्र ही उनकी गिनती दल के अचूक निशानेबाजों में होने लगी थी। धीरे-धीरे वे चंद्रशेखर आजाद के अत्यंत प्रिय एवं विश्वस्त सहयोगी बन गए तथा अनेक अवसरों पर संगठन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

> **माहौर जी भगतसिंह के भी इतने विश्वस्त हो गए थे कि जब लाला लाजपतराय के हत्यारे स्कॉट को मारने की योजना बनी तो माहौर भी उसमें शामिल किए गए। स्कॉट-वध हेतु मौके पर प्रथम पंक्ति में भगतसिंह, चंद्रशेखर आजाद और राजगुरु मोर्चाबंदी किए थे, इस टुकड़ी के थोड़ा पीछे सुखदेव, विजयकुमार सिन्हा और भगवानदास माहौर की मोर्चाबंदी थी ताकि यदि अधिक संख्या में पुलिस बल मुख्य टुकड़ी का पीछा करे तो ये टुकड़ी उन्हें कवर करती हुई पुलिस से मोर्चा ले।**

सन् 1928 में आजाद के निर्देश पर दल के संगठन हेतु माहौर जी ग्वालियर गए और वहाँ के विक्टोरिया कॉलेज में बी.ए. में एडमिशन लेकर छात्रावास में रहने लगे, दल की गुप्त क्रांतिकारी

गतिविधियों के लिए यह सुरक्षित स्थल था। ग्वालियर में एक गुप्त स्थल पर ये लोग बम बनाने का कार्य भी करते थे। अक्तूबर 1928 में एक दिन उन्हें दल के कार्य से आगरा बुलवाया गया। आगरा में ही माहौर जी का भगतसिंह से प्रथम साक्षात्कार हुआ। भगतसिंह ने उन्हें दल के नियमों से अवगत कराते हुए समाजवाद के सैद्धांतिक स्वरूप से परिचित कराया। भगतसिंह की बौद्धिक प्रतिभा ने उन्हें चमत्कृत किया जैसा कि माहौर जी ने स्वयं लिखा भी है—"क्रांतिकारी दल का प्रथम संदेश मैंने श्री शचीन्द्रनाथ बख्शी से झाँसी में सुना था, उसके बाद जब चंद्रशेखर आजाद के दर्शन मैंने प्रथम बार किए, उनके बलवान शरीर और निर्भीक मुद्रा का मुझ पर गहरा प्रभाव पड़ा, अब जब भगतसिंह को पहली बार देखा तो उनकी बातचीत और रंग-ढंग से क्रांतिकारियों की विद्या-बुद्धि पर अच्छी आस्था हो गई।"

भगतसिंह ने ही उन्हें सही अर्थों में क्रांतिकारी के रूप में दीक्षित किया और दल का सक्रिय सदस्य बनाया। दल में आने के पश्चात हर सदस्य को नया नाम दिया जाता था। माहौर जी अपने चेहरे-मोहरे से कुछ-कुछ हनुमान जी जैसे प्रतीत होते थे अतः दल के सारे सदस्य उन्हें 'हनुमान' नाम देना चाहते थे, पर भगतसिंह सहमत नहीं हुए। उनका मानना था कि इस नाम से वे पहचाने जा सकते हैं अतः भगतसिंह ने ही उनको 'कैलाश' नाम दिया।

माहौर जी भगतसिंह के भी इतने विश्वस्त हो गए थे कि जब लाला लाजपतराय के हत्यारे स्कॉट को मारने की योजना बनी तो माहौर जी भी उसमें शामिल किए गए। स्कॉट-वध हेतु मौके पर प्रथम पंक्ति में भगतसिंह, चंद्रशेखर आजाद और राजगुरु मोर्चाबंदी किए थे, इस टुकड़ी के थोड़ा पीछे सुखदेव, विजयकुमार सिन्हा और भगवानदास माहौर की मोर्चाबंदी थी ताकि यदि अधिक संख्या में पुलिस बल मुख्य टुकड़ी का पीछा करे तो ये टुकड़ी उन्हें कवर करती हुई पुलिस से मोर्चा ले। जयगोपाल पुलिस मुख्यालय के बाहर तैनात था, उसका कार्य स्कॉट को पहचान कर इन्हें संकेत देना था। उस दिन थोड़ी-सी चूक से स्कॉट की जगह सांडर्स मारा गया था। बाद में यही जयगोपाल पुलिस मुखबिर बना जिस पर माहौर जी ने अदालत परिसर में गोली चलाई।

अदालत में गोली चलाने का प्रसंग भी उनके जुझारू और समर्पित सेनानी रूप को सामने लाता है। सांडर्स-वध और असेंबली में बम फेंकने के पश्चात भगतसिंह इत्यादि अधिकांश सक्रिय सदस्य गिरफ्तार किए जा चुके थे। उन पर लाहौर में केस चल रहा था, चंद्रशेखर आजाद अपने कुछ विश्वस्त साथियों के साथ ग्वालियर में छिपे थे। उत्तर भारत में पुलिस की धर-पकड़ तीव्र थी अतः आजाद जी ने दक्षिण भारत में सक्रियता बढ़ाने का विचार किया। क्रांतिकारी राजगुरु पहले ही महाराष्ट्र चले गए थे। आजाद ने माहौर जी एवं सदाशिवराव मलकापुरकर को राजगुरु का पता लगाकर उनके पास जाने का आदेश दिया। राजगुरु का संभावित ठिकाना अकोला था अतः दोनों क्रांतिवीर ग्वालियर की बम फैक्ट्री से बम बनाने का बहुत-सा सामान, दो बम, दो पिस्तौलें और कुछ कारतूस इत्यादि लेकर ट्रेन से अकोला के लिए चले। इन्हें भुसावल स्टेशन से अकोला के

लिए ट्रेन बदलनी थी। भुसावल स्टेशन पर अकोला की ट्रेन तक सामान ले चलने के लिए इन्होंने कुली लिया और ट्रेन की ओर चले। बीच में ही एक्साइज पुलिस ने कुली को रोक कर सामान की तलाशी ली। यद्यपि माहौर जी ने बड़ी चतुराई से ऊपर रखा पिस्तौल हटा लिया, पर अंदर रखे 60 कारतूस पकड़े गए। इन लोगों के पास भागने का अवसर था, पर इनके सामान में आजाद का प्रिय माउजर पिस्तौल भी था, जिसके बारे में आजाद कहा करते थे—'देख तू पकड़ा जाएगा या मर जाएगा तो उतनी हानि नहीं होगी जितनी इस पिस्तौल के चले जाने से होगी।' अतः उस माउजर को छोड़कर ये भागे नहीं और गिरफ्तार हो गए।

जलगाँव अदालत में दोनों पर केस चला, वहाँ सरकारी गवाह बने फणींद्र घोष और जयगोपाल भी गवाही के लिए आते थे। जेल में बंद सदाशिव और माहौर जी ने अदालत में ही इन दोनों गद्दारों को मारने की योजना बनाई और अपने झाँसी के वकील र.वि. धुलेकर के माध्यम से यह योजना आजाद तक पहुँचा कर जेल में एक पिस्तौल भेजने का अनुरोध किया। आजाद ने योजना की जाँच करके पिस्तौल भेजने की व्यवस्था इस निर्देश के साथ की—'दोनों को इस काम में पड़ने की आवश्यकता नहीं है। केवल भगवानदास ही यह काम करे।... दोनों को फाँसी चढ़ने या लड़ मरने की जरूरत नहीं है।' निर्देश बिलकुल साफ था, अब यह कार्य सिर्फ भगवानदास माहौर को ही करना था।

21 फरवरी, 1930 को जलगाँव के सेशन जज की अदालत में भगतसिंह केस के मुखबिरों फणींद्र और जयगोपाल की गवाही होनी थी, वहाँ सदाशिव और माहौर जी की भी पेशी होनी थी। योजनानुसार 20 फरवरी को शाम को ही सदाशिव के बड़े भाई शंकरराव जेल में इन लोगों के लिए खाना लेकर आए और भात के बड़े कटोरे में भरा हुआ पिस्तौल छिपाकर दे गए। दूसरे दिन माहौर जी पिस्तौल को अपने कोट की जेब में छिपाकर अदालत में ले गए, वे तलाशी में सुरक्षाकर्मियों को भी चकमा देने में सफल रहे। लंच के समय दोनों मुखबिर कचहरी के हाते में पुलिस की अभिरक्षा में बैठे थे, साथ ही पंजाब के दो सी.आई.डी. अफसर भी थे। इन दोनों को भी सामने ही बरामदे के नीचे दो कुर्सियाँ डालकर बैठाया गया था, दस सिपाही और एक हवलदार इन्हें घेर कर खड़े थे। माहौर जी का दायाँ हाथ और सदाशिव का बायाँ हाथ एक ही हथकड़ी से बँधा था। माहौर जी ने सदाशिव के भाई से खाने को कुछ मँगाया और खाने के बहाने अपनी हथकड़ी खुलवा ली। खाते-खाते उन्होंने देखा मुखबिरों तक जाने का रास्ता साफ है, अतः मौका पाते ही उन्होंने जेब से पिस्तौल निकाली और मुखबिरों की ओर तीव्र वेग से झपटे, वहाँ पर बैठा सब-इंस्पेक्टर इन्हें रोकने के लिए उठा तो माहौर जी ने एक गोली उसकी जाँघ में मार दी और सामने बैठे फणींद्र और जयगोपाल पर भी एक एक गोली चला दी, परंतु दुर्भाग्यवश अचानक पिस्तौल जाम हो गई और गोलियाँ लक्ष्य से चूक गईं, सर्वत्र भगदड़ मच गई और माहौर जी गिरफ्तार कर लिए गए। इस कांड के लिए सदाशिव मलकापुरकर को 14 वर्ष की सजा और माहौर जी को आजीवन काले पानी की सजा सुनाई गई। बाद में 1938 में कांग्रेस की अंतरिम सरकार बनने पर दोनों को जेल से मुक्त किया गया। उस दिन पिस्तौल जाम होने का अफसोस माहौर जी को सदा बना रहा।

क्रांति जीवन के पश्चात माहौर जी ने अपनी रुकी हुई पढ़ाई को आगे बढ़ाया और पढ़ाई पूरी करके वे बुंदेलखंड डिग्री कॉलेज झाँसी में हिंदी विभाग में प्राध्यापक हो गए। अनवरत अध्ययनरत रहकर उन्होंने आगरा विश्वविद्यालय से '1857 के स्वाधीनता संग्राम का हिंदी साहित्य पर प्रभाव' विषय पर पी-एच.डी. की तथा रानी लक्ष्मीबाई काव्य-परंपरा में मदनेश कृत 'लक्ष्मीबाई रासो' नामक शोध-प्रबंध पर हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा उन्हें साहित्य महामहोपाध्याय की उपाधि प्रदान की गई। बुंदेलखंड में उनकी सेवाओं को देखते हुए बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झाँसी ने उन्हें डी.लिट्. की मानद उपाधि प्रदान की।

सतत सक्रिय रहने वाले, सच्चे कर्मयोगी भगवानदास माहौर 12 मार्च, 1979 को लखनऊ में चंद्रशेखर आजाद की मूर्ति के अनावरण के कार्यक्रम में अतिथि के रूप में उपस्थित थे वहीं भावुक क्षणों में अपने आदर्श नायक की मूर्ति के सम्मुख दिल का दौरा पड़ने से उनका निधन हो गया। भौतिक रूप से वे भले ही विदा हो गए, पर जब तक क्रांति और क्रांतिकारियों का इतिहास रहेगा तब तक इस सेनानी का नाम भी अमर रहेगा।

क्रांतिकारी अजीजन बाई

देश के आजादी के संघर्ष में महिला क्रांतिकारियों ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। इनमें से उच्च, पिछड़े समाज और दलित समुदाय से आने वाली महिलाओं के साथ-साथ सराय बालियाँ, तवायफ व नृत्यांगनाएँ भी थीं। स्वतंत्रता संग्राम की बलिबेदी पर बहुत-सी वीरांगनाओं ने आहुति दी, लेकिन वे इतिहास के पन्नों पर वह स्थान न पा सकीं, जिसकी वे हकदार थीं। ऐसी ही क्रांतिकारी एक नर्तकी थी अजीजन बाई।

सीमा 'असीम' सक्सेना

शिक्षाः एम.ए. संस्कृत।

संप्रति : उद्‌घोषक, आकाशवाणी।

प्रकाशन : चार पुस्तकें प्रकाशित; दो काव्य संग्रह 'ये मेरा आसमाँ' व 'सागर मीठा होना चाहता है'; दो कहानी संग्रह 'लिव लाइफ' व 'आखिर कब तक'। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में नियमित लेखन।

पुरस्कार : सारस्वत सम्मान, विशिष्ट सरस्वती रत्न सम्मान, विश्व हिंदी संस्थान, 'कल्चरल ऑर्गेनाइजेशन कनाडा से सम्मान' व ऑल इंडिया कल्चरल ऐसोसिएशन द्वारा इंटरनेशनल थिएटर फेस्टिवल में प्रतिभाशाली कलाकार का सम्मान।

संपर्क : मोबाइल– 9458606469

ईमेल– seema4094@gmail.com

अजीजन बाई का वास्तविक नाम 'अंजुला' था। इनका जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था, लेकिन वक्त की मार से यह नर्तकी बन गई थीं। उस समय इनका नाम देश की प्रमुख नर्तकियों में शुमार था। इनके पास धन की कोई कमी नहीं थी, पर यह केवल नर्तकी बनकर ही अपना जीवन नहीं गुजारना चाहती थीं। वह चाहती थीं कि देश की आजादी के आंदोलन में हिस्सा लें और क्रांतिकारी बनें। प्रथम स्वाधीनता संग्राम की क्रांति की चिनगारी उस वक्त कानपुर तक दस्तक दे चुकी थी। यह देखकर वे धन-वैभव के जीवन को त्यागकर आजादी के संघर्ष में कूद पड़ीं।

अजीजन बाई का व्यक्तित्व

22 जनवरी, 1824 को मध्य प्रदेश के मालवा क्षेत्र के राजगढ़ में इनका जन्म हुआ था। इनके पिता का नाम शमशेर सिंह था और वे बहुत बड़े जमींदार थे। अजीजन बाई बचपन से ही रानी लक्ष्मीबाई की तरह रहना चाहती थीं और पुरुषों की तरह ही कपड़े पहनती थीं। वे हमेशा अपने साथ एक बंदूक भी रखती थीं।

अंजुला एक बार अपनी सहेली हरी देवी के साथ मेले से आ रही थीं तभी कुछ अंग्रेज सैनिकों ने इनकी सुंदरता के कारण इनका अपहरण कर लिया। जब इनके पिता शमशेर सिंह को इस बात का पता चला तो उन्होंने अंजुला और उसकी सहेली हरी देवी को छुड़ाने का काफी प्रयास किया। उन्होंने बहुत कोशिशें कीं, अंग्रेज अधिकारियों के पास जा-जाकर गुहार लगाई, पर अंग्रेजों ने अंजुला और हरी देवी को तो नहीं छोड़ा, बल्कि अंग्रेज सैनिकों की शिकायत करने के कारण उन्हें ही अपराधी बना दिया और उनकी जमीन-जायदाद पर कब्जा करके जमींदारी भी खत्म कर दी।

पुत्री और जमींदारी दोनों के चले जाने के कारण उन्हें गम बैठ गया और इसके

कारण उन्हें अपनी जान से भी हाथ धोना पड़ा। अंजुला को जब किसी तरह से कोई सहायता नहीं मिली तो एक दिन वह अपनी सहेली हरी देवी के साथ अंग्रेजों के चंगुल से निकल कर भाग गई, किंतु अंग्रेज सैनिकों ने इनका पीछा किया तो अपनी जान को बचाने की खातिर अंजुला और हरी देवी दोनों ने ही नदी में छलाँग लगा दी। नदी में छलाँग लगाने से हरी देवी की तो मौके पर ही मौत हो गई, किंतु

“अंजुला हिंदू थीं, पर अम्मीजान ने इनका धर्म परिवर्तन करा कर मुस्लिम बना लिया और वह अंजुला से अजीजन बाई बन गई। इन्होंने मजबूरी में अजीजन बाई बनकर तवायफ का काम तो शुरू कर दिया, परंतु यह दिल से बहुत उदार और दयालु थीं। इनको अपने वतन से बहुत ज्यादा प्यार था। ईश्वर ने इनको सुंदरता और नृत्य की कला का अद्‌भुत और बेमिसाल मिश्रण बख्शा था फिर वह तवायफ की सभी कलाओं में निपुण होकर, अपने बेपनाह हुनर से पूरे अवध की बहुत ही प्रसिद्ध तवायफ बन गई। यह नृत्य कला में इतनी माहिर थीं कि बाद में इनसे ही उमराव जान ने भी नृत्य करना सीखा था।”

अंजुला को एक मुस्लिम पहलवान ने बचा लिया। उसने अंजुला को वहाँ से कानपुर ले जाकर एक कोठे पर बेंच दिया। वह कोठा उस समय की बहुत मशहूर तवायफ अम्मीजान का था। अंजुला हिंदू थीं, पर अम्मीजान ने इनका धर्म परिवर्तन करा कर मुस्लिम बना लिया और वह अंजुला से अजीजन बाई बन गई। इन्होंने मजबूरी में अजीजन बाई बनकर तवायफ का काम तो शुरू कर दिया, परंतु वह दिल से बहुत उदार और दयालु थीं। इनको अपने वतन से बहुत ज्यादा प्यार था। ईश्वर ने इनको सुंदरता और नृत्य की कला का अद्‌भुत और बेमिसाल मिश्रण बख्शा था फिर वह तवायफ की सभी कलाओं में निपुण होकर, अपने बेपनाह हुनर से पूरे अवध की बहुत ही प्रसिद्ध तवायफ बन गई। यह नृत्य कला में इतनी माहिर थीं कि बाद में इनसे ही उमराव जान ने भी नृत्य करना सीखा था।

मस्तानी टोली

जब प्रथम स्वाधीनता के वक्त पूरे देश में क्रांति की लहर चल रही थी और उस समय हर कोई अपने देश को अंग्रेजों से आजाद कराने के लिए जी-जान से लगा हुआ था तब इन्होंने ‘मस्तानी टोली’ नाम से तवायफों की एक टोली बना ली जिसमें तवायफें अंग्रेजों की छावनी में जाती थीं, नृत्य करती थीं और वहाँ से सारी जानकारी हासिल करके ले आती थीं जिसे क्रांतिकारियों को पहुँचा देती थीं। एक बार शक के दायरे में आ जाने पर अंग्रेजों ने बहुत सारी औरतों और बच्चों को मार दिया था। उनकी हत्या का बदला लेने के लिए क्रांतिकारियों के साथ मिलकर अजीजन बाई और नारी सैनिकों की मस्तानी टोली ने बीबी घर में सुरक्षित बहुत सारी अंग्रेज औरतों व बच्चों को मारकर कुएँ में फेंक दिया था। जब इसकी भनक अंग्रेजों को लगी तो उन्होंने सभी तवायफों के मोहल्ले को सैनिक की टुकड़ी से घेर लिया और मस्तानी टोली की बहुत सारी तवायफों की हत्या कर दी थी। कई तवायफों को गिरफ्तार भी कर लिया था जिसमें अजीजन बाई भी शामिल थीं, लेकिन यहाँ से भी अजीजन बाई निकलने में सफल रहीं।

तात्या टोपे की मुखबिर

अंग्रेजों के चंगुल से निकलकर अजीजन बाई नाना साहब पेशवा के वकील अजीमुल्ला खाँ के पास पहुँची, तब उन्होंने ही अजीजन बाई

को पहली बार नाना साहब और तात्या टोपे से मिलवाया था। वे तात्या टोपे से बहुत ज्यादा प्रभावित थीं और उनका ही अनुसरण करती थीं। जब महाराजपुर की लड़ाई हुई थी तब अंजुला ने ही उनकी जान बचाई थी और उनकी वहाँ से निकलने में मदद की थी। अजीजन बाई से प्रभावित होकर तात्या टोपे ने इनको मुखबिर का काम सौंप दिया था। तात्या टोपे की इस मुखबिर से अंग्रेज सैनिक थर-थर काँपते थे। एक बार तात्या टोपे ने होली पर इनको नृत्य करने के लिए बिठूर बुलाया। वहाँ पर अजीजन बाई ने बहुत अच्छा नृत्य प्रस्तुत किया। इनका इतना अच्छा नृत्य देखकर तात्या ने इन्हें उपहार देना चाहा तो अजीजन बाई बोलीं, “अगर मुझे कुछ देना ही है तो मुझे सैनिक की वर्दी दे दो।”

इसके बाद 02 जून, 1867 को शमसुद्‌दीन खान ने अजीजन बाई से उनके घर जाकर मुलाकात की और उनको बताया कि बहुत जल्दी भारत से कंपनी का शासन खत्म हो जाएगा। यह सुनकर क्रांतिकारी अजीजन बाई का दिल कमल के फूल की तरह से खिल

गया था क्योंकि उनके अंदर देश को आजाद कराने की बहुत ज्यादा ललक थी। वे सच्ची देशभक्त और वीरांगना थीं।

नाना साहब ने अजीजन बाई को अपनी बहन बनाया

जब अजीजन बाई की पूरी कहानी नाना साहब ने सुनी तो उन्हें लगा कि अजीजन बाई एक कुलीन परिवार से हैं और उन्हें मजबूरी में नर्तकी बनकर तवायफ का पेशा अपनाना पड़ा है तो उन्होंने उसे अपनी बहन मान लिया। अजीजन बाई से राखी बँधवाई और उपहारस्वरूप उनको एक तलवार भेंट की। इसके बाद अजीजन बाई फिर से अपने मूलनाम 'अंजुला' के नाम से पहचानी जाने लगी थीं। अजीजन बाई ने इसके बाद ही अपनी मस्तानी टोली बनाई। उनकी सैनिक टुकड़ी में उस समय उनकी मस्तानी टोली में से कुल 25 सदस्य थीं, जो सभी तवायफें थीं।

बलिदान

जब प्रथम स्वतंत्रता संग्राम हुआ तब बिठूर में बहुत लंबे चले संघर्ष के दौरान कई क्रांतिकारी मारे गए। उस संघर्ष के दौरान अजीजन बाई भी थीं और वे पुरुष का वेश बनाकर जंगल में छुप गई थीं, लेकिन अंग्रेज सैनिकों ने उन्हें कुएँ पर पानी पीते समय उनके खुले बालों से उन्हें पहचान लिया कि सैनिक के वेश में पक्का यह अजीजन बाई ही हैं। लेकिन अजीजन बाई ने उन सभी अंग्रेज सैनिकों के साथ खूनी संघर्ष किया और सभी को मार गिराया। उसी समय एक गोली अजीजन बाई के कंधे पर लगी और उन्हें अंग्रेज अधिकारी ह्यूरोज के साथी सैनिकों ने गिरफ्तार कर लिया। उन्हें अंग्रेज अधिकारियों के सामने लाया गया। उनकी सुंदरता, नृत्य और आवाज से अंग्रेज बेहद प्रभावित थे इसलिए इनकी खूबसूरती और कला का सम्मान करते हुए इनको सलाह दी कि यदि वे स्वतंत्रता सेनानियों की योजनाओं के बारे में सब-कुछ बता देंगी या उन्होंने किस-किस को मदद पहुँचाई है, यह बताएँगी तो उन्हें माफी दे दी जाएगी और उनके सभी गुनाहों को माफ करके सम्मान के साथ शहर में रहने देंगे, लेकिन अंजुला (अजीजन बाइ) ने कोई भी जानकारी देने से साफ इनकार कर दिया और मुस्कुराते हुए कहा, "तुम लोग भले ही मेरी जुबान खींच लो, पर खूबसूरत गजलें गाने वाली यह जुबाँ उफ़्फ़ तक नहीं करेगी। तुम लोग भले ही मेरी खाल खींच लो, पर यह खूबसूरत जिस्म जिस पर जमाना आहें भरता है, उसकी मुझे जरा भी फिक्र नहीं होगी। भले ही तुम लोग मेरे टुकड़े-टुकड़े कर दो, हुनर की बेमिसाल गवाही देता हुआ मेरे शरीर का एक टुकड़ा भी शिकायत नहीं करेगा।"

इसके बाद शेरनी की तरह से हुंकार भरते हुए कहा कि वह जीते जी उन अंग्रेजों को कभी माफ नहीं करेगी क्योंकि तुम लोगों ने हमारे भारत पर और भारतवासियों पर बेइंतिहा जुल्म ढाए हैं। एक तवायफ से इस तरह के जवाबों को सुनकर अंग्रेज अधिकारियों ने गुस्से से तिलमिला कर अजीजन बाई को फौरन मार डालने का हुक्म अपने सैनिकों को दे दिया और देखते-ही-देखते अंग्रेज सैनिकों ने अजीजन बाई के शरीर को गोलियों से छलनी कर दिया। अजीजन बाई के द्वारा किए गए इस बलिदान को देश के इतिहास में हमेशा याद किया जाता रहेगा। उनकी देशभक्ति से अच्छे-अच्छे देशभक्त भी लज्जित हो सकते हैं, किंतु हमारा समाज उनके त्याग और बलिदान को स्वीकार करने को तैयार नहीं है। इसके बाद भी अजीजन बाई का स्थान नारी समाज में बहुत ही सम्मानजनक है और जब कभी भी वीरांगनाओं और क्रांतिकारियों की बात होगी तो उनका नाम कभी भुला नहीं सकते, उनकी शहादत और त्याग को हमेशा याद किया जाता रहेगा।

देश की आजादी में पहाड़िया जनजाति का योगदान

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास में पहाड़िया आंदोलन सिरे से गायब है। क्षेत्रीय स्तर पर जरूर हम शहीदों को याद कर लेते हैं, लेकिन व्यापक स्तर पर, राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में हमारे ये नायक हाशिए पर भी नहीं हैं। जबकि इतिहास उठाकर देखें तो अंग्रेजी सत्ता को झारखंड की धरती पर पग-पग पर संघर्ष करना पड़ा। फिर भी इन नायकों की राष्ट्रीय स्वीकृति नहीं मिल पाई है। इसका एक कारण तो यही रहा कि यह लंबे समय से बंगाल के साथ जुड़ा रहा। फिर बिहार के साथ रहा। सन् 2000 में जब बिहार से अलग होकर झारखंड ने अस्तित्व ग्रहण किया तो यहाँ के नायकों की नए सिरे से पहचान शुरू हुई। हालाँकि 20 साल बाद भी बहुत सुखद स्थिति नहीं है। जबकि आंदोलनों का इतिहास देखें तो झारखंड के आदिवासियों ने अंग्रेजी सत्ता को इतनी चुनौती दी कि बार-बार उन्हें समझौता करना पड़ा और कानून बनाकर आदिवासियों के अधिकारों की रक्षा भी सुनिश्चित करनी पड़ी। यह कम महत्वपूर्ण बात नहीं है।

इनमें से एक है पहाड़िया आंदोलन। झारखंड की यह सबसे प्राचीन जाति है। कहते हैं कि ये यहाँ के मूल निवासी हैं। झारखंड में इनके और असुर के आने का कोई इतिहास नहीं मिलता, जबकि मुंडा, उराँव का इतिहास दर्ज है कि वे कब झारखंड आए। पहाड़िया पहाड़ पर रहते हैं और आज भी बहुत उपेक्षित हैं, लेकिन राजनीतिक जागरूकता किसी से कम नहीं। साक्षरता दर भले ही कम हो, लेकिन सजगता और अपने अधिकार को लेकर चैतन्यता बहुत गहरी है। सत्ता चाहे जिसकी हो जल, जंगल, जमीन के हक के लिए इन्होंने काफी संघर्ष किया। जब 1765 में मुगल बादशाह शाह आलम द्वितीय ने अंग्रेजों को इस क्षेत्र की दीवानी सौंपी तो यहाँ काफी प्रतिरोध हुआ। इस फरमान के खिलाफ इन्होंने संघर्ष छेड़ दिया। करिया पुजहर एक ऐसे ही नायक थे, जिन्होंने अंग्रेजी सेना के खिलाफ युद्ध छेड़ दिया। लोगों का मानना है कि इनका जन्म 1723 ई. में हुआ था। करिया पुजहर, सरदार रमना अहाड़ी के प्रमुख सेनानी थे। इन्होंने 1772 ई. में साहिबगंज जिले के उधवा नाला में अंग्रेजों के साथ लोहा लिया था। इसमें अंग्रेजों को मुँह की खानी पड़ी थी। यहाँ करिया पुजहर जीत का विजयी पताका गाड़ने में सफल हुए थे। इनकी मृत्यु के बारे में कोई पुख्ता जानकारी नहीं मिलती है। कुछ लोगों का मानना है कि 1786 ई. में उन्हें अंतिम बार देखा गया था, वहीं कुछ का कहना है कि अंग्रेजी सेना ने गिरफ्तार कर लापता कर दिया था।

स्वतंत्रता सेनानी मोतीलाल केजरीवाल ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि संताल परगना के पहाड़िया जनजाति के लड़ने का तरीका अलग किस्म का था। पहाड़िया सेनानी गुरिल्ला युद्ध प्रणाली से अंग्रेजों से लड़ाई लड़ते थे। पहाड़िया अंग्रेजों को मार गिराते थे और पहाड़ पर भाग जाते थे। अंग्रेजों के लिए पहाड़ चढ़ना काफी मुश्किल होता था, लेकिन यह जनजाति इसकी अभ्यस्त थी। इसलिए 1766 में जब रमना अहाड़ी ने मुगल और कंपनी सेना के खिलाफ गुरिल्ला युद्ध छेड़ दिया तो वे तीर-धनुष से मुकाबला करते रहे। संघर्ष में वह घायल हो गए तो कंपनी की टुकड़ी ने गिरफ्तार कर उसे फाँसी पर लटका दिया, लेकिन उनकी

संजय कृष्ण

जन्म : जमानियाँ स्टेशन, गाजीपुर, उत्तर प्रदेश।

शिक्षा : स्नातकोत्तर।

संप्रति : 'दैनिक जागरण' समाचार पत्र में मुख्य उपसंपादक।

संपादन : 'जमदग्नि बीथिका' नामक पत्रिका (1997-2005)

लेखन एवं प्रकाशन : विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लेखन, एक दर्जन से अधिक कृतियाँ प्रकाशित।

पुरस्कार : केंद्रीय पर्यटन मंत्रालय की ओर से प्रथम राहुल सांकृत्यायन पर्यटन पुरस्कार।

संपर्क : मोबाइल– 9835710937

ईमेल– skrishnasanjay1973@gmail.com

शहादत बेकार नहीं गई। उन्होंने लोगों को जागरूक कर दिया था। पहाड़िया सरदारों को यह संदेश चला गया कि मुगल और कंपनी की सेना हमारे जल, जंगल, जमीन पर अधिकार करना चाहते हैं, जिसका हर स्तर पर विरोध किया जाएगा। ऐसा ही हुआ भी। उनके शहीद होने के बाद करिया पुजहर, चेंगरू संवरिया, डोम्बो पहाड़िया ने उधवा नाला के पास मुगल और अंग्रेजी सेना के शिविर पर धावा बोल दिया। अचानक हमने से मुगल और अंग्रेजी सेना कुछ समझ नहीं पाई। तब तक उसका काफी नुकसान हो चुका था। अंग्रेजी और मुगल सेना से यह आरंभिक लड़ाई थी। इसके बाद 1784 में तिलका माँझी ने अंग्रेजी सेना की चूलें हिला दीं। कुछ मानते हैं कि तिलका माँझी संताली थे, जबकि जिस समय तिलका माँझी पैदा हुए थे, उस क्षेत्र में संतालों का आगमन ही नहीं हुआ था। इसलिए, तिलका माँझी संताली नहीं, बल्कि पहाड़िया थे।

11 फरवरी, 1750 को जन्मे तिलका माँझी और उसके संगठन की अंग्रेजों से लोहा लेने में प्रमुख भूमिका रही। तिलका ने अंग्रेजी शासन की बर्बरता के जघन्य कामों के विरुद्ध जोरदार तरीके से आवाज उठाई थी। उन्होंने युवाओं की सैन्य टुकड़ी भी बनाई थी, जो तीर-धनुष चलाने में निपुण और गुरिल्ला युद्ध में माहिर थे। अंग्रेजों का जब अत्याचार बढ़ता गया तो तिलका ने आगे बढ़कर नेतृत्व सँभाला और युवाओं की टोली के साथ संघर्ष छेड़ दिया। जंगल तराई तथा गंगा नदी की घाटियों में तिलका माँझी अपनी सेना लेकर अंग्रेजी सरकार के सैनिक अफसरों के साथ लगातार संघर्ष करते रहे। बिहार के मुंगेर, भागलपुर और संताल परगना के पहाड़ी इलाकों में छिप-छिपकर वे लड़ते रहे। ब्रिटिश सरकार ने पहाड़िया विद्रोह को शांत करने के लिए क्लीवलैंड को भेजा। उसने कुछ सुधार और पहाड़िया सरदारों से समझौते भी किए, लेकिन वे पर्याप्त नहीं थे। इसलिए, कलेक्टर क्लीवलैंड एवं सर आयर कूट की सेना के साथ तिलका माँझी की कई स्थानों पर जमकर लड़ाई हुई। वे अंग्रेज सैनिकों से मुकाबला करते-करते भागलपुर की ओर बढ़ गए। वहीं से उनके सैनिक छिप-छिपकर अंग्रेजी सेना पर अस्त्र प्रहार करने लगे। समय पाकर तिलका माँझी एक ताड़ के पेड़ पर चढ़ गए। ठीक उसी समय घोड़े पर सवार क्लीवलैंड उस ओर आया। इसी समय राजमहल के सुपरिटेंडेंट क्लीवलैंड को तिलका ने 13 जनवरी, 1784 को अपने तीरों से मार गिराया। क्लीवलैंड की मृत्यु का समाचार पाकर अंग्रेजी सरकार डाँवाडोल हो उठी। सत्ताधारियों, सैनिकों और अफसरों में भय का वातावरण छा गया। इसके बाद अंग्रेजी सेना का एक ही काम रह गया था, किसी तरह तिलका की गिरफ्तारी। अंततः 1785 में तिलका माँझी को गिरफ्तार कर लिया गया और भागलपुर में फाँसी दे दी गई। जहाँ फाँसी दी गई, वहाँ चौक पर उसकी स्मृति में एक आदमकद प्रतिमा लगी है। तिलका का जीवन बड़ा मिथकीय भी रहा। 35 साल की उम्र में तिलका ने पहले-पहल झारखंड में आजादी की अलख जगाई थी। वह पहले सिपाही थे, जिन्होंने अंग्रेजी सत्ता को चुनौती दी। तिलका 'जबरा पहाड़िया' के नाम से भी जाने जाते हैं। उनकी बहादुरी देखकर अंग्रेजों ने एक रेजिमेंट बनाया था, जिसमें पहाड़िया युवा थे और नायक तिलका माँझी थे। लेकिन जब अंग्रेजों ने पहाड़िया जनजाति पर तरह-तरह के अत्याचार शुरू किए तो तिलका ने सेना से अलग होकर ब्रिटिश सत्ता के खिलाफ जंग शुरू कर दी। तिलका का बलिदान भी व्यर्थ नहीं गया। आंदोलन की गति जारी रही। 1782-98 में तमाड़ में मुंडाओं ने विद्रोह कर दिया। तमाड़ क्षेत्र में यह आंदोलन मुंडा-मानकी घटवार 1832 तक रह-रहकर चलाते रहे। 1831-32 में कोल विद्रोह ने अंग्रेजी सेना की चूलें हिला दीं। इसके पूर्व 1820 में सिंहभूम के इलाके में हो जनजातियों ने विद्रोह कर दिया। हो आदिवासी मुंडा ग्रुप के माने जाते हैं। 1832 में ही मानभूम और सिंहभूम के भूमिज आदिवासी भी अंग्रेजों के खिलाफ उठ खड़े हुए। इस तरह झारखंड के कई हिस्से समय-समय पर उबलते रहे। हर आदिवासी समुदाय ने अंग्रेजी सेना से लोहा लिया। 1895 से 1900 तक बिरसा मुंडा आंदोलन ने एक पहचान बनाई और अपनी सीमा को लाँघकर दूसरे लोगों को भी प्रेरित किया। झारखंड यानी छोटानागपुर और संताल परगना 1943 तक आंदोलित रहे। धरती धधकती रही।

अगस्त क्रांति और पहाड़िया जनजाति

बंबई के अधिवेशन में गांधी ने ब्रिटिश सरकार को अंतिम चेतावनी दे दी—भारत छोड़ो। पूरा खाका तैयार किया गया। यदि नेताओं की गिरफ्तारी हो जाती है तो जनता खुद अपना नेतृत्व करेगी और करो या मरो के साथ इस आंदोलन में अपनी आहुति देगी। जीवन भर अहिंसा का पालन करने वाले गांधी को लाठी उनके लिए सहारा थी, लेकिन अब लाठी अंग्रेजों को भगाने के लिए उठा ली थी। गांधी ने शायद कभी इस मंशा से लाठी थामी भी नहीं होगी, लेकिन अब सब्र सैलाब बनने को उतावला था। उधर, सुभाष चंद्र बोस भी ज्वाला भड़का रहे थे और दुनिया द्वितीय विश्वयुद्ध से जूझ रही थी। इस तरह वातावरण अंग्रेजी सत्ता के खिलाफ था। बंबई अधिवेशन से जैसे ही गांधी का संदेश देश के कोने-कोने में पहुँचा, जनता सड़कों पर उतर आई थी। बड़े नेता जेलों में ठूँस दिए गए थे। छोटानागपुर के हजारीबाग का सेंट्रल जेल भी देश के बड़े-छोटे नेताओं से भर गया था। राँची के पठार, संताल परगना का पूरा क्षेत्र ही धधक उठा। राँची के पठार पर सर्वाधिक कुर्बानी टाना भगतों ने दी और संताल में पहाड़िया जनजाति ने। लंबे समय से पहाड़िया जनजाति पर काम करने वाले डॉ. दिनेश नारायण वर्मा मानते हैं कि "देश की आजादी में पहाड़िया जनजाति ने सक्रिय भूमिका निभाई, लेकिन इतिहास में वे उपेक्षित हैं। उनका मूल्यांकन ठीक से नहीं किया गया। इस जनजाति के अधिकांश स्वतंत्रता सेनानी विस्मृत हो चुके हैं।"

पहाड़िया सामाजिक कार्यकर्ता शिवलाल माँझी ने बड़ा काम किया। उन्होंने भारत छोड़ो आंदोलन (1942-1943) में भाग लेने वाले पहाड़िया स्वतंत्रता सेनानियों की खोज की थी और उनका विवरण तैयार किया था। इसके लिए उन्होंने गाँव-गाँव भ्रमण किया और सूची तैयार की। 12 अगस्त, 1992 को मधुमेह की बीमारी से उनका निधन हो गया और उनका काम अधूरा ही रहा है। इसलिए, जो काम किया, वह भी प्रकाशित नहीं हो सका। उन्होंने जो सूची तैयार की थी, उसमें 42 लोगों का उल्लेख किया था–

1. जामा सरदार पहाड़िया–डांगापाड़ा सुंदर पहाड़ी, गोड्डा
2. छोटा धरमा पहाड़िया–डांगापाड़ा सुंदर पहाड़ी, गोड्डा
3. बुधन पहाड़िया–डांगापाड़ा सुंदर पहाड़ी, गोड्डा
4. सोनिया पहाड़िया–डांगापाड़ा सुंदर पहाड़ी, गोड्डा
5. हरिया पहाड़िया–डांगापाड़ा सुंदर पहाड़ी, गोड्डा
6. महादेव पहाड़िया–डांगापाड़ा सुंदर पहाड़ी, गोड्डा
7. विजय पहाड़िया–डांगापाड़ा सुंदर पहाड़ी, गोड्डा
8. उल्ला पहाड़िया–डांगापाड़ा सुंदर पहाड़ी, गोड्डा
9. गान्दे पहाड़िया–डांगापाड़ा सुंदर पहाड़ी, गोड्डा
10. राम पहाड़िया मालीपाड़ा–डांगापाड़ा सुंदर पहाड़ी, गोड्डा
11. सीता पहाड़िया–डांगापाड़ा सुंदर पहाड़ी, गोड्डा
12. बीरू पहाड़िया–डांगापाड़ा सुंदर पहाड़ी, गोड्डा
13. सीता पहाड़िया–सिंगारसी अमड़ापाड़ा, पाकुड़
14. राम पहाड़िया–सिंगारसी अमड़ापाड़ा, पाकुड़
15. उला पहाड़िया–पाकरीकुटा
16. छोटा उला पहाड़िया–पाकरीकुटा
17. सामू पहाड़िया–कटहलडीह
18. धरमा पहाड़िया–तेलोपाड़ा, बोकड़ाबाँध, गेड्डा
19. छोटा धरमा पहाड़िया गोराडीह–चपरीभिटा (शहीद), बोकड़ाबाँध, गोड्डा
20. काष्तक पहाड़िया–सिंदरीजोला (शहीद), बोकड़ाबाँध,गेड्डा
21. डोमन माल पहाड़िया–सिंगारसी (शहीद), अमड़ापाड़ा, पाकुड़
22. धरमा कुमार पहाड़िया–तेलोपाड़ा, बोकड़ाबाँध, गेड्डा
23. बड़ा धरमा पहाड़िया–तेलोपाड़ा (शहीद), बोकड़ाबाँध, गेड्डा
24. बड़ा मंगरू पहाड़िया–नतुनडीह, मसलिया, दुमका
25. छोटा मंगरू पहाड़िया–हरिपुर, मसलिया, दुमका
26. इन्द्रदेव माल पहाड़िया–हरिपुर, मसलिया, दुमका
27. महान सिंह पहाड़िया–बुधुडीह, रानेश्वर, दुमका
28. मटरू पहाड़िया–गुवासोल, मसलिया, दुमका
29. किनु माँझी–हरिपुर,मसलिया, दुमका
30. दनु माँझी–सिंहलीबोना पहाड़, मसलिया, दुमका
31. नीम चाँद पहाड़िया–गायबथान, जामा, दुमका
32. लोधका पहाड़िया–चापडीरढ़ाब, मसलिया, दुमका
33. बिरूवा पहाड़िन–चापडीरढ़ाब, मसलिया, दुमका
34. सोनुआ माँझी–गोलपुर,चापडीरढ़ाब, मसलिया, दुमका
35. दीनू गृही–बुधुडीह, रानेश्वर, दुमका
36. लागू गृही–बुधुडीह, रानेश्वर, दुमका
37. अकलू माँझी–बुधुडीह, रानेश्वर, दुमका
38. सोनु माँझी–तेरमा पहाड़ी, आसनबनी
39. तनु सिंह–तेरमा पहाड़ी, आसनबनी
40. जगु सिंह–तेरमा पहाड़ी, आसनबनी
41. केन्दुआ–देहरी गोडरो, रामगढ़
42. जगुलिया पहाड़िया–युबदाहा, मसलिया, दुमका

स्वतंत्रता सेनानी मोतीलाल केजरीवाल की कृति '42 की क्रांति में संथाल परगना' में गंगा सिंह पहाड़िया (देव पहाड़, बोरियो), बाबूसिंह पहाड़िया (देव पहाड़, बोरियो), कार्तिक गृही (सिंदरीजोला, गोड्डा), बड़ा धरमा पहाड़िया (तेलोपाड़ा, बोकड़ाबाँध, गेड्डा), छोटा धरमा पहाड़िया (चपरीभिटा, बोकड़ाबाँध, गोड्डा), जैमिनी पहाड़िया (पथरगामा), बादल माल पहाड़िया (पहाड़पुर, बोकड़ाबाँध, गोड्डा), डोमन पहाड़िया (सिन्दरीजोला, बोकड़ाबाँध, गोड्डा), विद्यार्थी सिंहाई माल पहाड़िया (जासूस), बबुआ सिंह पहाड़िया, भैंसा सिंह पहाड़िया आदि का उल्लेख है और कुछ पहाड़िया स्वतंत्रता सेनानियों को शहीद भी बताया गया है।

शिवलाल माँझी और मोतीलाल केजरीवाल की सूची से जाहिर है कि काफी संख्या में पहाड़िया जनजाति समुदाय ने 42 की क्रांति में भाग लिया था। 09 अगस्त के बाद से ही संताल में क्रांति की मशाल जल उठी थी। हर जाति-समुदाय के लोग सड़क पर थे। देवघर, दुमका, गोड्डा, रोहिणी आदि इलाके लगातार उबलते रहे। रेल, डाकघर, शराब की दुकानों पर धावा बोला गया। तिरंगा लहराया गया। देवघर के बड़े डाकघर में आग लगाने में एक छात्रा शामिल थी, जिसे जेल के अलावा बेंत की सजा दी गई थी। इस फूँक-फाँक दल में संस्कृत विद्यालय गुरुकुल और गोवर्धन–साहित्य विद्यालय के विद्यार्थी भी पीछे नहीं थे। दुमका का भी यही हाल था। आदिवासी-गैर आदिवासी दोनों समुदाय सड़क पर उतरकर तोड़-फोड़ करना, सरकारी भवनों को आग के हवाले करना और रेल की पटरियाँ उखाड़ना, डाकघरों को नष्ट करना प्रमुख कार्य था। पर दुर्भाग्य यह रहा कि बहुत से क्रांतिकारियों का बलिदान भुला दिया गया। हम जब आजादी का अमृत महोत्सव मना रहे हैं तो ऐसे गुमनाम लड़ाकों को याद जरूर करना चाहिए। मोतीलाल केजरीवाल की पुस्तक भी दुर्लभ हो गई है। इनकी प्राप्ति और प्रकाशन की व्यवस्था हो तो कुछ और क्रांतिकारियों के नाम-गाँव का पता चले। गाँव-गाँव अब भी लोग अपने क्रांतिकारियों को भूले नहीं, लेकिन उनकी खोज जरूरी है। देश की लड़ाई में अपना सर्वस्व होम करने वाले पहाड़िया देश के पहले आदिवासी हैं, जिन्होंने अंग्रेजी सत्ता से सीधे-सीधे लड़ाई लड़ी, पर ये गुमनाम ही रहे। वैसे तो झारखंड ही उपेक्षित है। यहाँ समय-समय पर तरह-तरह के आंदोलन हुए, जिनकी चर्चा नहीं होती। यहाँ कुछ ऐसे आंदोलन हुए, जिनकी शुरुआत तो धार्मिक सुधारों से हुई, लेकिन बाद में वे क्रांतिकारी आंदोलन में परिवर्तित हो गए। इनका भी अध्ययन होना चाहिए।

सिंहगढ़ के लिए तानाजी मालुसरे का बलिदान

यद्यपि शिवाजी का जन्म फरवरी 1627 में शिवनेरी के किले में हुआ था, लेकिन शिवाजी के जीवन में रायगढ़ का किला अधिक महत्वपूर्ण स्थान रखता है और इसका कारण यह है कि रायगढ़ के इस किले में सन् 1674 में न केवल शिवाजी का राज्याभिषेक हुआ था, अपितु सन् 1680 में यहीं पर उनका देहावसान भी हुआ था। यहीं शिवाजी की समाधि बनी हुई है। रायगढ़ किले की तलहटी में पाचाड़ गाँव में माता जीजाबाई की समाधि भी बनी है। शिवनेरी और रायगढ़ के किलों के बाद जो किला कई कारणों से चर्चित रहा, वह है सिंहगढ़ का किला। रायगढ़ के किले को पहले 'कोंढाणा दुर्ग' के नाम से जाना जाता था।

सीताराम गुप्ता

जन्म : 06 जुलाई, 1954, दिल्ली।

शिक्षा : हिंदी भाषा के अतिरिक्त रूसी, उर्दू, फारसी व अरबी भाषाओं का भी अध्ययन। टेलिविजन प्रजेंटेशन में डिप्लोमा।

प्रकाशन/कृति : कविता-संग्रह 'मेटामॉफोसिस' तथा 'मन की शक्ति' द्वारा उपचार विषयक पुस्तक 'मन द्वारा उपचार' फुल सर्कल द्वारा प्रकाशित। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में साहित्य तथा भाषा विषयक लेख, व्यंग्य, कथा-साहित्य आदि प्रकाशित।

संपर्क : मोबाइल– 9555622323

ईमेल– srgupta54@yahoo.co.in

कोंढाणा दुर्ग के सिंहगढ़ में बदलने की कहानी भी अत्यंत शौर्यपूर्ण है। पुणे के बिलकुल पास स्थित कोंढाणा दुर्ग पर विजय पाने के लिए शिवाजी के एक बहादुर सरदार तानाजी मालुसरे ने अदम्य साहस और शौर्य का प्रदर्शन किया, लेकिन इस विजय अभियान में तानाजी स्वयं भी शहीद हो गए। शिवाजी को जब दुर्ग पर विजय के साथ-साथ तानाजी की मृत्यु का समाचार भी मिला तो वे दुख से भर उठे और कहा, "गढ़ आया पर सिंह चला गया।" तभी से किले का नाम 'सिंहगढ़' पड़ गया। यहीं सिंहगढ़ में तानाजी मालुसरे की समाधि बनाई गई। शिवाजी के पुत्र राजाराम की समाधि भी सिंहगढ़ में ही है।

अपने पुणे प्रवास के दौरान एक दिन कोंढाणा अथवा सिंहगढ़ जाने का कार्यक्रम बनाया। सिंहगढ़ पुणे शहर के बिलकुल पास ही है। पुणे में हम कात्रज के पास ठहरे हुए थे। वहाँ से तो सिंहगढ़ और भी पास पड़ता है। कात्रज-मुंबई हाईवे पर मुंबई की ओर जाने पर 'वडगाँव शेरी' नामक स्थान आता है। यहाँ से बायीं ओर आगे बढ़ने पर खड़कवासला आता है और खड़कवासला के बाद सिंहगढ़ पहुँच जाते हैं। यह खड़कवासला वही है जहाँ देश का प्रतिष्ठित सैन्य संस्थान 'राष्ट्रीय रक्षा अकादमी' स्थित है। इसके पास ही कई अन्य प्रतिष्ठित सैन्य प्रतिष्ठान भी यहाँ पर हैं। यहाँ से थोड़ी दूरी पर पानशेत में तानाजी सागर बाँध भी है जिसका मार्ग अत्यंत मनोरम है।

सिंहगढ़ पुणे शहर से कोई 20-25 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यह एक पर्वतीय दुर्ग है जो काफी ऊँचाई पर स्थित है, लेकिन किले के पास तक पक्की सड़क है। संयोग से जिस दिन हम सिंहगढ़ पहुँचे। उस दिन सड़क की मरम्मत के कारण ऊपर जाने वाला रास्ता बंद था। हमने वैकल्पिक रास्तों के बारे में पता किया तो पता चला कि ऊपर जाने का अन्य कोई रास्ता नहीं था।

हाँ, पैदल जाने का एक रास्ता अवश्य था। मेरा पुत्र डॉ. अमित मेरे साथ था। अमित को पुणे शहर बहुत पसंद था और वह पुणे शहर और आस-पास के क्षेत्रों के चप्पे-चप्पे से परिचित था। मैं जब भी पुणे

> **तानाजी अपने सैनिकों के साथ आधी रात को किले के पास पहुँचे। तानाजी के सैनिकों ने रस्सी से बँधी गोह को किले की दीवार पर फेंका। गोह छिपकली की प्रजाति का एक बड़ा जीव है जो छिपकली की तरह ही खड़ी दीवार पर चल-फिर सकता है और अपने पंजों की सहायता से दीवार को जकड़ लेता है।**

जाता था तो हम दोनों सुबह ही घूमने निकल पड़ते थे। अमित ने ही मुझे पूरे शहर और यहाँ की संस्कृति से परिचित करवाया।

हमने ट्रेकिंग के द्वारा ऊपर जाने का फैसला किया। पास ही के एक गाँव, अतकर गाँव से यह ट्रेकिंग प्रारंभ होती है। दूरी के बारे में पूछने पर पता चला कि यही कोई चार किलोमीटर की दूरी होगी। हमने ट्रेकिंग प्रारंभ की। रास्ता बहुत ही ऊबड़-खाबड़ था। चट्टानें कम, मिट्टी ज्यादा थी। कई स्थानों पर एकदम खड़ी चढ़ाई थी। लगभग डेढ़-दो किलोमीटर जाने के बाद शेष दूरी का पता किया तो पता चला कि अभी तो चार-पाँच किलामीटर और है। धूप तेज थी और गरमी भी बढ़ती जा रही थी। इस स्थिति के लिए तैयार होकर भी नहीं आए थे, लेकिन फिर भी ऊपर जाने का ही फैसला किया। लगभग चार-पाँच किलोमीटर ऊपर जाने पर पता चला कि अभी तो इतना ही रास्ता और बाकी है जितना तय कर चुके हैं। गनीमत थी कि रास्ते में कुछ स्थानों पर गन्ने का रस या नींबू-पानी मिल रहा था। किसी तरह हिम्मत करके ऊपर तक पहुँच गए। यह दूरी सात-आठ किलोमीटर से किसी भी तरह कम न होगी।

समुद्र-तल से 1380 मीटर की ऊँचाई पर स्थित सिंहगढ़, पुणे शहर के दक्षिण-पश्चिम में सह्याद्रि पर्वतमाला की एक शाखा भूलेश्वर पहाड़ी की एक अलग चट्टान पर निर्मित है। सिंहगढ़ एक त्रिभुजाकार किला है जो खड़ी प्राकृतिक ढलानों के कारण सुरक्षित व अभेद्य माना जाता है। किले के दो मुख्य दरवाजे हैं : दक्षिण-पूर्व में कल्याण दरवाजा तथा उत्तर-पूर्व में पुणे दरवाजा। किले के नाम पर अब वहाँ पर कुछ भी शेष नहीं है सिवाय प्रवेश द्वारों और भग्न बाहरी दीवारों के। किले का ऊपरी हिस्सा काफी ऊँचा-नीचा और ऊबड़-खाबड़ है जहाँ केवल पुरानी इमारतों के कुछ भग्नावशेष देखे जा सकते हैं। किले के नाम पर कुछ भी दर्शनीय नहीं है।

वैसे सिंहगढ़ का इतिहास भी काफी पुराना है। सन् 1328 में मुहम्मद बिन तुगलक ने यहाँ के कोली सरदार—नाग नाइक को हराकर इस दुर्ग पर अधिकार कर लिया था। लगभग तीन सौ साल बाद शिवाजी ने यहाँ के किलेदार को रिश्वत देकर इसे अपने अधिकार में ले लिया था, लेकिन बाद में सन् 1665 में पुरंदर की संधि के अंतर्गत शिवाजी को यह किला मुगलों को देना पड़ा। शिवाजी की माता जीजाबाई को इस किले के जाने का बड़ा दुख था। उन्होंने अपने इस दुख को शिवाजी के सामने व्यक्त किया। संयोग से तभी शिवाजी के एक बहादुर सरदार और उनके मित्र तानाजी मालुसरे अपने पुत्रों के विवाह का निमंत्रण लेकर वहाँ आ पहुँचे। माता जीजाबाई ने तानाजी के सामने भी अपनी पीड़ा और किले को वापस प्राप्त करने की इच्छा व्यक्त की। कहा जाता है कि माता जीजाबाई ने कहा कि जब तक सिंहगढ़ पर हमारा पुनः आधिपत्य नहीं हो जाता, वे अन्न-जल ग्रहण नहीं करेंगी।

तानाजी मालुसरे ने जब यह सुना तो उन्होंने अपने पुत्रों का विवाह स्थगित कर दिया और उसी रात अपने बहादुर सैनिकों के साथ सिंहगढ़ की ओर कूच कर दिया। तानाजी अपने सैनिकों के साथ आधी रात को किले के पास पहुँचे। तानाजी के सैनिकों ने रस्सी से बँधी गोह को किले की दीवार पर फेंका। 'गोह' छिपकली की प्रजाति का एक बड़ा जीव है जो छिपकली की तरह ही खड़ी दीवार पर चल-फिर सकता है और अपने पंजों की सहायता से दीवार को जकड़ लेता है। शिवाजी के सैनिक दुश्मन के किलों में घुसने के लिए दीवारों पर चढ़ने के लिए इन जीवों का इस्तेमाल करते थे। रस्सी से बँधी गोह को किले की दीवार पर फेंकने के बाद सैनिक रस्सी के सहारे किले के ऊपर चढ़ने लगे, लेकिन कुछ सैनिक और तानाजी ही ऊपर चढ़ पाए थे कि रस्सी टूट गई। शेष सैनिक अपने मित्र सैनिकों द्वारा किले का मुख्य द्वार खोले जाने की प्रतीक्षा करने लगे।

मराठा सैनिकों के पहुँचते ही किले में खलबली मच गई। मुगल सैनिक जब तक सँभल पाते मराठा सैनिकों ने अधिकांश को मौत के घाट उतार दिया। जब इस आक्रमण की सूचना किले के रक्षक वीरभान को मिली तो वह स्वयं तलवार लेकर मैदान में आ गया और तानाजी से भिड़ गया। वीरभान भी एक महान योद्धा था। दोनों के बीच घमासान युद्ध हुआ। युद्ध में यद्यपि वीरभान घायल होकर गिर पड़ा, लेकिन तानाजी भी बच नहीं पाए और शहीद हो गए। यह देखकर मराठा सैनिकों में निराशा छा गई और वे इधर-उधर भागने लगे। तभी तानाजी के भाई सूर्याजी सामने आ गए और उन्होंने मराठा सैनिकों में पुनः जोश भर दिया। एक बार फिर डटकर युद्ध हुआ और इसी बीच किले का द्वार खोल दिया गया। शेष मराठा सैनिकों के अंदर आ जाने से अधिकतर मुगल सैनिक मारे गए और कुछ जान बचाकर भाग गए।

सिंहगढ़ पुनः मराठा सैनिकों के कब्जे में आ गया और माता जीजाबाई की इच्छा पूर्ण हुई, लेकिन जब शिवाजी को दुर्ग पर विजय के साथ-साथ तानाजी की मृत्यु का समाचार मिला तो वे दुख से भर उठे। उन्होंने इतना ही कहा, "गढ़ आया पर सिंह चला गया।" शिवाजी के बाद यह किला पेशवाओं के आधिपत्य में रहा, लेकिन सन् 1818 में अंग्रेजों ने इसे पेशवा से छीन लिया और अपने कब्जे में ले लिया। उसी समय बमबारी में इसकी लगभग सभी इमारतें ध्वस्त हो गई थीं। आज जो भी अवशेष बचे हैं, वही सिंहगढ़ के उत्थान-पतन की कहानी सुनाते प्रतीत होते हैं।

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में बंगाल के हिंदी पत्र-पत्रिकाओं की भूमिका

आधुनिक भारत के निर्माण में बंगाल की केंद्रीय भूमिका निर्विवाद है। स्वतंत्रता संग्राम का बीजारोपण और उसको पुष्पित-पल्लवित करने में बंगाल की भूमिका क्या रही होगी? इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि भारत में किसी भी भाषा में प्रकाशित होने वाला पहला समाचार पत्र 'बंगाल गज़ट' (अंग्रेजी भाषा) 1780 ई., 'संवाद कौमुदी' (बांग्ला भाषा) 1821 ई., 'मिरात उल अकबर' (फारसी भाषा) 1812 ई. तथा हिंदी भाषा का प्रथम पत्र 'उदंत मार्तंड' 1826 ई. में यहीं से प्रकाशित हुआ था।

स्वतंत्रता आंदोलन की पृष्ठभूमि में 1857 की क्रांति की केंद्रीय भूमिका मानकर अन्य कारणों से मुँह मोड़ लिया जाता है; लेकिन क्रांति की लौ जलाने, लोगों की वैचारिकी को संपुष्ट करने तथा तत्कालीन बुद्धिजीवी वर्ग को तैयार करने में पत्रकारिता की प्रमुख भूमिका रही है, यह निर्विवाद है।

संविधानसम्मत विधायिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका अपने-अपने दायित्वों के प्रति निष्ठावान हैं; परंतु आम जनता के अधिकारों की उपेक्षा होते ही जनसंचार माध्यम इन संस्थाओं को आईना दिखाने के लिए तत्पर रहता है; क्योंकि "मीडिया लोकतंत्र की आत्मा एवं राजनीतिक और सामाजिक संवाद का प्राणतत्व है। निश्चित रूप से गुलाम भारत में जब विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका अंग्रेजी-तंत्र के अधीन था, ऐसे समय में तत्कालीन समाज की वैचारिकी निर्मित करने में जनसंचार माध्यम का क्या योगदान रहा होगा, इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। मद्रास के तत्कालीन गवर्नर टॉमस मुनरो ने प्रेस की आजादी को अंग्रेजी सत्ता की समाप्ति का पर्याय माना था। विदेशी शासन और समाचार पत्रों की स्वतंत्रता दोनों एक साथ नहीं चल सकते। स्वतंत्र प्रेस का पहला कर्तव्य क्या होगा? यही न कि देश को विदेशी चंगुल से स्वतंत्र कराया जाए।"

हिंदी के पहले पत्र 'हिंदुस्तानियों के हित के हेतु' (परावलंबन से मुक्ति दिलाकर स्वतंत्र दृष्टि प्रदान करने के निमित्त) की इस घोषणा से स्पष्ट है कि देश को पराधीनता की बेड़ियों से मुक्त कराने के लिए वैचारिक स्तर पर बुद्धिजीवी वर्ग कितना तत्पर था। इन्हीं बुद्धिजीवियों में एक राजा राममोहन राय ने भारत की प्राचीनतम शक्तियों का यूरोप की नवीनतम सिद्धांतों के साथ सामंजस्य का रास्ता दिखाया। राजा राममोहन राय द्वारा वेदांत कॉलेज, आत्मीय सभा, कलकत्ता यूनिटेरियन सोसाइटी, ब्रह्म समाज की स्थापना एवं ईसाईयत के समकक्ष हिंदुत्व को

डॉ. मनोज कुमार सिंह

जन्म : 14 अप्रैल, 1978; रानीगंज, पश्चिम बंगाल।

लेखन : पुस्तक : स्त्री-विमर्श : जैनेन्द्र, यशपाल एवं समकालीन महिला रचनाकारों की दृष्टि; सारस्वत प्रकाशन, बिहार।

संपादन : 'शंखनाद' मासिक पत्रिका परामर्श समिति के सदस्य; जैनेन्द्र कुमार : विविध वातायनों में, पंकज पुस्तक मंदिर, दिल्ली।

संपर्क : मोबाइल– 9434332256
ईमेल– manojs794@gmail.com

खड़ा करने के ऐतिहासिक प्रयासों से बंगाल की चेतना में बहुत बड़ा बदलाव आना शुरू हो गया। राममोहन राय के इस योगदान की सराहना करते हुए लेखिका मिस कॉलेट ने लिखा है कि "इतिहास में राममोहन का स्थान उस महासेतु के समान है, जिस पर चढ़कर भारतवर्ष अपने अतीत से अज्ञात भविष्य में प्रवेश करता है।"

महर्षि देवेंद्रनाथ टैगोर, केशवचंद्र सेन, महर्षि दयानंद सरस्वती और थियोसोफिस्ट ने जिस सत्य को आम जनता के सामने रखा, उसे परमहंस रामकृष्ण ने जीवन में साकार कर भारतवासियों के चक्षुद्वार खोल दिए। आगे चलकर इन्हीं के प्रिय शिष्य स्वामी विवेकानंद ने कर्मठ वेदांत का सिद्धांत दिया। नेताजी सुभाषचंद्र बोस ने कहा था कि "स्वामी विवेकानंद का धर्म राष्ट्रीयता को उत्तेजना देने वाला धर्म था। नई पीढ़ी के लोगों में उन्होंने भारत के प्रति भक्ति जगाई। उसके अतीत के प्रति गौरव एवं उसके भविष्य के प्रति आस्था उत्पन्न की।" शिकागो सम्मेलन में दिए गए अद्‌भुत वक्तव्य से यूरोप में भी भारतीय धर्म, संस्कृति के प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो गई। कई बुद्धिजीवी जो भारतीय संस्कृति और हिंदू धर्म को लेकर ग्लानिबोध से ग्रसित थे, वह भी स्थिर होकर राष्ट्रीयता की ओर मुड़ गए। इस प्रकार विचारकों, चिंतकों की नई दृष्टि, नई अर्थव्यवस्था और नवीन शिक्षा-पद्धति के समन्वय से ऐसी चेतना का आविर्भाव हुआ, जिससे प्रबुद्ध जन के साथ-साथ आम जनता धर्म, संस्कृति और राष्ट्रीय सरोकारों से जुड़ती चली गई।

"नेताजी सुभाषचंद्र बोस ने कहा था कि "स्वामी विवेकानंद का धर्म राष्ट्रीयता को उत्तेजना देने वाला धर्म था। नई पीढ़ी के लोगों में उन्होंने भारत के प्रति भक्ति जगाई। उसके अतीत के प्रति गौरव एवं उसके भविष्य के प्रति आस्था उत्पन्न की।" शिकागो सम्मेलन में दिए गए अद्‌भुत वक्तव्य से यूरोप में भी भारतीय धर्म, संस्कृति के प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो गई। कई बुद्धिजीवी जो भारतीय संस्कृति और हिंदू धर्म को लेकर ग्लानिबोध से ग्रसित थे, वह भी स्थिर होकर राष्ट्रीयता की ओर मुड़ गए।"

यही वैचारिक पृष्ठभूमि भारतीय पत्रकारिता की नींव बनी। द्वारकानाथ टैगोर, राममोहन राय जैसे प्रगतिशील व्यक्तित्व ने 1830 ई. में 'बंगदूत' की नींव डाली। इसी दौरान 1826 ई. में पहला हिंदी समाचार पत्र 'उदंत मार्तंड', 1834 ई. में 'प्रजामित्र' तथा 1854 ई. में हिंदी का दैनिक समाचार पत्र 'समाचार सुधावर्षण' श्यामसुंदर सेन के संपादन में कलकत्ता से ही प्रकाशित हुआ। इन पत्रों की विशेष भूमिका यह रही कि इसमें ब्रिटिश शासन के अत्याचारों के विरुद्ध जो स्वर उभरकर सामने आया, उससे राष्ट्रीयता की भावना को बढ़ाने में सहायता मिली। ब्रिटिश शासन ने प्रेस की आजादी पर अंकुश लगा दिया। राममोहन राय ने इसके विरुद्ध कलकत्ता उच्च न्यायालय में अपील की जो कि राजनीतिक अधिकारों के प्रति कानूनी संघर्ष का प्रारंभिक चरण था। प्रेस के स्वतंत्रता संबंधी नियम टूटते-बनते रहे, किंतु समाचार पत्र राष्ट्रीय जागरण का प्रमुख विकल्प बनकर उभरे। भारतेंदु काल में शायद ही कोई साहित्यकार था, जो किसी पत्र या पत्रिका से नहीं जुड़ा हुआ था। अंग्रेजी शासन व्यवस्था इन समाचार पत्रों से इतनी भयभीत थी कि संपादकों पर तरह-तरह के अमानवीय अत्याचार किए जाने लगे।

'उदंत मार्तंड' के संपादक पंडित जुगलकिशोर ने ब्रजमिश्रित खड़ी बोली का प्रयोग किया, ताकि अंग्रेजी शासन को भनक न लगे और आम जनता तक क्रांतिकारी विचारों को पहुँचाया जा सके। पंडित युगलकिशोर शुक्ल ने पत्र प्रकाशन के उद्‌देश्य के संबंध में कहा है, "यह उदंत मार्तंड अब पहले-पहल हिंदुस्तानियों के हित के हेतु जो आज तक किसी ने नहीं चलाया, पर अंग्रेजी ओ फारसी को बंगले में जो समाचार का कागज छपता है, उसका सुख उन बोलियों को जानने और पढ़ने वालों को ही होता है और सब लोग पराये सुख से सुखी होते हैं, जैसे पराए धन से धनी होना और अपनी रहते, पराई आँख देखना।"

सन् 1850 में पंडित युगलकिशोर ने कलकत्ता से 'साम्यदंत मार्तंड' का प्रकाशन किया था। कलकत्ता से प्रकाशित होने वाला सबसे लोकप्रिय पत्र 'भारत मित्र' 1878 में पंडित छोटूलाल मिश्र तथा पंडित दुर्गा प्रसाद मिश्र के संपादन में निकाला गया। इस पत्र में समाचार पत्रों के महत्व को बताते हुए यह लिखा गया कि "समाचार पत्रों से जो उपकार होता है, वह मुंबई और बंगाल को देखने से साफ जान पड़ेगा; क्योंकि जब तक जिस देश में, जिस भाषा में और जिस समाज में समाचार पत्र का चलन नहीं है तब तक उसकी आशा, निराशामात्र है।" बालमुकुंद गुप्त ने भी इसका संपादन किया। स्वदेशी वस्तुओं के उत्पादन और उसके उपयोग का यह पत्र हिमायती था।

13 जनवरी, 1879 को कलकत्ता से निकलने वाले एक और तेजस्वी पत्र 'सारसुधानिधि' का मुख्य विचार था कि "भारतीयों में प्रगतिशीलता का अभाव क्यों है? प्रथम, मुसलमानों का अत्याचार। दूसरे वर्तमान शासनकर्ताओं के चित्त में नेता भाव का अहंकार दृढ़ अधिकार करे हुए है। तीसरे, वर्तमान शासन प्रणाली जो कि अभी कई अंशों में काले-गोरे के भेद से कलुषित हो रही है। चौथे, उच्च शिक्षा का अभाव। पाँचवें, मातृभाषा की अवनति। छठे, समाचार पत्रों की न्यूनता।"

सन् 1880 में प्रकाशित होने वाला पत्र 'उचितवक्ता' में राजनीतिक चेतना की बातें बड़ी निर्भीकता के साथ रखी जाती थीं "भारतवर्ष का अंग्रेज राजपुरुषों ने शोषण कर लिया है । इसे ऐसा दुहा कि यह अब अस्थि-चर्म विशिष्ट हो गई है, इसके शरीर में रक्त-मांस लेशमात्र भी नहीं रहा।"

हिंदी में सबसे पहला राजनीतिक पत्र निकालने का श्रेय अंबिका प्रसाद बाजपेयी को प्राप्त है। 1907 ई. में उन्होंने कलकत्ता से 'नृसिंह' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन किया। अधर्म, अन्याय को समाप्त कर स्वराज्य की स्थापना के लिए 'नृसिंह' ने लिखा, "स्वराज्य की आवश्यकता भारतवासियों को इसलिए है कि विदेशी सरकार

उनके अभाव-अभियोगों को समझने में असमर्थ है। यदि आज यहाँ स्वराज्य होता, तो लाखों हिंदुस्तानी दुर्भिक्ष के कारण दाने-दाने को तरसकर प्राण न गँवाते।"

सन् 1914 ई. में प्रकाशित 'कलकता समाचार' प्रभावशाली पत्र था। अमृतलाल चक्रवर्ती इसके संपादक तथा द्वारका प्रसाद चतुर्वेदी

सहायक प्रबंधक थे। अंग्रेजी तारों से समाचार मिलने के कारण यह पत्र लोगों के बीच बहुत लोकप्रिय था। 1916 ई. में कलकत्ता से 'विश्वमित्र' ने नवीनता और मौलिकता भरे वाणिज्य तथा सामाजिक और राजनीतिक प्रश्नों पर स्वतंत्र रूप से लेखों का प्रकाशन करना प्रारंभ किया। विश्वमित्र की विविधता और स्वतंत्रता वास्तव में हिंदी दैनिक अखबार के क्रमिक विकास का पर्याय था। यह पत्र बाद में मुंबई, पटना, दिल्ली और कानपुर से प्रकाशित होने लगा।

महादेव प्रसाद, शिवपूजन सहाय, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला और मुंशी नवजादिक लाल ने मिलकर 26 अगस्त, 1923 ई. को 'मतवाला' साप्ताहिक हास्य-व्यंग्य पत्रिका का प्रकाशन शुरू किया। इस पत्र में समकालीन राष्ट्रीय चेतना की भावना प्रबल थी। उदाहरणार्थ, "असहयोग-शक्ति की कमर टूट गई है। आत्मविश्वास कलेजा थामकर बैठ गया। धैर्य की नाड़ी छूट गई है। साहस के पैर उखड़ चुके हैं। उत्साह बगलें झाँक रहा है। चरखा सिर धुन रहा है। खद्दर का दम घुट रहा है।"

सन् 1928 में 'सरोज' का प्रकाशन साहित्य के क्षेत्र में देश, जाति और भाषा की सेवा का व्रत लेकर शुरू किया गया था, "पश्चिमी देशों ने पूँजीवाद को अपना कर समाज में फिर से एक नए ढंग की गुलामी की स्थापना कर डाली है।" सन् 1935 में प्रकाशित 'समाजसेवक' की सक्रिय हिस्सेदारी का अनुमान 28 जनवरी, 1940 के संपादकीय अंक से लगाया जा सकता है, "गत 26 जनवरी को हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक जिस अदम्य उत्साह से स्वाधीनता दिवस मनाया गया, सभाएँ की गईं और स्वाधीनता की प्रतिज्ञा की गई, उसे देखकर ब्रिटिश सरकार की आँखें खुल जानी चाहिए।"

शांतिनिकेतन में हिंदी भवन की स्थापना के अवसर पर कविगुरु रवींद्रनाथ टैगोर ने एक ऐसी हिंदी पत्रिका प्रकाशित करने की इच्छा जताई थी, जिससे भारत के साहित्यिक-सांस्कृतिक साधना के साथ-साथ भारतीय-अस्मिता की रक्षा की जा सके। जनवरी 1942 को 'शांतिनिकेतन' पत्रिका का पहला अंक प्रकाशित हुआ। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के कुशल नेतृत्व में गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर के विशाल साहित्य-भंडार के साथ-साथ संगीत, दर्शन, इतिहास, कला, राजनीति, शिक्षा आदि विषयों पर उनकी रचनाओं के अनुवाद का नियमित प्रकाशन हुआ। स्वाधीनता के प्रति जागरूकता लाने के लिए इस पत्रिका में छपी गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर के एक विचार को देखा जा सकता है। "हम भूल गए कि हमारे अंदर जो मनुष्यत्व का गौरव निहित है, उसकी रक्षा के लिए हमें प्राणों की बाजी लगा देनी होगी।"

इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे भी समाचार पत्र थे, जिनके कम अंक निकले, लेकिन कई दृष्टि से इन पत्रों का महत्व बहुत अधिक है, "कलकत्ता से प्रकाशित पत्रों की सूची देखने पर सहज ही प्रश्न उठ खड़ा होता है कि 20वीं सदी के तीसरे और चौथे दशक में समानांतर रूप से हिंदी पत्रों की यह बाढ़ क्यों आई? इन दशकों में समाज-सुधार और स्वाधीनता आंदोलन में तीव्रता आ गई थी। लोगों में एक नया बौद्धिक उत्साह पैदा हो चुका था। अतः सामाजिक और राजनीतिक चेतना के लिए नए-नए पत्र निकलने लगे।" सन् 1924 को प्रकाशित 'देशबंधु', 1928 में प्रकाशित 'नवयुग', अगस्त 1931 में कार्तिकेय चरण मुखोपाध्याय के संपादन में प्रकाशित 'बाँसुरी', नवंबर 1931 में डॉ. हेमचंद्र जोशी और इलाचंद्र जोशी के संपादन में 'विश्व वाणी' आदि मुख्य हैं। मोतीलाल विश्व के संपादन में 'हिंदुस्तान' पत्र 29 सितंबर, 1934 को, 25 जुलाई, 1936 को 'जनमत' नाम का साप्ताहिक पत्र निकला। जून 1939 को पंडित शिवशेखर द्विवेदी के संपादन में 'धूमकेतु' का प्रारंभ हुआ। इस पत्र में समाज-सुधार, कृषि, मजदूर, किसान, गाँव, हिंदू-मुस्लिम एकता आदि विषयों पर संपादकीय में मुख्य रूप से लिखा गया।

'संन्यासी' अक्तूबर 1927 में, 'चिकित्सा समाचार' अक्तूबर 1927, 'श्रीमाली नवयुवक' 1928 में, 'स्वास्थ्य' जुलाई 1929 में, 'सेवक' जनवरी 1930 में, 'रेलवे समाचार' अप्रैल 1931 में, 'धुरंधर' सितंबर 1931 में, 'सचित्र भारत' फरवरी 1936 में, 'कामधेनु' मार्च 1936 में, 'मारवाड़ी लिली' फरवरी 1937 में, 'ज्योति' अगस्त 1937 में, 'जीवन शाखा' नवंबर 1937 में, 'स्वास्थ्य वाणी' इत्यादि अनेक पत्रों का प्रकाशन स्वतंत्रता से पूर्व हुआ, जिसमें राष्ट्रीय चेतना और समाज में निहित अनेक मुद्दों को उठाया गया।

बंगाल हिंदी समाचार पत्रों के साथ-साथ पत्र-पत्रिका की मातृभूमि है। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में समाचार पत्र और पत्रिकाओं ने स्वातंत्र्य-चेतना के बीज को फलने-फूलने के लिए पर्याप्त हवा-पानी उपलब्ध करवाया। पत्रकारिता की शक्ति को पहचानते हुए 'इंडिया फॉर इंडियंस' में चित्तरंजन दास ने कहा था कि "तीस करोड़ भारतीय यदि साठ करोड़ हाथ उठा लें तो ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेंकना आसान हो जाएगा।"

आओ भारतीय भाषाएँ सीखें

हिंदी	संस्कृत	पंजाबी	उर्दू	कश्मीरी	सिंधी	मराठी	गुजराती	कोंकणी	नेपाली	बांग्ला
प्रशासनिक शब्द	**प्रशासनिक शब्द**	**प्रशासनक शबद**	**इंतेज़ामी अल्फ़ाज़**	**दफतरी लफुज़**	**दफ़्तरी इंतिज़ाम**	**प्रशासनिक शब्द**	**प्रशासनिक शब्द**	**प्रशासनीक शब्द**	**प्रशासनिक शब्द**	**प्रशासनिक शब्द**
अंतरिम	अन्तरिम	अंतरिम	उबूरी	मंज़कालुक, ओबूरी	दर्मियानी, अंतरिम	अंतरिम काळ	वचगाळानुं	अंतरीम	अन्तरिम	मध्यकालीन, अंतबर्ती कालीन
अधिकार	अधिकारः	अर्धिकार	इख़्तियार, हक	यखतियार	हकु, इख़्तियारु अधिकारु	प्रभुत्व, सत्ता, अधिकार	अधिकार (अमल), हक	अधिकार	अधिकार	अधिकार
अनुबंध	अनुबन्धः	अनुबंध/ मुचलका, क़रार	इक़रारनामा, मुआहदा क़रार	मुहाद, समजोत, यकरारनाम	क़रारु, अहदु	करार, करारनामा, बंधन	करार, करारनामु	अनुबंध	अनुबन्ध	अनुबंध
अनुभाग	अनुभागः	अनुभाग, धारा	सीग़ा	स्यकशन, खात	खातो, विभागु	अनुभाग	शाखा	अनुभाग	अनुभाग	अनुभाग
अनुमोदन	अनुमोदनम्	परवानगी	तौसीक़, मंज़ूरी, ताईद	तॉयीद	ताईद, टेको	पाठिंबा, समर्थन	समर्थन (टेको), संमति	अनुमोदन	अनुमोदन	अनुमोदन, मन्जुरी
अनुलग्नक	संलग्नकम्	नाल-लगदा/ नत्थी कागज़	मुनसलिका (शामिल)	शॉमिल- काकज़	गडु शामिल, जोड़ियलु वलगण	अनुलग्नक	जोडेलुं, बीडेलुं	अनुलग्नक	संलग्नक	संश्लिष्ट
अनुशासन	अनुशासनम्	अनुशासन	नज़्म, इंतिज़ाम	रबत-ज़बत	इंतिज़ामु	शिस्त	शिस्त	शिस्त	अनुशासन	अनुशासन
अनौपचारिक	अनौपचारिक, अनौपचारिकी	ग़ैर-रसमी	ग़ैर रसमी	गॉर रसमी	ग़ैरदस्तूरी	अकृत्रिम, सर्वसाधारण, अनौपचारिक	अनौपचारिक	अनौपचारीक	अनौपुचारिक	अनानुष्ठानिक, अनुपचारिक
अभिलेख	अभिलेखः	रिकारड, अभिलेख	रिकार्ड, काग़ज़ात, दस्तावेज़	रिकार्ड	रिकार्ड़ु, काग़ज़ात, दस्तावेज़ु	रेकॉर्ड, नोद	रेकर्ड, पत्रक, दस्तावेज, नोंधणीपत्रक	अभिलेख	अभिलेख	अनुलेख, अनुशासन
अवकाश	अवकाशः	छुट्टी, अवकाश	छुट्टी, फ़ुरसत, रुख़्सत	छुटी, तॉतील	मोकल	वेळ, फुरसत	रजा	अवकाश	बिदा, अवकाश	अबकाश, छुटी
आदेश	आज्ञा	आदेश, हुकम	हुक्म (फ़रमान)	होकुम	हुकुमु	आदेश	आज्ञा, हुकम	आदेश	आदेश, आज्ञा, हुकुम	आदेश
आयोग	आयोगः	कमिशन	कमीशन	कॅमिशन	कमीशन	नियुक्त मंडल, कमिशन,	पंच, आयोग	आयोग	आयोग	आयोग

असमिया	मणिपुरी	ओड़िआ	तेलुगू	तमिल	मलयालम	कन्नड़	डोगरी	संताली	मैथिली	बोड़ो
प्रशासनिक शब्द	**वायेन थौदाबदा शिजिन्नबा वाहै**	**शासकीय शब्दावली**	**परिपालनकु संबंधिंचिन पदालु**	**निर्वाह चोर्कळ्**	**भरण शब्दम्**	**आडळितद शब्दगकु**	**प्रशासनक शब्द**	**शा सेतियो साबाद**	**प्रशासनिक शब्द**	**खुंथाइयारि सोदोब**
अंतबर्ती-कालीन	मतम खरतगी	मध्यबर्तीकालीन	मध्यांतर	इडैक्काल	इटक्काल	तात्कालिक, मध्यकालीन	अंतरम, अंदरूनी	मध्यकालीन, अंतबर्ती कालीन	अंतरिम	खुंथनाय, लाथ’नाय, दाथ’नाय
अधिकार	हक, अधिकार	अधिकार, हक	अधिकारमु	उरिमै	अवकाशाम्	अधिकार	अख्तयार, अधिकार	ओइदार हक	अधिकार	गोहा, मोनथाइ
अनुबंध, चुक्ति	करार, कांट्रेक्ट	अनुबंध	अनुबंधमु	इणैप्पु	अनुबंधम्, करार्	षरत्तु, अनुबंध	मचलका, इकरारनामा	अनुबंध	अनुबंध	रादाय खानाय, थिखानाय
अनुविभाग	सेकसन	अनुभाग	अनुभागमु	पिरिवु	अनुभागम्, सेक्षन्	अनुभाग	धारा	अनुभाग, हाटित्र	अनुभाग	खोन्दो, बाहागो
अनुमोदन, मंजुर	सौगत्पा	अनुमोदन, मंजुर	आमोदमु	अंगीकारम्	अंगीकरणम्	अनुमोदने, ओप्पिग	ताईद, मंजूरी	अनुमोदन	अनुमोदन	गनायनाय, मन्जुर
संलग्नक, संलग्न	हापचिन्लकपा	जोडिबा, मिशिबा	जतपरचिन	इणैप्पु	उळळटक्कम्	सेरिकेगळु	नत्थी-मसौदा	अनुलग्नक, लासाड़हेद्	अनुलग्नक	सुखथाव-फानाय
अनुशासन	नियम ङाकपा	अनुशासन, नीति	क्रमशिक्षण	ओळुंगु	अच्चटक्कम्	शिस्तु	अनुशासन	अनुशासन	अनुशासन	आब्रुथि
अनानुष्ठानिक	इनफोर्मल नियम याओदना तौबा	अनौपचारिक, साधारण	लांछनप्रायमु	मुरै‍सारा	अनौपचारिकम्	अनौपचारिक	गैर-रसमी	अनौपचारिक	अनौपचारिक	खान्थि लेखा नङै
अभिलेख	रेकोर्ड	अभिलेख, अनुशासन	रिकार्डु	आवणम्	रिकार्ड्	अभिलेख	दस्ताबेज	अनुलेख, अभिलेख	अभिलेख	रेबगान्थि
छुटी, अबकाश	छुट्‌टी	अबकाश, छुटी	सेलवु	विडुमुरै, विडुप्पु	ओळिवुँ, लीवुँ	बिडुवु अवकाश	छुट्‌टी	छुटि	अवकाश	दांगथाई
आदेश	याथङ्, ऑर्डर	आदेश	उत्तरुवु	आणै	कल्पन, ओर्डर्	आदेश, आज्ञे	हुकम, आग्या	आर्दास	आदेश	बिथोन, थिननाय, बुंनाय
आयोग	कमिशन	आयोग, कमिशन	कमीशनु	आणैयम्	कम्मीषन्	आयोग	कमीशन, अयोग	आयोग कमिसनं	आयोग	आय’ग

(केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा प्रकाशित भारतीय भाषा कोश से साभार)

वन और पानी का संबंध

बढ़ती हुई जनसंख्या एवं औद्योगीकरण तथा उपभोक्तावाद के कारण जंगलों को भारी मात्रा में काटा जा रहा है। वनों की कटाई विशेषकर उष्णकटिबंध के जंगलों में की जा रही है। वनों के काटने के दूरगामी विपरीत परिणाम हैं। उदाहरण के लिए, वनों के काटने से मृदा अपरदन में वृद्धि होती है, बाढ़ एवं सूखे की बारंबारता में वृद्धि होती है, नदियों के रास्ते में मिट्टी जमा हो जाती है, जिससे नदियों का रास्ता उथला हो जाता है और बाढ़ की संभावना बढ़ जाती है। वनों और पानी के आपसी संबंध में वैज्ञानिक धारणाओं के आधार पर समझने की कोशिश की गई थी। इसी परिप्रेक्ष्य में यह सवाल उठता है कि यदि वन और पानी आपस में

जुड़े हुए हैं तो क्या वनों से वृक्षों का विदोहन जलधाराओं में प्रवाह की मात्रा और गुणवत्ता को भी प्रभावित कर सकता है?

भारत में शासकीय वनों का प्रबंध तथा वृक्षों का विदोहन आमतौर पर हर जिले के वनों के लिए बने एक तकनीकी दस्तावेज के आधार पर किया जाता है, जो 'कार्य आयोजना' या अंग्रेजी में 'वर्किंग प्लान' कहलाता है। वनों के प्रबंध के लिए बनाई जाने वाली कार्ययोजना के प्रावधान इस बात को ध्यान में रखकर तय किए जाते हैं कि वन क्षेत्र में वृक्षों की कटाई से स्थायी रिक्त स्थान न बनने पाए। इसके लिए मौके पर मौजूद पेड़-पौधों के घनत्व व स्वास्थ्य को देखते हुए वनों को विभिन्न कार्यवृत्तों में बाँटा जाता है। विभागीय वाटर शेड मैनेजमेंट प्लांट भू-जल संरक्षण कार्य एवं विदोहन में वन वर्धनिक दृष्टि से उन्हीं वृक्षों को काटकर निकाला जाता है, जिनके हटाए जाने से नई पौध की बेहतर वृद्धि सुनिश्चित की जा सके। इसी प्रकार जहाँ नए पौधों की संख्या कम होती है, वहाँ रोपण करके वनों का घनत्व बढ़ाने का प्रयास किया जाता है। कार्य आयोजनाओं में जलधाराओं के कगारों पर वृक्षों की कटाई या तो संयमित रूप से ही प्रस्तावित की जाती है अथवा विदोहन पर पूरी तरह रोक लगाकर। इन क्षेत्रों को संरक्षण कार्यवृत्त में रख दिया जाता है। इसके पीछे प्रमुख उद्देश्य कगारों की मिट्टी के कटाव पर अंकुश लगाए रखना है, जो अच्छा वनस्पति आवरण होने की दशा में ही संभव है। इस दृष्टि से देखें तो नदी कगारों पर त्रुटिपूर्ण वन विदोहन मिट्टी का क्षरण गंभीर रूप से बढ़ा सकता है और जल की मात्रा व गुणवत्ता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर सकता है। परिपक्व वृक्षों का विदोहन करना तथा नई पौध को बढ़ावा देना वनवर्धन के मूल सिद्धांतों में सम्मिलित है। सतत प्राप्ति के सिद्धांत को आधार बनाकर

संजय गोस्वामी

कार्यक्षेत्र : हिंदी विज्ञान के क्षेत्र में 500 से अधिक लेख विभिन्न विज्ञान तथा हिंदी पत्रिकाओं में प्रकाशित।

पुरस्कार : विज्ञान लोकप्रिय के लिए– भारत गौरव 2011, डॉ. गोरख प्रसाद विज्ञान पुरस्कार, 2009, विज्ञान परिषद शताब्दी पुरस्कार 2013, डॉ. सी.वी. रमन विज्ञान संचार पुरस्कार, 2015।

संप्रति : वैज्ञानिक पत्रिका के प्रबंधक व ग्रामीण विकास संदेश के सह संपादक, तथा विज्ञान गंगा पत्रिका,(बीएचयू), सलाहकार बोर्ड के सदस्य।

संपर्क : मोबाइल– 9869368950

ईमेल– sg234500@gmail.com

हमारे देश में भी वनों से परिपक्व वृक्षों का विदोहन किया जाता है, ताकि नई पौध को पनपने के लिए खुला स्थान और अन्य आवश्यक तत्व मिल सकें। वन वर्धनिक दृष्टि से की जाने वाली वृक्षों की कटाई भी जलधाराओं के प्रवाह पर असर डालती है। यह असर कैसा होगा, यह अनेक कारणों पर निर्भर करता है। लंबी अवधि तक किए गए अनेक वैज्ञानिक प्रयोगों से वन विदोहन से जलधाराओं के प्रवाह पर होने वाले असर के बारे में जानकारी मिली है। इनमें से कुछ उल्लेखनीय प्रयोगों के निष्कर्ष निम्नानुसार हैं।

ब्राउन व बिंकले (1994) ने पाया कि नदियों और जलधाराओं के किनारे के वृक्ष बड़ी संख्या में काट दिए जाएँ तो छाया में कमी होने से जल की सतह तक पहुँचने वाली सूर्य की किरणों में वृद्धि हो जाती है, जिससे जल का तापमान 05 डिग्री सेंटीग्रेड या उससे भी अधिक तक बढ़ जाता है। जल का तापमान बढ़ने से उसमें घुली ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है, जिससे मछलियों व अन्य जलीय जंतुओं के लिए संकट पैदा हो जाता है। फ्लोरिडा के कृषि और उपभोक्ता विभाग के वानिकी मंडल द्वारा 'उत्तम वन प्रबंधन पद्धतियों' (1993) पर एक पुस्तक जारी करके वानिकी गतिविधियों से जल गुणवत्ता पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों के बारे में जानकारी दी गई। इन पद्धतियों को लागू करके वानिकी से जुड़ी गतिविधियों के कारण होने वाले जल प्रदूषण को कम करके पारिस्थितिक लाभ सुनिश्चित कर कटाई के तुरंत बाद पानी का तापमान, रंग, रासायनिक ऑक्सीजन की माँग आदि में बढ़ोतरी हो गई। बड़े पैमाने पर कटाई करने की स्थिति में

जल में बह जाने वाले जैविक द्रव्य की मात्रा में 73 प्रतिशत तक की वृद्धि तथा पानी में घुले हुए फास्फोरस की मात्रा बढ़कर 55 कि.ग्रा./वर्ग कि.मी. तक दर्ज की गई। जलधारा में जैविक द्रव्य और फास्फोरस की मात्रा में कटाई के दूसरे वर्ष में भी वृद्धि देखने में आई, जबकि तीसरे वर्ष से इसमें कमी आने लगी।

एच. बोर्ग (1988) ने पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया के चार छोटे जलग्रहण क्षेत्रों, क्रोबिया, पूल, इफले तथा यूरैलप में वृक्षों की कटाई और उसके बाद आए पुनरुत्पादन के कारण जलधाराओं पर पड़ने वाले प्रभावों का लगभग एक दशक तक अध्ययन किया। इस अध्ययन में कटाई और चयन पद्धति से कटाई के बाद आने वाले पुनरुत्पादन के कारण जलधाराओं में लवणता तथा भूमिगत जल स्तर पर पड़ने वाले प्रभावों को देखा गया। अध्ययन में पाया गया कि वन विदोहन के बाद प्रारंभिक चार वर्षों तक भूजल स्तर में बढ़ोतरी हुई और उसके बाद इसमें गिरावट आने लगी। विदोहन के कारण प्रारंभिक दो वर्षों 1977 तथा 1978 में जलधारा में प्रवाह की मात्रा

बढ़ गई। अध्ययन में यह अनुमान लगाया गया कि कटाई के बाद लगभग 15 वर्षों में भूजल स्तर तथा जलधाराओं में प्रवाह तथा जल में लवणता का स्तर कटाई के पहले के स्तरों तक वापस पहुँच जाएगा। एम.जे. ब्राउनली (1988) व उनके सहयोगियों ने ब्रिटिश कोलंबिया में 1971 से 1975 के बीच एक जलग्रहण क्षेत्र का अध्ययन करके वन विदोहन के कारण पानी की गुणवत्ता पर पड़ने वाले प्रभावों का पता लगाया। गहन वन विदोहन से प्रभावित जल ग्रहण क्षेत्र से आती जलधारा में तैरते हुए अवसाद की मात्रा चार से 12 गुना तक बढ़ गई, जबकि सरिताओं के किनारे वृक्ष काटे जाने से जल के औसत तापमान में 1 से 3 डिग्री सेंटीग्रेड तक वृद्धि दर्ज की गई तथा अधिकतम और न्यूनतम तापमान स्तर में उतार-चढ़ाव का दायरा बढ़ गया।

आई.सी. कैंपबेल (1989) ने ऑस्ट्रेलिया में वन विदोहन से सरिताओं के प्रवाह व जल की गुणवत्ता पर पड़े प्रभावों का अध्ययन करने पर पाया कि तैरते अवसाद में बढ़ोतरी के कारण जल की पारदर्शिता घट जाने से जलीय कशेरूकी व अकशेरूकी जीव-जंतुओं पर हानिकारक प्रभाव पड़े। सरिताओं के किनारे वृक्षों की कटाई से छाया में कमी होने के कारण जलीय पारिस्थितिक तंत्र को अधिक प्रकाश मिलने लगता है, जिससे अकशेरूकी जलीय जंतुओं की संख्या बढ़ जाती है।

डेल डी. हफ (2020) व उनके सहयोगियों ने अमेरिका में मध्य कैलीफोर्निया के सिएरा नेवादा के पर्वतीय जलग्रहण क्षेत्रों में वनों के

विरलन व सफाई के कारण जल की मात्रा में बढ़ोतरी का अध्ययन किया। इन वैज्ञानिकों ने एक विशेष पद्धति विकसित करके जल ग्रहण क्षेत्र के वनस्पति आवरण के मौजूद रहने और उसकी सफाई के बाद की दो भिन्न-भिन्न स्थितियों में जलधाराओं में पानी की मात्रा

“ वनाच्छादित क्षेत्र का संबंध सिर्फ खूबसूरती और वन्यजीवों से ही नहीं है। किसी भी समाज का आर्थिक विकास उसके पारिस्थितिकी के स्रोतों से सीधा जुड़ा होता है। सरकारें अब इन स्रोतों का आर्थिक मूल्य तय करने लगी हैं। वाटरशेड से जुड़ी समस्याओं या वनों की कटाई और तेजी से शहरीकरण के कारण भू-जल स्तर गिरता जा रहा है और इसकी वजह से कई शहर पानी की किल्लत झेल रहे हैं। ऐसे में आश्चर्य नहीं कि जलापूर्ति के साथ सीधे संबंध की वजह से वन क्षेत्रों को एक नई रोशनी में देखा जाने लगा है। ”

का आकलन किया। लगभग 40,000 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैले अध्ययन क्षेत्र से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर इनके द्वारा बताया गया कि जलधाराओं में औसतन वार्षिक प्रवाह का क्षेत्र के आकार से काफी गहरा संबंध है। जैसे-जैसे विदोहित क्षेत्र का फैलाव बढ़ता है, वैसे-वैसे वार्षिक प्रवाह की मात्रा बढ़ती जाती है, जो लगभग एक प्रतिशत तक हो सकती है। छोटे आकार के अध्ययन क्षेत्रों में तो विरलन के कारण हुए बदलावों का मापन आसानी से हो जाता है, जबकि बड़े क्षेत्रों में प्रति इकाई प्रवाह की मात्रा बढ़ने को आसानी से नापना संभव नहीं हो पाता। इन्हीं अध्ययनकर्ताओं द्वारा पाया गया कि काष्ठीय वृक्षों के स्थान पर सफेद चीड़ के वृक्ष लगा देने से मासिक और वार्षिक औसत जल प्रवाह में काफी कमी आ गई, जबकि यहीं पर वनों के स्थान पर घास के मैदान बन जाने से वार्षिक औसत प्रवाह में वृद्धि दर्ज की गई। वन क्षेत्र और शहरी आवास के बीच गहरा संबंध है, हालाँकि जमीन हड़पने वाले लोगों की राय इसके उलट हो सकती है। ये क्षेत्र शहर को स्पष्ट रूप से हरियाली प्रदान करने के अलावा भूमिगत जल के स्रोत भी हैं।

इंग्लैंड में ब्रिस्टल स्थित इक्विलिब्रियम कंसल्टेंट्स के साझीदार निजेल ड्यूडली और सू स्टॉल्टन के अध्ययन के मुताबिक, वन जैसे संरक्षित क्षेत्र दुनिया के सबसे बड़े शहरों की जलापूर्ति में बड़ी भूमिका निभाते हैं। उनके अध्ययन के मुताबिक, दुनिया के सबसे बड़े शहरों में से एक-तिहाई (105 में से 33) अपने पेयजल का बड़ा हिस्सा पड़ोस के वन क्षेत्रों से सीधे हासिल करते हैं। कम-से-कम पाँच दूसरे शहर उन स्रोतों से पानी हासिल करते हैं जो दूरदराज के वाटरशेड (जलोत्सारण या जल संभरण) से निकलते हैं और उनमें संरक्षित क्षेत्र भी शामिल हैं; आठ और शहर उन वन क्षेत्रों से पानी हासिल करते हैं जिन्हें पानी मुहैया कराने के लिए प्रबंधित किया जाता है। इस अध्ययन में मुंबई के बाहर स्थित संजय गांधी राष्ट्रीय उद्यान की मिसाल दी गई है। शहर में पेयजल के दो मुख्य स्रोत—विहार और तुलसी झील इसी उद्यान के भीतर स्थित हैं।

वनाच्छादित क्षेत्र का संबंध सिर्फ खूबसूरती और वन्यजीवों से ही नहीं है। किसी भी समाज का आर्थिक विकास उसके पारिस्थितिकी के स्रोतों से सीधा जुड़ा होता है। सरकारें अब इन स्रोतों का आर्थिक मूल्य तय करने लगी हैं। वाटरशेड से जुड़ी समस्याओं या वनों की कटाई और तेजी से शहरीकरण के कारण भू-जल स्तर गिरता जा रहा है और इसकी वजह से कई शहर पानी की किल्लत झेल रहे हैं। ऐसे में आश्चर्य नहीं कि जलापूर्ति के साथ सीधे संबंध की वजह से वन क्षेत्रों को एक नई रोशनी में देखा जाने लगा है। भारत को विशेष रूप से अपने घटते वन क्षेत्रों के बारे में चिंतित होना चाहिए क्योंकि उसके पास इस प्राकृतिक संसाधन की भरपाई के लिए खास कुछ नहीं है। भारत में दुनिया की करीब 16 फीसदी आबादी है और मवेशियों की संख्या 15 फीसदी है, लेकिन उसके पास दुनिया का मात्र 2.4 फीसदी क्षेत्र और दुनिया के वन क्षेत्र का मात्र 1.7 फीसदी है। पर्यावरण विशेषज्ञों का सुझाव है कि सतत् पर्यावरण एवं आर्थिक विकास के लिए देश का एक-तिहाई भौगोलिक क्षेत्र वनों से ढका होना चाहिए। अगर भारत को बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपदाओं से बचाना है तो हमें वनों और पारिस्थितिकी के स्रोतों को बचाने के लिए काफी प्रयास करने की जरूरत है।

मधुबनी की लोककला

किसी देश या जाति की संस्कृति का परिचय उसके लोकसाहित्य, लोकशिल्प, लोकसंगीत, लोकउत्सव-त्यौहार, सामाजिक रीति-रिवाज आदि से मिलता है। उससें उस जाति या देश की विशिष्टता का बोध होता है। भारत एक बृहद् देश है। यहाँ नाना प्रकार के लोग एवं जाति निवास करते हैं। उनके रहन-सहन, खान-पान, पहनावा, रीति-नीति, आचार-विचार, बोली एवं भाषाएँ भिन्न हैं। इसका प्रभाव इनके साहित्य, कला-संगीत आदि पर दृष्टिगत होता है।

डॉ. रामचंद्र राय

जन्म : 02 अगस्त, 1949

शिक्षा : पी-एच.डी.।

संप्रति : विश्वभारती, शांतिनिकेतन में राजभाषा हिंदी के प्रथम प्रभारी व शांतिनिकेतन हिंदी प्रचार सभा के संस्थापक सचिव के रूप में कार्यरत।

लेखन : बांग्ला एवं हिंदी के आधुनिक गद्य के निर्माता ईश्वरचंद्र गुप्त तथा भारतेंदु हरिश्चंद्र पर तुलनात्मक शोध कार्य। बांग्ला से हिंदी में अनुवाद कार्य व तुलनात्मक विषयों पर लेखन कार्य एवं पुस्तकों का प्रकाशन। मधुबनी की लोककला पर अन्वेषण-विश्लेषण सर्वेक्षण एवं लेखन कार्य।

संपर्क : मोबाइल– 9932825660

ईमेल– drrcroy@gmail.com

जिस प्रकार बंगाल के यामिनी राय की कलाकृतियाँ लोककला के रूप में प्रचलित हैं, उसी प्रकार बिहार के मिथिलांचल की लोककला 'मधुबनी चित्रकला' के नाम से प्रचलित है। यह चित्रकला किसी एक व्यक्ति विशेष की देन नहीं है, अपितु मधुबनी जिले के गाँवों में रहने वाली ग्रामीण महिलाओं की देन है।

मधुबनी, बिहार के प्राचीन मिथिला प्रदेश के एक स्थान विशेष का नाम है। पूर्व में यह दरभंगा जिले का उपमंडल था। बाद में दरभंगा जिले से विभक्त कर मधुबनी जिले का दर्जा दिया गया है। मिथिला प्रदेश का नाम राजा मिथि के नाम पर पड़ा है और वहाँ की भाषा मैथिली है जिसका केंद्र मधुबनी ही है।

19वीं सदी का राजनीतिक एवं सामाजिक सुधार मिथिला प्रदेश पर किसी भी प्रकार का अपना प्रभाव नहीं डाल सका। इसलिए यहाँ के हिंदू-मुस्लिम प्राचीन धार्मिक मान्यता और वर्णाश्रम धर्म पर ही विश्वास करते हैं और शिव, शक्ति और विष्णु के उपासक होते हैं। साहित्य और शिल्प समाज का प्रतिबिंब होता है, इसलिए मधुबनी चित्रकला पर वहाँ के सामाजिक एवं धार्मिक प्रवृत्तियों का प्रभाव पड़ा है। मधुबनी चित्रकला की विषय-वस्तु मांगलिक होती हैं, इसलिए मधुबनी चित्रकला पर मिथिला क्षेत्र के सामाजिक एवं धार्मिक, मांगलिक कार्य यथाक्रम छठिहार, उपनयन, विवाह, नहकट्टी आदि अनुष्ठान होते हैं।

मधुबनी के प्रत्येक गाँव में जाने पर वहाँ की मिट्टी की दीवारों पर चित्रकारी

चित्रित की हुई दिखाई देती है। इस चित्रकारी का आरंभ कब से हुआ है, इसका अनुमान नहीं लगाया जा सका है। तदुपरांत मिथिलांचल के सामाजिक एवं धार्मिक उत्सव अनुष्ठानों में ग्रामीण महिलाएँ अपने मिट्टी के बने घरों की दीवारों को चित्रकारी से रंगा-रंग कर देती है। यही चित्रकारी मधुबनी चित्रकला या लोककला के नाम से विख्यात हुई है।

“ मधुबनी चित्रकला मुख्यतः मांगलिक कला है। इसलिए मांगलिक उत्सव-त्यौहार के समय यथाक्रम विवाहोत्सव के समय रामायण से, विशेषकर जनकपुर के राम-सीता के विवाह से संबंधित विभिन्न प्रसंगों का चित्रण करते हैं। राम-सीता के विवाहोत्सव प्रसंग में किसी चित्र में सीता, राम के गले में जयमाला पहना रही हैं। किसी चित्र में सीता, राम के चरण को छू रही हैं। किसी चित्र में सीता की विदाई का प्रसंग देखने को मिलता है। किसी चित्र में सीता को डोली में बैठाकर कहार अयोध्या ले जा रहे हैं। ”

सन् 1967 के बिहार के अकाल ने मधुबनी चित्रकला के उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसके उत्थान में श्रीमती पुलपुल जयकर का सहयोग उल्लेखनीय है। क्योंकि उन्हीं की प्रेरणा से मधुबनी चित्रकला, कला मर्मज्ञ के सामने आई है। अकाल के समय, कुछ लोग बिहार के प्रत्येक गाँव में राहत कार्य की सुविधा प्रदान के लिए जाते रहे। मिथिला क्षेत्र के ही सांसद ललित नारायण मिश्र, भारत सरकार के विदेश व्यापार मंत्री थे। उन्होंने अखिल भारतीय हस्तकला परिषद की अध्यक्ष श्रीमती पुलपुल जयकर से मधुबनी के गाँवों में मिट्टी की दीवारों पर चित्रित चित्रकारी को सर्वेक्षण करने के लिए प्रेरित किया। पुलपुल जयकर ने मधुबनी के गाँवों में जाकर देखा कि मधुबनी चित्रकला गाँवों की मिट्टी के घर की दीवारों पर चित्रित है। वे चित्रकला की तकनीकी को देखकर मुग्ध हो गई। उन्होंने गाँव के लोगों से चित्रकारी के संबंध में पूछताछ की। उन्होंने ग्रामीणों को कागज लाकर दिया और उस पर चित्रकारी करने के लिए प्रेरित किया।

मधुबनी चित्रकला की विशेषता यह है कि आरंभ में गाँव की अशिक्षित महिलाएँ ही यह चित्रकारी किया करती थीं। उनकी देखा-देखी पुरुष भी चित्रकारी करने लगे हैं। मैंने भी अपने स्तर पर मधुबनी के गाँवों का सर्वेक्षण अपने मातुल में रहकर किया था। इसी क्रम में मुझे जितवारपुर एवं राँटी के गाँवों में जाने का मौका भी मिला था जहाँ पर मधुबनी जिले के निकटवर्ती गाँव होने के कारण इन दोनों गाँवों को मधुबनी चित्रकला का केंद्र चिह्नित किया गया था। उस समय मधुबनी चित्रकला की पुरोधा जगदम्बा देवी के निर्देशन में जितवारपुर गाँव में मधुबनी चित्रकारी का प्रशिक्षण कार्य चल रहा था। वहाँ मुझे सीता देवी, तारा देवी, चंद्रकला देवी, सावित्री देवी, रामपरी देवी, यमुना देवी, नित्यानंद झा आदि जैसे दक्ष चित्रकारों से मिलने का सुयोग मिला था।

मुझे इन लोगों से वार्तालाप के दौरान मधुबनी चित्रकला की सृजनता के उपादान के संबंध में जानकारी मिली थी। उन लोगों ने जानकारी दी थी कि कला सृजन के उपादान रामायण, महाभारत, पुराण, सुरसागर, देवी भागवत के अतिरिक्त दलित जाति के राजा सलहेश के जीवन से संबंधित कथाओं के अंश होते हैं। इस कला के सृजन के समय उक्त कथाओं से विषय-वस्तुओं का चयन किया करते हैं। इस कला में मिथक की सामग्री विशेष रूप से मिलती है।

मधुबनी चित्रकला मुख्यतः मांगलिक कला है। इसलिए मांगलिक उत्सव-त्यौहार के समय यथाक्रम विवाहोत्सव के समय रामायण से, विशेषकर जनकपुर के राम-सीता के विवाह से संबंधित विभिन्न प्रसंगों का चित्रण करते हैं। राम-सीता के विवाहोत्सव प्रसंग में किसी चित्र में सीता, राम के गले में जयमाला पहना रही हैं। किसी चित्र में सीता, राम के चरण को छू रही हैं। किसी चित्र में सीता की विदाई का प्रसंग देखने को मिलता है। किसी चित्र में सीता को डोली में बैठाकर कहार अयोध्या ले जा रहे हैं। राम मिथिला क्षेत्र के भगवान नहीं, अपितु जमाता हैं एवं सीता जनकनंदिनी किशोरी हैं। इसलिए मिथिला क्षेत्र में राम की पूजा नहीं हुआ करती है। मिथिला क्षेत्र में शिव, शक्ति, विष्णु आदि की पूजा-अर्चना होती है। आजकल कुछ स्थानों पर राम मंदिर बनाए जा रहे हैं। विवाहोत्सव

के समय जहाँ पर वर-वधू को विवाहोपरांत रहने दिया जाता है, उस घर को 'कोहबर' घर कहते हैं। उस घर की दीवारों पर विभिन्न प्रकार की विषय-वस्तुओं यथाक्रम बाँस की बीट, कमल का पौधा, केले का पौधा, मछली, बिच्छू, साँप, कच्छप आदि को चित्रित किया जाता है। इन विषय-वस्तुओं को चित्रित करने की पृष्ठभूमि वंश-वृद्धि से संबंधित है। जिस प्रकार एक बाँस के बीट से अनेक बाँस होते हैं, एक कमल के पौधे से अनेक कमल के पौधे होते हैं,

एक केले के पौधे से अनेक केले के पौधे होते हैं, एक मछली से अनेक मछलियों का जन्म होता है, उसी प्रकार नव-दंपती की वंश-वृद्धि की कामना की जाती है। उसी प्रकार सूरसागर से राधा-कृष्ण के विभिन्न प्रसंगों का चित्रण करते हैं। कहीं राधा-कृष्ण की युगल जोड़ी है। कहीं चारों ओर गोपियाँ हैं और बीच में राधा-कृष्ण खड़े हैं। किसी चित्र में कृष्ण बाँसुरी बजा रहे हैं। किसी चित्र में कृष्ण के रासलीला का प्रसंग चित्रित करते हैं। किसी चित्र में राधा, कृष्ण से मिलने के लिए व्याकुल हैं। इसी प्रकार पुराण, महाभारत, देवी भागवत, लोक नायक सलहेश की कथाओं के प्रसंग चित्रित करते हैं। इसके अतिरिक्त मांगलिक उत्सवों के समय यथाक्रम छठिहार, उपनयन, नहकट्टी आदि के समय हाथी, सिंह, गौरी-पार्वती, बेल पत्र, बेल के पौधे आदि की भी चित्रकारी करते हैं।

मधुबनी चित्रकला को चित्रित करने के लिए रंग-रंगोली के लिए गाय का गोबर, बरतन की पेंदी का काली, सीम पत्ते का रस, केले का रस, गाय का दूध, पीले रंगे के लिए सरसों, हल्दी, लाल के लिए गेरू मिट्टी, हरसिंगार फूल का पिछला भाग, कीड़े-मकोड़े से बचाने के लिए कच्चे बेल फल के रस आदि का व्यवहार किया जाता रहा है। कलम के लिए सरपत और मोर के पंख के डैनों को व्यवहार में लाया जाता रहा है। आजकल इसके प्रचार-प्रसार के कारण, आधुनिक रासायनिक रंग-रंगोली का व्यवहार एवं कलम के लिए बाजार में उपलब्ध तूली का व्यवहार किया जाने लगा है। किंतु इसकी विषय-वस्तु पारंपरिक ही रहती हैं जो धार्मिक एवं सामाजिक उत्सव-अनुष्ठान एवं देवी-देवताएँ ही होती हैं। कुछ ऐसे भी चित्रकार हैं जो अपनी चित्रकारी में अभी भी पुरानी सामग्रियों का व्यवहार करते हैं।

इसकी मौलिकता एवं विषय-वस्तुओं ने कला-मर्मज्ञों को आकर्षित करने के कारण, इसके प्रचार-प्रसार के कारण, उसकी मौलिकता में कृत्रिमता का प्रभाव दृष्टिगत होने लगा है जिससे इसकी मौलिकता के लुप्त होने का भय लग रहा है।

कार्तिक महीने में संपूर्ण मिथिला क्षेत्र जिसके अंतर्गत नेपाल का तराई क्षेत्र एवं जनकपुर भी आता है, वहाँ के प्रत्येक गाँवों में भी रात्रि के समय बाल-बच्चे को खिला-पिलाकर सुलाने के बाद, गाँव के चौराहे

पर, जहाँ गाँव की सभी महिलाओं को आने में सुविधा हो वहाँ एकत्र होती हैं और देर रात तक श्यामा चकेवा, चुगला चुगली, सतभैया आदि की छोटी-छोटी मूर्तियाँ चंगेड़ी में सजाकर लाती हैं और सभी चंगेड़ी को एक स्थान पर रखकर नाचती-गाती हैं। शरद पूर्णिमा की रात्रि में गाँव की सभी महिलाएँ आपस में एक साथ मिलकर छोटी-छोटी टोलियों में बँटकर गाना गाती हुई गाँव के बाहर की खेती में जाती हैं। देर रात तक नाचती और गाती हैं। अंत में भाई-बहन की विधि पूराकर, उसे उस खेती में विसर्जन कर चली आती हैं।

अंत में यही कहा जा सकता है कि चित्रकारों को आधुनिक तकनीकी का ज्ञान होना तो आवश्यक है, किंतु उसकी मौलिकता की ओर भी ध्यान रखना उनका कर्तव्य है।

अंतिम ग्राहक

उस सर्कल में कोई भी जा सकता था। वहाँ की इमारतों के पास से ही नहीं, अपितु वहाँ के मैदान पर से बहने वाली ठंडी हवा भी दुर्गंध लिए आ रही थी। लोग तरह-तरह की बातें किए जा रहे थे। वह सब अस्पष्ट कलरव था।

सूर्य के चढ़ते-चढ़ते गरमी बढ़ने लगी। जिन्हें सर्कल से ही गुजरना था, वे एक बार बायीं ओर से आँखें घुमाकर, फिर सिर झुकाकर सर्र से निकलकर भाग लेते। सब चलते ही जा रहे थे, वहाँ रुकने वाला कोई न था। धीरे से म्यूनिसिपैलिटी में खबर पहुँची।

एक दिन उस लड़की ने सुबह उठकर देखा तो साथ सोया हुआ उसका साथी नहीं था। सोलह वर्ष की वह लड़की दस दिन पहले तमिलनाडु के गाँव से उसके साथ कर्नाटक की राजधानी भाग आई थी। वह भी एक गरीब भिक्षुक था। एक हाथ से टुंडा, पर एक रात अपने सही हाथ से उसे खींचकर

गले से लगा लिया था। काँपते हृदय से उस लड़की ने उसे देखा था, उस बलिष्ठ बाँह को भी देखा था, दो बाँहों जितनी शक्ति थी उसमें।

वहाँ से वे रातों-रात भाग आए थे।

गाँव में उनकी अपनी एक छोटी-सी झोंपड़ी थी। उसके माँ-बाप के पास छोटा-सा मड़ौसी खेत था। उसी वर्ष सब-कुछ चला गया। उस देशप्रेमी बड़े जमींदार ने ज्यादा लगान माँगा था। उसने कहा था कि न देने पर दूसरा आदमी रख लेगा। हुआ भी ऐसा ही। काणी के माँ-बाप का खेत जाता रहा। वह परिवार बिखर गया। बड़ा बेटा कुली बनने मद्रास चला गया। छोटा बेटा झगड़ा करके परदेश चल दिया। माँ-बाप गूँगी बेटी को लेकर गाँव-गाँव भटकने लगे। हजार भटकने पर भी काम नहीं मिला। माँगने की आदत पड़ जाने के बाद भीख माँगना उनका स्थायी पेशा बन गया।

माँ-बाप को छोड़ने पर गूँगी को जरा-सा ही दुख हुआ। यह बात जरा जोर देकर कही जाए तो ठीक है, क्योंकि किसी के घर के आगे सड़क के पार उस रात उसे आलिंगन में लेने वाले टुंडा भी भिक्षुक ही था। उसका वही एक मात्र आधार था।

वह भी क्षण-क्षण ढह जाने वाला आधार।

भागकर आने के बाद इस महानगर में वे दोनों केवल दस दिन साथ रहे। 11वें दिन सुबह वह अकेली रह गई थी। आश्रय के लिए एक तिनका भी न रहा। उसे ऐसे महासागर में अकेले हाथ-पैर मारने पड़े।

उस दिन सुबह से शाम तक उस गूँगी की आँखों से आँसुओं की झड़ी लगी रही। वह अपना पेट मलती हुई, चीख-चीखकर रोती वहाँ बैठी थी। वहीं दीवार से सिर पटकती। यहाँ-वहाँ चक्कर भी लगाकर देखा, पर वह न मिला। पता नहीं वह किस गाड़ी में चढ़कर बिना टिकट ही, किस गाँव या शहर को चल दिया था।

काणी रेलवे स्टेशन के पिछले वाले तालाब की ओर गई। पानी में पाँव डालकर

निरंजन

के.एस. निरंजन (1923-1992) 'निरंजन' के नाम से जाने जाते हैं। इनका एक उपन्यास 'विमोचन' रूसी भाषा में प्रकाशित हुआ है। 'चिरस्मरणे' उपन्यास पर सोवियत लैंड पुरस्कार (1974)।

रचनाएँ : नास्तिक, कोट्ट देवरू, ओंटि नक्षत्र, नक्कितु, अन्नपूर्ण रक्त सरोवर, वारद हुडुग आदि कहानी संकलन प्रकाशित। अभयाश्रम, चिरस्मरणे, दूरद नक्षत्र, रंगम्मन, वठार आदि उपन्यास प्रकाशित।

बैठी रही। ब्लाउज में खोंसी कंघी निकालकर सिर भिगोकर बाल बनाए। उस तालाब से थोड़ा पानी पीया। यूँ ही जरा दूर तक वहाँ की पगडंडी पर घूमती रही।

वह सुंदर नहीं थी। दुबली-पतली थी। पर आयु की सीमा से शरीर जरा अधिक भरा

“भाग्य की बात थी, उसे पेट नहीं रहा। इतना होने पर भी एक दिन उसकी छाती में दर्द हुआ। वह धरती पर लेटकर तड़पने लगी। अपने गाँव की झोंपड़ी, अपनी भाषा बोलने वाले लोग, टुंडे हाथ वाला पहला साथी-सब याद आए। जोर-जोर से हाय-हाय करने लगी।”

हुआ था। देह की भूख के लिए वह मनपसंद भोजन बन सकती थी।

जाते-जाते उसने एक बार मुड़कर देखा। कोई सिगरेट पीता हुआ उसका पीछा कर रहा था।

सड़क की बत्तियाँ जल उठीं। काणी को ऐसा लगा मानो किसी नई दुनिया के दरवाजे उसके लिए खुल गए हों। उसने उन बत्तियों की ओर आँखें मिचमिचाकर देखा। तभी एक साइकिल उसके सामने से सर्र से गुजर गई। उसने फिर से पीछे मुड़कर देखा। आने वाला पीछे चला ही आ रहा था।

फुटपाथ के पास, एक देवदार के पेड़ तले वह खड़ी हो गई। वह भी उसके समीप आ गया। उसने खाने के समान का पैकेट आगे बढ़ाया। काणी के गले से केवल आ-आ स्वर निकला। उसने पैकेट खोलकर नमकीन गपागप खाना शुरू किया। उस आदमी ने एक सिगरेट और सुलगाई।

वह बोला, “मैं सुबह से तुम्हें देख रहा था।”

उस लड़की ने उस व्यक्ति के होठों के हिलने से कितनी बात समझी, पता नहीं। उसके शब्द कानों के परदों से टकरा तो रहे थे, पर अर्थ पल्ले नहीं पड़ रहा था।

उसने ‘क-क-आ-आ’ ऐसा कुछ कहा। आँखों से आँसू बह निकले। आदमी ने च्-च्-च् करके सहानुभूति व्यक्त की। उसने उसे अपने पीछे-पीछे आने का इशारा किया। लड़की सिर झुकाकर ऐसे पीछे चल पड़ी जैसे कुत्ता विनम्र होकर पीछे-पीछे चल पड़ता है।

कहीं किसी आश्रय में उसी प्रकार उसकी वह रात गुजरी।

इसी प्रकार चार दिन बीत गए। एक दिन आदमी ने उसका शृंगार किया। आधा बातों से, आधा हाथ के संकेतों से उसे समझाया...।

मैं किसी नए को लेकर आता हूँ। तुम्हें चुप रहना होगा। मुँह मत खोलना। यह मत बताना कि तुम गूँगी हो।

वह बेचारी कूँई-कूँई कर रही थी। उसे गूँगी कहकर वह जब हाथ से इशारे करता तो उसे बहुत गुस्सा आता, पर सारा गुस्सा उसकी कूँई-कूँई में समाप्त हो जाता।

वह आदमी एक-दो को साथ लेकर आया। आने वाले जरा संभ्रांत से दिख रहे थे। वह उनके सामने दाँत निपोर रहा था।

खाने के सामान पर जैसे कुत्ते की नजर गड़ी रहती है, इसी तरह उसकी आँखें उनकी जेबों पर लगी थीं।

उनमें एक तो शुद्ध पशु सरीखा था। वह उसके अंगांगों को दबा-दबाकर दर्द देता था।

वह दर्द सह न पाई। उसने ‘वा-वा’ करके विरोध किया। दोनों हाथों से उसे परे धकेलकर नीचे गिरा दिया। झगड़ा हो गया। उसके मालिक ने एक पालतू कुत्ते की भाँति उसकी पिटाई की। वह गुड़-मुड़ी होकर कोने में जाकर पड़ी रही। आने वाले मुँह सिकोड़ कर चले गए।

आधी रात को उस व्यक्ति ने उसे उठाकर चटाई पर लिटाया और पूछा, “क्या बहुत दर्द हुआ?” वह कुछ न बोली। आँखें तो बहुत-सी बातें कह रही थीं, पर उस क्षुद्र मानव को उसका अर्थ समझ में न आया।

तब से काणी सीधी हो गई।

उस लड़की ने उस व्यक्ति से प्यार नहीं किया। पहली बार जिस प्रकार उसने टुंडे से प्यार किया था, वैसे फिर किसी से भी प्यार न कर सकी।

काणी पैसे की कीमत समझने लगी। पता नहीं कितने पैसे आ रहे थे। दो साड़ी-ब्लाउज, रात के समय पहनने को फूल, खुशबूदार तेल, पेट भर खाना-पीना-सभी कुछ। इसी प्रकार दिन बीते।

भाग्य की बात थी, उसे पेट नहीं रहा। इतना होने पर भी एक दिन उसकी छाती में दर्द हुआ। वह धरती पर लेटकर तड़पने लगी। अपने गाँव की झोंपड़ी, अपनी भाषा बोलने वाले लोग, टुंडे हाथ वाला पहला साथी-सब याद आए। जोर-जोर से हाय-हाय करने लगी। दो रात इसी तरह रहा। ग्राहक नहीं आए। तीसरे दिन सुबह वह वहाँ से

सामान और खाना-पीना बाँधकर भाग निकली। नगर के किसी दूसरे कोने में पहुँचकर उस व्यक्ति से दूर चली गई।

वहाँ से चलते-चलते वह एक गाँव में पहुँच गई। एक किसान हल चला रहा था। उसने सबको मौन होकर देखा। बिखरे बालों को कंघी करने की ओर उसका ध्यान नहीं गया। एक आने के शीशे में मुँह देखने की भी इच्छा न हुई। खाना खाने का मन भी न हुआ।

वर्षा की बूँदें पड़ जाने से चारों ओर भूमि पर हरियाली थी। नई घास पर काणी एक जगह बैठ गई।

उसे अपने बचपन की सैकड़ों यादें आने लगीं। मुँह उतर गया। धीरे से ऊँघ आने लगी। वहीं सो गई।

साँझ को कुछ किसानों की स्त्रियों के, 'ऐ-ऐ-श-श' करते ही उसकी नींद खुली।

अँधेरा होते-होते उसे गाँव में डर लगने लगा। वह दौड़कर नगर पहुँची।

एक कोने में एक स्कूल था। रात को वहाँ कोई नहीं रहता था। वहीं बरामदे के एक कोने में वह सो गई।

सुबह होते ही वह उठ बैठी। कपड़े-लत्ते ठीक किए। जरा शृंगार भी किया। यूँ ही घूमते-घूमते उस जगह का परिचय भी हो गया। लंबा-चौड़ा मैदान। चारों ओर हरी घास थी। वहीं वह सर्कल था। उसके बीच किसी की एक प्रतिमा भी लगी थी। दूर एक बहुत बड़ी इमारत थी।

वहीं एक कोने में एक आदमी मूँगफली बेच रहा था। हाथ में जो चिल्हर थे, उसे देकर उसने मूँगफली खरीदी, तो उसे पता चला कि पैसों की क्या कीमत है। समझ में आ गया।

भूख मिटी नहीं।

अँधेरा होने के बाद सर्कल के पास जाकर बैठ गई। बीच की एक बत्ती का मंद प्रकाश भी वहाँ पड़ रहा था। वहाँ से गुजरने वाले उसकी ओर देखकर निकलते थे। एक-दो तो पीछे मुड़कर भी देखते।

जरा गंभीर दिखने वाला एक आदमी दो बार गुजरा। काणी वहाँ से उठी और सर्कल से मैदान के पेड़ की ओर चल पड़ी और वहाँ से एक झाड़ी की ओर चल दी तो पीछे मुड़कर भी देखते।

दूसरे दिन काणी को पता चला कि कागज का टुकड़ा देने से खाने की चीजें मिलती हैं, भोजन मिलता है और पैसे भी वापस मिलते हैं। उससे कितने पैसे वापस मिलते हैं और क्या नहीं मिलता, इसका उसे ज्ञान न था। तब से वह दिन भर भटकती रहती। संध्या के समय सर्कल में एक-दो से परिचय हो गया, समीप का घासवाला मैदान बिस्तर बना। वहीं एक-दो बार मरना-मर कर जीना।

जीकर फिर उससे अगले दिन मरना। ऐसे ही समय बीतता चला...कैसे-कैसे लोग उसके पास आते थे—वह स्वयं भी नहीं जानती थी। शराबी-कवाबी, लफंगे, आवारा, भ्रमरजीवी या विलासी हो सकते थे। दिन में नैतिकता का ढोंग करने वाले कामुक हो सकते थे। घर की अतृप्ति मिटाने वाले भूखे हो सकते थे। वह यह सब नहीं जानती थी। अगर बोलना जानती तो शायद कुछ समझती। मुँह देखकर उनके हाव-भाव से थोड़ा-बहुत समझ पाती। परंतु रात के समय आने वालों का मुँह कैसे देख पाती?

यह मानवीयता थी या पाशविकता? यह उसे मालूम न था। प्रेम और काम के विचार भी उसे पता नहीं थे। नौजवान, छोकरे और बूढ़े उसके लिए बराबर थे। देह थक जाने पर वह कराहती थी। दर्द होने पर गले से अर्थहीन विकृत स्वर निकलते।

वह गूँगी थी। गूँगी से तृप्ति चाहने वालों के मन में क्या-क्या अनुभव होते हैं, यह काणी नहीं जानती थी। सारा व्यवहार यांत्रिक था। वह स्वयं एक साँस लेने वाला यंत्र भर थी।

वर्षा ने जोर पकड़ा। ग्राहक नहीं आए। आमदनी कम हो गई। मन छीजने लगा। काणी दुबली हो गई। काणी स्वयं उठकर लोगों के चक्कर काटने लगी। गालों में गड्ढे पड़ गए, आँखें धँस गईं। बुखार आने लगा। अब वह और ज्यादा शृंगार करने लगी।

वह बल खाकर चलती और ऊनी कोट पहनकर बालों में फूल लगाकर जरा ठीक-ठीक लगती। पर पास जाकर मुँह देखने पर ऐसे लगता जैसे आँखों में भूत नाच रहे हों।

कुछ बदमाश रात को उसकी सोने की जगह—स्कूल में आ जाते थे, पर गाँठ से पैसा न निकालते। वह झगड़ा करती। फिर भी वे उसे तंग करके बलात्कार करते। उनके विकृत अट्टहास और मजाकों का विरोध करते-करते, विफल होकर वह हिचकियाँ

> **साँझ को काणी अपना काला कोट पहनकर धीरे-धीरे चलती, घास का मैदान पार करके जरा अँधेरे कोने में जा बैठी। उसे मिचलाहट होने लगी। गाँव, घर, खेत, माँ, बाप, टुंडा साथी—सब उसकी आँखों के सामने नाचने लगे।**

लेती। 'जो हो जाए' सोचकर सिर झुकाकर उनके अधीन हो जाती।

बुखार बढ़ गया। तालाब में जाकर नहाने का मन होता है।

उसे चमड़ी का कोई रोग हो गया था। युवती काणी बहुत तड़पती रही। शरीर से बदबू उठने लगी।

काणी ने स्थान बदल लिया। एक फर्लांग दूर तक टूटे-फूटे घर के पास रहने लगी। वहाँ एक अधेड़ रोगी भिक्षुक अपना 'राजमहल' बना रहा था।

वह तीन दिन तक काणी को थोड़ा-थोड़ा माँड़ पिलाता रहा।

वह उस टूटी छाजन के तले पड़ी आकाश को निहारती रही।

चौथे दिन बुखार जरा कम हुआ। वह उठकर बैठ गई। उस भिक्षुक ने लालच से उसकी ओर देखा। उसके मुख पर कोई भाव न था। ऐसी भावनाओं को पहचानने की सामर्थ्य उसमें से मर चुकी थी। उस दिन वह भिखारी की देह ने अपनी बहुत दिनों की इच्छा उसके शरीर से पूरी कर ली।

साँझ को काणी अपना काला कोट पहनकर धीरे-धीरे चलती, घास का मैदान पार करके जरा अँधेरे कोने में जा बैठी। उसे मिचलाहट होने लगी। गाँव, घर, खेत, माँ, बाप, टुंडा साथी—सब उसकी आँखों के सामने नाचने लगे। कुली बनने को मद्रास गया भाई और झगड़ा करके घर से भाग जाने वाला छोटा भाई, ऐसा लगा मानो दोनों सामने खड़े होकर उसे बुला रहे हों—दिल दर्द से भर उठा।

वह देर तक खड़ी न रह पाई। वहीं ढह गई। दूर मूँगफली बेचने वालों की जलती ढिबरी उसे अपनी ओर बुला रही थी, लेकिन पास में एक छदाम न था। इच्छा न हुई। हाथ बढ़ाकर मूँगफली उठा लेनी चाहिए, पर सामर्थ्य न था।

एक घंटा बीता, डेढ़ घंटा बीता। फव्वारे के पास बैठे लोग एक-एक करके चले गए, काणी ने हर एक को बड़ी आशा की दृष्टि से देखा।

अंत में दूर एक व्यक्ति खड़ा हो गया। खूब मोटा-ताजा, बदमाश-सा दिखता था। उसने हाथ हिलाकर इशारा किया। वह उठ खड़ी हुई और बड़ी कठिनता से उसके पीछे-पीछे गई। वह भी उस काम में नया था। वहीं झाड़ी के नीचे उसने लड़की को नीचे गिराया। उसके गले से रोने की आवाज निकल पड़ी। नाक-भौंह चढ़ाता वह उठ खड़ा हुआ और धूल झाड़ी। 'धत्' कहकर उस पर थूक दिया। काणी ने उठकर बैठने का यत्न किया, पर शक्ति न थी।

वह फिर से 'धत्' कहकर चल दिया।

पैसे भी नहीं दिए।

काणी ने आर्तनाद के लिए मुँह खोला, पर आवाज न निकली। उठने का प्रयास किया, पर हो न पाया।

वह जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाने लगा।

आखिर में झटककर मुश्किल से खड़ी हुई। सद्यःजात बच्चा छीनकर ले जाने वाले पापी के समान उसने उसका पीछा किया।

वह मुँह पीट-पीटकर रोने लगी।

उसका अर्थ यही था कि वह उसे कुछ दिए बिना भागा जा रहा है। यह अन्याय है। उस आदमी को उसके मुँह का कौर नहीं छीनना चाहिए।

वह आदमी घबराकर खड़ा होकर देखने लगा। लोग, अभी आस-पास थे। उसे डर लगा, कोई-न-कोई उसका पीछा कर सकता है।

वह आसामी झट से पीछे मुड़ा और उसके पास गया। उसका टेंटुवा दबाकर, धक्का देकर 'हरामजादी' कहकर गाली दी और बूट वाले पाँव से एक ठोकर उसके पेट पर जमाई।

काणी वैसे ही गिर गई। गले से अजीब-सा स्वर निकल तो रहा था, पर बाहर सुनाई नहीं पड़ रहा था।

साँस चल रही थी। रुक-रुककर धीरे-धीरे वे ही उसकी अंतिम साँसें थीं।

सुबह हुई।

सूर्योदय के साथ-साथ गरमी बढ़ने लगी। जिन्हें सर्कल पार करके ही जाना था,

वे बायीं ओर आँखें कर, सिर नीचा करके तेजी से निकल जाते। सब चलते जा रहे थे। रुकने वाला कोई न था।

कोई कह रहा था, "म्यूनिसिपैलिटी की वैन उस शव को उठाकर ले जाएगी।" काणी की देह पर आँखें गाड़े एक गिद्ध चक्कर काट रहा था। ऐसा लग रहा था कि काणी की फटी आँखें उसी को देखती पड़ी हैं। गिद्ध भी चक्कर लगाता हुआ पास-पास आता जा रहा था...।

...अंतिम ग्राहक!

(यह कहानी जी.एच. नायक द्वारा संपादित और बी.आर. नारायण द्वारा अनूदित और राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत से प्रकाशित पुस्तक 'कन्नड़ कहानियाँ' से ली गई है।)

रवीन्द्रनाथ ठाकुर का पहला हिंदी भाषण

महाकवि तथा नोबेल पुरस्कार से सम्मानित रवीन्द्रनाथ ठाकुर को सारा विश्व जानता है। वे यद्यपि बांग्ला के लेखक थे, परंतु उनकी रचनाएँ विश्व की अधिकांश भाषाओं के पाठकों तक पहुँचीं और वे विश्व के श्रेष्ठतम साहित्यकारों में प्रतिष्ठित हुए। इधर उनकी 150वीं जन्मतिथि पर देश-विदेश में अनेक कार्यक्रम हो रहे हैं और उनके कुछ दुर्लभ दस्तावेजों के नीलाम होने के समाचार ने साहित्य-प्रेमियों को उद्वेलित भी किया है।

डॉ. कमलकिशोर गोयनका

दिल्ली के जाकिर हुसैन कॉलेज से अवकाशप्राप्त डॉ. गोयनका प्रेमचंद साहित्य के अधिकारी विद्वान एवं प्रामाणिक शोधकर्ता माने जाते हैं। साहित्य अकादमी द्वारा प्रकाशित 'प्रेमचंद ग्रंथावली' के संकलन एवं संपादन में उनका विशेष योगदान है।

प्रकाशन : प्रेमचंद पर 27 पुस्तकें तथा अन्य लेखकों पर 21 पुस्तकें प्रकाशित।

सम्मान : भारतीय भाषा परिषद, कोलकाता के 'नथमल भुवालका पुरस्कार' से सम्मानित; हिंदी अकादमी, दिल्ली द्वारा दो बार सम्मानित; उत्तर-प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ का 'साहित्य भूषण' पुरस्कार; केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा का पं. राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार; भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार (भारत सरकार); 2014 का व्यास सम्मान।

संपर्क : ईमेल– kkgoyanka@gmail.com

रवीन्द्रनाथ ठाकुर के हिंदी भाषा तथा हिंदी साहित्यकारों के साथ कैसे संबंध थे, इसकी खोज-खबर अभी नहीं हुई है। डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी अवश्य ही 'शांति निकेतन' में अध्यापन करते हुए ठाकुर के संपर्क में रहे। डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी प्रेमचंद को ठाकुर से मिलाना चाहते थे। डॉ. द्विवेदी ने 26 मार्च, 1935 को प्रेमचंद को आमंत्रित करते हुए पत्र में लिखा, "उस दिन पं. बनारसीदास जी के साथ गुरुदेव (कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर) से मिलने गया था। बातों-ही-बातों में वर्तमान हिंदी साहित्य के संबंध में चर्चा चली। ऐसे अवसरों पर आपका नाम सबसे पहले आता है। उस दिन भी आपके रचित साहित्य की चर्चा बड़ी देर तक चलती रही। हम लोगों की इच्छा थी कि नव वर्ष के अवसर पर आप जैसे आदरणीय साहित्यिकों को निमंत्रित करें और गुरुदेव से परिचय करावें। गुरुदेव ने हम लोगों के विचार का उत्साह के साथ स्वागत किया। गुरुदेव और आश्रम की ओर से निमंत्रण तो यथा-समय जाएगा ही, इसके पहले ही हम हिंदी समाज की ओर से निमंत्रित करते हैं। इस बार आप जरूर पधारें। आपको गुरुदेव से मिलाकर हम गर्व अनुभव करेंगे।"

प्रेमचंद इस निमंत्रण को स्वीकार न कर सके और इन दो महान साहित्यकारों की भेंट न हो सकी। प्रेमचंद के लिए शांति-निकेतन कोई आकर्षण का केंद्र न था और वे वहाँ कोई विद्वतापूर्ण भाषण देने में भी स्वयं को असमर्थ पाते थे, किंतु इतिहास में जो घटना घट सकती थी, वह घटने से रह गई।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर और महात्मा गांधी के संबंधों ने इतिहास की रचना की। गांधी के निमंत्रण पर टैगोर ने 'छठे गुजराती साहित्य परिषद' के सम्मेलन में सभापति के रूप में भाषण दिया और गांधी की इच्छानुसार उन्होंने अपना भाषण हिंदी में दिया। यह सम्मेलन 02 अप्रैल, 1920 को भावनगर में हुआ और ठाकुर का भाषण, बिना किसी संशोधन के, 'प्रभा' के 01 मार्च, 1925 (वर्ष : 6, अंक : 3) के अंक में प्रकाशित हुआ। ठाकुर का यह हिंदी में दिया गया पहला भाषण था। इसे पाठकों तक पहुँचाने तथा इस ऐतिहासिक दस्तावेज को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से यह भाषण यहाँ प्रस्तुत है–

कविवर रवीन्द्र ठाकुर की हिंदी-वक्तृता

आपकी सेवा में खड़ा होकर विदेशीय भाषा कहूँ, यह हम चाहते नहीं, पर जिस प्रांत में मेरा घर है वहाँ सभा में कहने-लायक हिंदी का व्यवहार है नहीं।

महात्मा गांधी महाराज की भी आशा है हिंदी में कहने के लिए। यदि हम समर्थ होते तब इससे बड़ा आनंद और कुछ होता नहीं। असमर्थ होने पर भी आपकी सेवा में मैं दो-चार बात हिंदी में बोलूँगा। सारी राह में आप-सभों का समादर का स्वाद पाते-पाते, हम आए हैं। हरेक स्टेशन में बालवृद्ध बनिता हमको सत्कार किए हैं, मेरा घट तो पूर्ण होने को चला है, पर पूर्ण घट से आवाज तो निकलना चाहती नहीं। तौ नौ निःशब्द में यानी खामोश रहकर आपकी प्रीति का अर्घ्य ग्रहण करूँ, ऐसी असभ्यता भी सह सकूँ किस तरह से?

जो सभी सुवक्ता लोकसभा के चबूतरा पर चढ़कर अपनी भाषा के प्रवाह से सर्वसाधारण के चित्त अनायास से वहाँ ले जा सकते हैं इतना दिन उन सभों पर मेरी ईर्ष्या याने हसद् न थी; आज चाहते हैं कि यदि उनकी ऐसी सहज वाक्-शक्ति हमारी भी होती, ईश्वर मुझे दिए होते तब बस यहीं से फौरन मैं नगद आपका कर्जा चुका देने की चेष्टा करता।

लेकिन मैं सिर्फ कवि हूँ। वाक्य तो मेरा कंठ में है नहीं, है दिल में। मेरी वाणी ऐसा जलसा में बाहर होने तो चाहती नहीं, वह रहती है छंद का अंदर महल में। उसी वाणी की साधना में सारी जिंदगी-भर मैंने निर्ज्जनवास को स्वीकार कर लिया है, मैं तो पौरसभा के योग्य नहीं हो सका हूँ। प्रकृति जिस निभृत जगह में अपनी-फूलों को विकसित करती है, वहीं मैं गाने के लिए प्रभु का आदेश पाया हूँ। वहाँ से अगर मुझे जमायत में कोई खींच ले आवे तब मै गूँगा बन जाता हूँ, दिल भर जाने से भी मुख तो खुलना चाहता नहीं। यही तो मेरी मुश्किल है। जब तक हम लोकालय यानी इनसानों के वतन से दूर में रहता हूँ तब तक मेरा सूर वहाँ पोंछ सकता है। सभों के सामने अगर मुझे खींचा जाए तो मैं बिलकुल गूँगा बन जाता हूँ।

मैं गीत गाने वाली चिड़िया ऐसा हूँ। पत्तों के परदे में मेरा गीत है—तब ही मेरा गीत घरों में सब आदमियों के पास पहुँचता है, पर आज आप सभों में समादर करके मुझे सभा के मध्य में चढ़ा दिया है। आप किसी के पास उम्मीद करते हैं वक्तृता, यानी बाँसुरी को चाहते हैं लगाने लाठी के काम में। इसलिए यदि वह काम अच्छी तरह से न बने तब विधाता की निंदा कीजिए। वह मुझे शक्ति बाँटने के समय में कृपणता किया है, अगर विधाता ने मुझे कुछ दिया हो तो दिया है कवित्व-बोलने की शक्ति नहीं। विधाता की इस कृपणता से मुझमें भी दीनता आ पहुँची है। सभा में खड़ा हो करके आप लोगों को अपार आनंद दूँ या उपदेश दूँ या काम लायक बाते कहूँ ऐसा दाक्षिण्य दिखाने का सौभाग्य मुझे हुआ नहीं, दाक्षिण्य केवल आप लोगों के तरफ से प्रकाश हुआ, मुझे हार माननी पड़ी।

विनय के साथ हार मानने को तैयार हैं, पर सिर्फ वचन के हार, हृदय में हम हार मानते हैं नहीं। आप लोगों के साथ जो प्रीति का संबंध हुआ है, उस संबंध में मेरा दिल से कुछ भी कमी रह गई, यह हम मानते नहीं।

आप लोगों से जो प्रीति तो समादर लाभ कर रहा हूँ, उसको हम ईश्वर के तरफ से अप्रार्थित दान समझ कर ले रहा हूँ। ईश्वर की दया आदमियों की योग्यता का हिसाब करती नहीं। उनकी दया के योग्य होने की साधना करना ही मेरा कृत्य है। अंतरजामी जानता है कि वह साधना मेरा दिल में है, वही मेरी कवि की साधना।

पर कवि की साधना है क्या चीज? वह और कुछ नहीं बस आनंद के तीर्थ में, रस लोक में विश्व देवता के मंदिर के आँगन में सर्वमानव का मिलन गान से विश्व देवता की अर्चना करना। पृथ्वी के सब मनुष्यों को हम कहाँ पाऊँ, शक्ति का क्षेत्र, जहाँ लड़ाई दिन-रात चल रही है, उस जगह में, या बाजार में, जहाँ खरीद और बेच का शोर और कोलाहल से कान बहरा हो गया है—मनुष्य का मिलन होना है किस-किस जगह में—शक्ति की राह में या लाभ की राह में? सब राहों की चौमुहानी पर कवि की बाँसुरी टेर से यह सुनाने के लिए है कि जिस प्रेम की राह में मुझको ईश्वर बुला रहे हैं, वहाँ जाने का संबल है। दुख को स्वीकार करना, अपने को भरपूर दान करना, और उस राह का परम लाभ है। वह जो है मेरी परमागति, मेरी परम संपति मेरा परम लोक और मेरा परम आनंद। भगवान के वह चरण पद्‌म में सारा भारत का चित्त एक हो जाए, यही एक भाव सारी दुनिया के ऐक्य की राह दिखलावेगा।

यह पृथ्वी सुंदर है, यह नील आकाश उदार है, यह सूर्यालोक पवित्र है। मनुष्य जो जन्म लिया है, सो मार-काट के मरने के लिए नहीं। यह सुंदर जगत में चिर सुंदर के स्पर्शलाभ करने के लिए, यह पवित्र आलोक में चिरपावन के आशीर्वाद को लाभ करने के लिए। यह भारत अपनी तपोवन छाया में एक समय यह घोषणा सारा विश्व को दिया है—वह घोषणा जब से उनके कंठ में मलिन हो गई, तभी से उसका दारिद्य और अपमान। फिर भारत को वही तपस्या लेना है। सारा दुनिया के लिए तपश्चर्या करना है। क्योंकि दुर्दिन आज आ पड़ा है। विश्व वसुंधरा तापित है, श्यामल वसुधा-शोणित से पंकिल और पाप से मलिन है। आज भारत के चिरदिन की साधना का शून्य आसन फिर ग्रहण करना है। ब्रह्मलोक की वार्ता सर्वत्र पहुँचाना है—

एष सेतु विंधरण असम्भे दायलोकानाम्-नैनम् सेतु-रहोरात्रे तरतः नं शोको न जरान मृत्युः एतम् सेतुम् तीर्त्वा अन्धःसन् अनन्धो भवति विद्धः सन् अविद्धो भवति, उपहापीसन् अनुतापी भवति सकृद्विभातो ह्ये वेष ब्रह्मलोकः। यह सेतु सर्व लोगों को धारण करने के लिए है, संभेद को दूर करने के लिए है, अधोरात्रि यह सेतु को लंघन कर सकता नहीं, शोक-जरा-मृत्यु इसको लंगन कर सकता नहीं, इसको पार हो करके अंध अनंध हो जाते हैं, पापी निष्पाप हो जाते हैं, शोकार्त्त विगतशोक हो जाते हैं, यह ब्रह्मलोक उदय मात्र और अवसान को प्राप्त होता नहीं।

(रवीन्द्रनाथ ठाकुर का पहला हिंदी भाषण, 02 अप्रैल, 1920 भावनगर; 01 मार्च, 1925 को 'प्रभा' में प्रकाशित लेख का अंश)

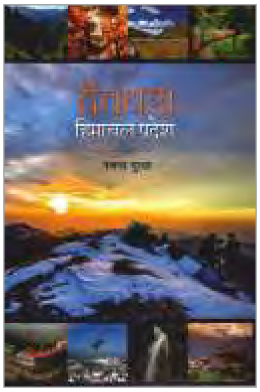

समीक्षक : **सूर्य कांत शर्मा**

लेखिका : **रचना गुप्ता**

प्रकाशक : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली-110070

पृष्ठ : 152

मूल्य : रु. 220/-

देवधरा : हिमाचल प्रदेश

अपनी स्वर्ण जयंती मना रहा हिमाचल प्रदेश आज के परिप्रेक्ष्य में एक प्रगतिशील और भारत के लोकतांत्रिक आकाश में एक चमकता हुआ धूमकेतु है और आजादी के अमृत वर्ष में हिमाचल प्रदेश की चर्चा करना बेहद अहम हो जाता है। यदि इस पर प्रकाशित पुस्तक सारगर्भित, सरस, सरल और गागर में सागर हो तो इसे पढ़ने में न केवल ज्ञान की अभिवृद्धि होती है, वरन् देवधरा हिमाचल प्रदेश के बारे में जानने की उत्सुकता या सही मायनों में उत्कंठा बढ़ जाती है। कुल 10 अध्यायों में लेखिका ने अपने अनुभव को बहुत ही सरल शब्दों में परंतु मानीखेज अंदाज में प्रस्तुत किया है।

पुस्तक का प्रत्येक अध्याय यथा 'अतीत के पृष्ठ', 'इतिहास के शिखर', 'राज्य की रचना', 'समृद्धि के मील के पत्थर', 'पर्यटन का प्रवाह ज्ञान और प्रगति के सोपान', 'सड़कों का सफर', 'राजनीतिक लोग व संस्थाएँ', 'ऊर्जा का उपहार' और 'वन्य समृद्धि में राज्य के अतीत की पृष्ठभूमि, प्रयास, संघर्ष, वर्तमान संदर्भ और आँकड़ों सहित औचित्यपूर्ण सरल, सहज और रोचक विवेचना पुस्तक की पठनीयता को बढ़ाकर एक अलग आयाम देती है। उदाहरण के तौर पर, हिमाचल देवधरा में 95.17 प्रतिशत आबादी हिंदू है और अन्य धर्म के लोग भी यहाँ रहते हैं, पर हिंदू देवी-देवताओं की लीलास्थली रही है। हिंदू धर्म विश्व का प्राचीन धर्म है। पूरे विश्व में हिंदू धर्म के 90 करोड़ अनुयायी हैं और जिनमें से 95 फ़ीसदी हिंदू भारत में रहते हैं और बाकी पूरे विश्व में हैं। विश्व स्तर पर ईसाइयत और इस्लाम के बाद हिंदू धर्म का तीसरा स्थान है जो पूरी दुनिया में 13 फीसद से ज्यादा है। अध्यायों के बीच-बीच में दिए गए चित्र पुस्तक की विषयवस्तु और प्रासंगिकता को जीवंतता देते हैं और साथ-ही-साथ युवा पीढ़ी को सूचित कर शिक्षित करने और अन्य जन को अपनी संस्कृति, भौगोलिक स्थिति, रीति-रिवाजों, संघर्षों पर गर्व करने का एक अनुपम अवसर देते से प्रतीत होते हैं।

'समृद्धि के मील के पत्थर' अध्याय में राज्य की प्रगति का सिलसिलेवार ब्यौरा प्रस्तुत करते हैं। राज्य की दोमुखी प्रगति के आँकड़े, समस्याओं का ब्यौरा, संघर्षों का वर्णन संक्षिप्त और सारगर्भित अंदाज में दिया गया है। एक और तथ्य जो पाठकों को रुचिकर लगेगा, वह यह कि हिमाचल प्रदेश में 89.96 फीसदी आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है और खेती तथा बागवानी यहाँ के लोगों का मुख्य व्यवसाय है। समय के साथ-साथ इस प्रदेश में सकल मूल्य संवर्धन में कृषि और संबद्ध क्षेत्रों के योगदान पर दी गई आँकड़ों की पृष्ठभूमि लेखिका के प्रत्येक दावे को औचित्यपूर्ण तरीके से प्रस्तुत करती है।

'पर्यटन प्रवाह' अध्याय राज्य के पर्यटन और संबंधित घटकों पर एक विहंगम दृष्टि डालकर व्यावहारिकता की कसौटी पर सभी को परख कर एक सुंदर और स्वर्णिम भविष्य की आभा बिखेरता है। हिमाचल प्रदेश की शिक्षा की समग्र पड़ताल की गई है और कुछ रोचक तथ्य यथा पूर्ण राज्य बनने के बाद हिमाचल प्रदेश, देश का पहला ऐसा प्रदेश है जिसने प्राथमिक शिक्षा तक हर बच्चे की पहुँच को सुनिश्चित कर दिया।

अध्याय 'प्रगति की राहें' बेहद संवेदनशीलता से प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में उसकी प्रगति का लेखा-जोखा आँकड़ों के आधार पर बताता है। आज हिमाचल प्रदेश अपने 50 वर्ष के समय में विकास की दास्तान ही नहीं, बल्कि सड़क और टनल इंजीनियरिंग में एक मिसाल कायम कर चुका है। बर्फीली पहाड़ियों का सीना चीरती सुरंगें अपने आप में बेमिसाल उदाहरण हैं।

हिमाचल प्रदेश के मनाली में सामरिक और सुरक्षा की दृष्टि से 8.8 किलोमीटर लंबी सुरंग बनाई गई है। रोहतांग दर्रे का सीना चीरती यह सुरंग 'अटल रोहतांग टनल' के नाम से जानी जाती है। इससे मनाली और लाहौल स्पीति के बीच की 46 किलोमीटर दूरी कम हो गई है और यह मार्ग अब पूरे वर्ष खुला रहता है जिससे स्थानीय लोगों के जीवन में आमूलचूल परिवर्तन आया है।

पुस्तक का सबसे छोटा पर बेहद महत्वपूर्ण अध्याय 'ऊर्जा शक्ति', हिमाचल प्रदेश की ऊर्जा की पहले की स्थिति और वर्तमान की स्थिति को दर्शाता है। बर्फीले क्षेत्रों के दूर-दराज के गाँवों में लालटेन की रोशनी के बीच से चलती हुई यह यात्रा आज पड़ोसी और बड़े राज्यों को विद्युत आपूर्ति का गढ़ बनना बताती है। पाँच-पाँच नदियों यथा रावी, व्यास, सतलुज की यह भूमि देश के ऊर्जा क्षेत्र में नित नए इतिहास रचती जा रही है।

यह पुस्तक अपने शीर्षक को पूर्णतया परिभाषित करती है और तथ्य जो पाठकों को रुचिकर लगेगा, वह यह कि प्रस्तुत पुस्तक विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओं में शामिल होने वाले अभ्यर्थियों के लिए विशेष रूप से सहायक सिद्ध होगी और ऐसी ही पुस्तकें किसी भी प्रदेश के ऊपर लिखी जानी चाहिए। संक्षेप में यह कह सकते हैं कि लेखिका ने अपने अनुभव और लेखन शैली को इस पुस्तक में बहुत सुंदर और उपयोगी अंदाज में निहित कर दिया है। अतः यह पुस्तक संग्रहणीय श्रेणी में आती है।

प्रोटीन के रहस्य

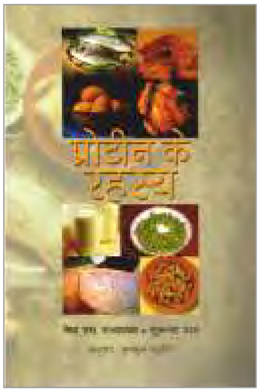

समीक्षक : **सूर्य कांत शर्मा**

लेखिका : **मेधा एस. राजाध्यक्ष एवं सुकन्या दत्ता**

अनुवादक : कुमकुम चतुर्वेदी

प्रकाशक : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली-110070

पृष्ठ : 108

मूल्य : रु. 180/-

प्रोटीन की दुनिया जितनी दिलचस्प है, उतनी ही रहस्यमयी भी है। ऐसे में हिंदी पाठकों को कोई ऐसी पुस्तक मिले जो इसे रोचक और तथ्यपूर्ण दृष्टि, परंतु वस्तुपरक अंदाज में प्रस्तुत करे तो क्या बात है? यूँ भी हिंदी जगत में लोकप्रिय विज्ञान में अच्छी, सरल, सहज एवं सारगर्भित अनूदित प्रकाशनों का संसार समृद्ध नहीं कहा जा सकता है। लोकप्रिय विज्ञान में अनुवाद एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। वैज्ञानिक तकनीकी शब्दावली के अनुपालन में विज्ञान का कौतूहल और उत्सुकता कहीं खो-से जाते हैं। ऐसे में, पुस्तक 'प्रोटीन के रहस्य' इस दिशा में एक उपयुक्त और सशक्त प्रयास है। पुस्तक प्रोटीन के रहस्यों को परत-दर-परत विभिन्न अध्यायों में बताती है। यूँ भी देखा जाए, तो प्रोटीन मानव शरीर के लिए बेहद जरूरी है; और मज़े की बात है कि यही प्रोटीन एक आणविक शस्त्र की तरह से भी कार्य करता है, जो कि आनुवंशिक जानकारी को भी बयाँ कर सकता है।

लेखिकाद्वय ने प्रोटीन की कौतूहलपूर्ण दुनिया को बहुत नजदीक से देखा और बताया है। प्रोटीन के प्रमुख कार्यों को बहुत ही संजीदा ढंग से बताया गया है। प्रोटीन की बहुआयामी भूमिकाओं को भी दिलचस्प अंदाज से परिभाषित करके आम भाषा में इसे समझाने का सफल प्रयास किया गया है। प्रोटीन कुपोषण के दुष्परिणामों को भी वस्तुपरक अंदाज में लिखा गया है। कुल नौ अध्यायों में प्रोटीन के विषय में सिलसिलेवार तरीके से पाठकों को बताया गया है। उदाहरण और चित्र भी काफी मेहनत से तैयार किए गए हैं।

प्रोटीन हमारे शरीर की निर्माण इकाई है। ये कोशिकाओं को आकार और आमाप प्रदान करते हैं। हमारे शरीर में हजारों प्रकार के प्रोटीन होते हैं, जिसमें से अधिकांश की खोज अभी शेष है। सरल शब्दों में कह सकते हैं, प्रोटीन छोटी मशीनों की तरह है, जो जीवन की प्रक्रिया को निर्बाध रूप से चलाती रहती हैं। यहीं पर एंजाइम की एक अपनी भूमिका है। हैरानी की बात यह है कि प्रोटीन की खोज इतनी आसानी से नहीं हो पाई। इसके लिए अनेक वैज्ञानिकों ने लगातार वर्षों तक जी तोड़ मेहनत की। ऐसे ही कुछ तथ्य इस पुस्तक में वर्णित हैं।

अध्याय 'प्रोटीन के कार्य' बेहद उपयोगी बन पड़ा है। 'प्रोटीन का निर्माण', 'प्रोटीन की काट-छाँट', 'कार्य के लिए रूपांतरण', 'प्रोटीनों का अध्ययन' इत्यादि अध्याय पाठकों को प्रोटीन की दुनिया की बारीकियों को दिखाने समझाने में सक्षम हैं। पुस्तक के अंतिम दो अध्याय यथा 'पीड़ादायी प्रोटीन' और 'प्रोटीन एक भोजन के रूप में' बेहद दिलचस्प और जानकारी से परिपूर्ण और विचारोत्तेजक हैं।

वास्तव में प्रोटीन की भूमिका अहम है। दोषपूर्ण प्रोटीन संश्लेषण आनुवंशिक रोगों की जड़ है। वैज्ञानिक सर ए. गैरोड़ ने एक आनुवंशिक रोग 'एलकैप्टोन्यूरिया' जिसमें रोगी जोड़ों और रीढ़ की प्रगामी क्षति, त्वचा तथा वर्णांधता रोगों से भी पीड़ित होते हैं, सन् 1902 में इसे प्रोटीन के असामान्य उपापचयी प्रक्रिया के कारण होने वाले रोग के रूप में वर्णित किया था। पाठकों को यह बताने के लिए कि प्रोटीन विशेष की कमी कितनी भयावह और कष्टदायी है, लेखिकाद्वय ने कुछ वैज्ञानिक तथ्य भी दिए हैं।

पुस्तक का आखिरी अध्याय बेहद सजीव और जनोपयोगी बन पड़ा है। प्रत्येक अध्याय के ऊपर दिए गए प्रसिद्ध और जाने-माने विद्वतजनों के उद्गार, सारांश इंगित करते हैं। आज का युवा तो सारांश पर और भी केंद्रित हो जाता है। कुल मिलाकर, लोकोपयोगी विज्ञान के हिंदी जगत में यह पुस्तक अपनी प्रभावी उपस्थिति दर्ज कराने में सक्षम है।

प्रेमचंद : चित्रात्मक जीवनी

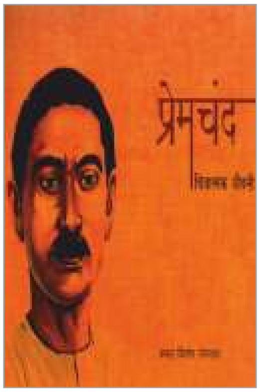

समीक्षक : **उमेश चतुर्वेदी**

लेखक : **कमल किशोर गोयनका**

प्रकाशक : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली-110070

पृष्ठ : 64

मूल्य : रु. 50/-

हिंदी दुनिया में उपन्यास सम्राट प्रेमचंद उस मुकाम पर पहुँच चुके हैं, जिनके बिना साहित्य का संसार पूरा नहीं हो सकता। प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च शिक्षा तक के पाठ्यक्रम में प्रेमचंद तमाम रूपों में मौजूद हैं। किसी कक्षा में उनके निबंध शामिल हैं तो ज्यादातर कक्षाओं में उनकी कहानियाँ हैं। कहीं 'मंत्र' तो कहीं 'ईदगाह', कहीं 'पंच परमेश्वर' तो कहीं 'कफन', कहीं 'पूस की रात' तो कहीं 'नशा', तो किसी कक्षा में 'बड़े

घर की बेटी' को छात्र पढ़ते भी हैं और गुनते भी हैं। हिंदी उपन्यास के इतिहास में 'गबन' और 'गोदान' प्रस्थान बिंदु बन चुके हैं।

ये उदाहरण इस बात का प्रतीक हैं कि प्रेमचंद का रचनात्मक व्यक्तित्व कितना विराट है, हिंदी साहित्य और साहित्यिक पत्रकारिता में उनका योगदान महत्वपूर्ण है। यही वजह है कि प्रेमचंद को जानने और समझने की जिज्ञासा हिंदी प्रेमियों में लगातार बनी रहती है। जो दूसरी भाषाओं में अनुवाद के जरिए प्रेमचंद की रचनात्मक यात्रा से गुजरे हैं या उनकी रचनात्मक पगडंडी पर कभी ठिठके हैं, वे भी प्रेमचंद को गहराई से जानना चाहते हैं। हिंदी के इस विराट रचनाकार की जिंदगी, उनकी रचनाधर्मिता और उनके संघर्षों को भी जानना चाहते हैं। अपनी जीवन यात्रा में किन कठिनाइयों से गुजरना पड़ा, प्रेमचंद के जिज्ञासु पाठक उसे भी जानना चाहते हैं। प्रेमचंद की तीन प्रमुख रचनाएँ, दो कहानियाँ—'कफन' और 'पूस की रात' के साथ ही उपन्यास 'गोदान' ही ऐसे हैं, जिनका अंत त्रासद बिंदु पर हुआ है। अन्यथा उनकी तमाम रचनाओं का अंत आदर्श के साथ हुआ। पाठक यह भी जानना चाहते हैं कि आदर्श से यथार्थवाद को छूने तक की उपन्यास सम्राट की यात्रा कैसी रही? पाठक यह भी जानना चाहते हैं कि प्रेमचंद जब सक्रिय थे तो उनके बारे में तमाम अखबारों में क्या छपता था, पत्रिकाओं में उन्हें लेकर राय कैसी थी।

अगर पाठक किशोर हों तो उनकी जिज्ञासाएँ कुछ ज्यादा भी होती हैं। किशोर मन की ऐसी ही तमाम जिज्ञासाओं का समाधान करने की कोशिश है—प्रेमचंद : चित्रात्मक जीवनी। जैसा कि पुस्तक का नाम है, किशोर मन को समझाने के लिए इस पुस्तक में हर एक पृष्ठ के बाद या तो चित्र हैं या फिर प्रेमचंद को लेकर जाहिर की गई कोई राय, उनके दौर के किसी अखबार की कतरन या फिर उनकी किसी प्रमुख रचना को लेकर प्रेमचंद की अपनी राय चित्रात्मक रूप में है।

चित्रों के जरिए किशोर पाठकों को समझाने में आसानी होती है। चूँकि इस पुस्तक को प्रेमचंद साहित्य के अनथक शोधार्थी कमल किशोर गोयनका ने लिखा है, "लिहाजा इस पुस्तक में प्रेमचंद के जीवन से जुड़ी तमाम महत्वपूर्ण घटनाओं, उनकी नौकरी, नौकरी के बाद प्रकाशन खोलने, जागरण प्रकाशित करने आदि की जानकारी दी गई है। हर महत्वपूर्ण जानकारी के साथ संबंधित चित्र भी दिए गए हैं या फिर उनसे जुड़ी घटना की तात्कालिक किसी अखबार में छपी अखबार आदि की कटिंग की भी फोटो प्रकाशित की गई है। पुस्तक के अंत में उनकी सभी प्रकाशित रचनाओं की सूची भी दी गई है। इसमें प्रेमचंद के लिखे 15 उपन्यास, 46 कहानी संग्रह, तीन नाटक, लेखों के चार संग्रह और बाल साहित्य की चार रचनाओं की जानकारी दी गई है। इस सूची से पता चलता है कि प्रेमचंद ने महात्मा शेखसादी और दुर्गादास की जीवनी लिखी थी। इसके साथ ही उन्होंने दस पुस्तकों का अनुवाद किया था।"

इस पुस्तक से पता चलता है कि प्रेमचंद के पहले समीक्षक महावीर प्रसाद द्विवेदी थे, जिन्होंने उनके कहानी संग्रह 'सोजे वतन' की संक्षिप्त समीक्षा सरस्वती के दिसंबर 1908 के अंक में प्रकाशित की थी। इसी पुस्तक से पता चलता है कि घाटा सहकर भी उन्होंने 'जागरण' नामक साप्ताहिक निकाला और बाद में पौने दो साल बाद उसे बंद कर देना पड़ा। इस पुस्तक में उनके सरस्वती प्रेस और उसमें हुई कर्मचारियों की हड़ताल आदि का विस्तृत विवरण भी दिया गया है।

प्रेमचंद की जीवनी के इस किशोरोपयोगी संस्करण से निश्चित तौर पर हिंदी के नए और भावी पाठक प्रेमचंद की जिंदगी की संघर्ष यात्रा, हिंदी साहित्य और पत्रकारिता में उनके भावी योगदान को समझ सकेंगे।

ब्रज का भाव भूगोल

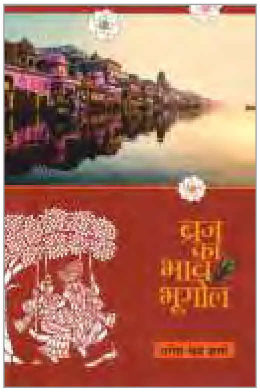

समीक्षक : **डॉ. सुशीलकुमार फुल्ल**

लेखक : **उमेश चंद्र शर्मा**

प्रकाशक : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली-110070

पृष्ठ : 186

मूल्य : रु. 235/-

डॉ. उमेश चन्द्र शर्मा विरचित पुस्तक 'ब्रज का भाव भूगोल' ब्रज माहात्म्य का शोधपरक ग्रंथ है, जो ब्रज क्षेत्र के भूगोल, भाषा सौंदर्य, लोक संस्कृति की माधुर्यपूर्ण अनुगूँज, भक्ति के औदात्य और ब्रज क्षेत्र की वन संपदा की विविधता का वर्णन विस्तारपूर्वक अनूठी शैली में प्रस्तुत करती है। लेखक ब्रज भूमि का चित्रांकन इतनी तन्मयता से करता है कि क्षेत्र का कण-कण पाठक के सामने उजागर हो उठता है, एक प्रकार का सम्मोहन उसे बाँधे रखता है।

पुस्तक की भूमिका में लेखक ने 'ब्रज' शब्द की विस्तार से व्युत्पत्तिमूलक व्याख्या करते हुए स्थान के महत्व को रेखांकित किया है और संदर्भों सहित यह प्रमाणित किया है कि चारों धाम के लिए मार्ग यहीं से होकर जाता है। वेदों-पुराणों से संकेत उठाते हुए मथुरा, वृंदावन, गोकुल, गोवर्धन आदि की चर्चा करते हुए स्थान की महिमा का उल्लेख 'आध्यात्मिक चितवन' के प्रतीक के रूप में किया है। भूमिका के अतिरिक्त पुस्तक में छह अध्याय और उपसंहार सम्मिलित हैं। प्रथम अध्याय में ब्रज के भाव भूगोल की संकल्पना की आधिकारिक व्याख्या की गई है। दूसरे अध्याय में भक्ति भाव और ब्रज का स्पष्टीकरण। भक्ति में मान्य प्रमुख वात्सल्य, सख्य, माधुर्य, सखी भाव का वर्णन है। साथ ही माधुर्योन्मुख भावों के राधा केंद्रित, गोपी केंद्रित, सखी केंद्रित माधुर्य भावों का परिचयात्मक वर्णन है। तीसरे अध्याय में ब्रज में भक्ति भावना, चौथे में भक्ति भावनाओं का

भावान्वेषण, पाँचवें अध्याय में भाव केंद्रों की संरचना और छठे अध्याय में 'ब्रज के भाव प्रतीक विग्रह' लिए गए हैं। उपसंहार में लेखक ने अपनी मान्यताओं को एक बार पुनः संक्षेप में और अधिक सरलता के साथ प्रस्तुत किया है।

वैष्णव धर्म के प्रचार-प्रसार को माँ भक्ति तथा उसके दो पुत्रों—ज्ञान एवं वैराग्य के रूपक के माध्यम से मनोरंजक ढंग से समझाया गया है। भक्ति अर्थात माँ अपने दो पुत्रों के साथ जब दक्षिण से महाराष्ट्र-गुजरात होते हुए वृंदावन पहुँचती है तो अचानक पुत्र वृद्धावस्था को प्राप्त हो जाते हैं, परंतु माँ का रूप तरुणावस्था में परिणत हो जाता है। नारद जी के आगमन पर माँ अपनी कहानी सुनाती है और अपने पुत्रों की स्थिति पर चिंता व्यक्त करती है। तत्क्षण नारद जी ने कारण ज्ञात किया और मुख्य विषय कलि की ओर संकेत करते हुए कहा, "तुम भक्ति वृंदावन में भगवान श्रीकृष्ण की विविध लीलाओं से सदैव चैतन्य रहती हो। अतएव इस भूमि के संस्पर्श से तुम तरुण हो गई हो।" यह वृंदावन धन्य है क्योंकि यहाँ सर्वत्र भक्ति नृत्य कर रही है, किंतु ज्ञान वैराग्य की स्थिति यहाँ भी दुर्बल है। नारद जी ने विविध उपाय कर श्रीमद्भागवत का श्रवण करने के उपरांत सनकादि मुनिश्वरों द्वारा बखान की गई अति आश्चर्यजनक घटना घटित हुई और वहाँ अकस्मात अपने तरुण पुत्रों के साथ विशुद्ध प्रेम रूपा भक्ति बार-बार 'श्रीकृष्ण गोविंद हरे मुरारि, हे नाथ नारायण वासुदेवा' आदि भगवान के नामों का उच्चारण करती हुई नृत्य करने लगी। सनकादिक मुनिश्वरों के आदेशानुसार भक्ति धैर्य धारण कर वैष्णव भक्तों के हृदय में रहने लगी जहाँ कलि की कुदृष्टि उस पर नहीं पड़ने वाली थी ।

वैष्णव धर्म भक्ति भावना का ही प्रबल एवं विकसित रूप है। कृष्ण की लीलास्थली वृंदावन वैष्णव धर्म की गढ़ी है। फिर दक्षिण से तमिलनाडु से आए अलवार भक्तों ने इसका प्रचार-प्रसार किया। इसका समय था—700-1400 संवत तक। फिर 15वीं शताब्दी में रामाश्रयी और कृष्णाश्रयी शाखाओं के रूप में वैष्णव धर्म का प्रचलन हुआ। काशी में राम और वृंदावन में कृष्ण की लीला अपरंपार सिद्ध हुई।

आलोच्य पुस्तक में रामानुज संप्रदाय, माध्व संप्रदाय, वल्लभ संप्रदाय, निंबार्क संप्रदाय, चैतन्य संप्रदाय, राधावल्लभ संप्रदाय तथा सखी संप्रदाय का ब्रज के साथ संबंध बड़े विस्तार के साथ परखा गया है। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में इन संप्रदायों के उद्भव एवं विकास पर प्रकाश डालते हुए ब्रज के संदर्भ में इनके योगदान एवं महत्व को ससंदर्भ रेखांकित किया गया है। विभिन्न संप्रदायों की दार्शनिक विचारधारा को प्रकट करते हुए लेखक ने राधाकृष्ण के ब्रज में प्रचलित विविध लीलाओं के प्रकरण चित्रित किए हैं। राधावल्लभ संप्रदाय के बारे में लेखक लिखता है—राधावल्लभ संप्रदाय का मूलाधार प्रेम तत्व है। हृदय की रस सिक्त भावनाओं की सहज स्वीकृति और सरस अभिव्यक्ति ही राधावल्लभीय रसोपासन का आधार है। यह प्रेम सहज और असीम माना जाता है।

यह पुस्तक वस्तुतः ब्रज भूमि से संबंधित सभी जानकारियों का लघु विश्वकोष है, जिसमें ब्रज क्षेत्र की महिमा, भौगोलिक परिदृश्य, भाषा एवं संस्कृति, भक्ति भाव, विभिन्न धार्मिक संप्रदायों, राधा-कृष्ण की लीलाओं, गोप संस्कृति, जातीय संरचना आदि का शोधपरक अध्ययन प्रस्तुत किया गया। भाषा-शैली काव्यात्मक एवं बाँधने वाली है। पुस्तक संग्रहणीय है।

आँख भर उमंग

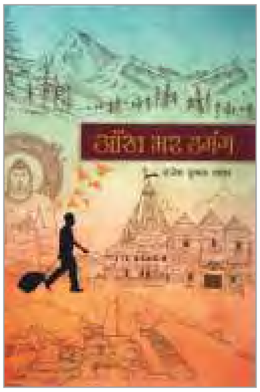

समीक्षक : **जनार्दन मिश्र**

लेखक : **राजेश कुमार व्यास**

प्रकाशक : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली-110070

पृष्ठ : 250

मूल्य : रु. 310/-

साहित्य अकादेमी के सर्वोच्च सम्मान से समाहत जाने-माने संस्कृतिकर्मी डॉ. राजेश कुमार व्यास की नवीनतम पुस्तक 'आँख भर उमंग' में कुल 76 यात्रा-वृत्तांत संकलित हैं। साहित्य की विविध विधाओं में अब तक उनकी 23 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। भारतीय संस्कृति से संबद्ध दशाधिक वृत्तचित्रों का लेखन भी उन्होंने किया है।

अनुक्रम के अनुसार इस संग्रह के प्रथम लेख का शीर्षक है—'सिमिटि-सिमिटि जल भरहिं तलावा।' यह तुलसीकृत श्रीरामचरितमानस की चौपाई की प्रथम अर्द्धाली है। यह चौपाई किष्किंधा कांड की है। पूरी चौपाई है—'सिमिटि-सिमिटि जल भरहिं तलावा। जिमि सद्गुन सज्जन पहि आवा ॥' इस लेख का शीर्षक सामने आते ही साहित्य मनीषी, भारतीय वांग्मय के विद्वान चिंतक ललित निबंध के पुरोधा डॉ. विद्यानिवास मिश्र के निबंधों के शीर्षक याद आ जाते हैं। इस लेख में 'भीमताल' का जिक्र आया है। साहित्य अकादेमी और महादेवी वर्मा सृजन पीठ के आमंत्रण पर काव्य और कला के अंतःसंबंधों पर बोलने के लिए उत्तराखंड स्थित मल्ला रामगढ़ जाते वक्त रास्ते में 'भीमताल' को देखकर लेखक को संत कवि तुलसीदास कृत श्रीरामचरितमानस की चौपाई याद आ जाती है। पांडु पुत्र भीम का नाम इस विशाल ताल से जुड़ा है। मिथकीय संदर्भ के अनुसार भीम ने इस तालाब को स्वयं खोदकर बनाया है। लेखक इस तालाब के बहाने अनुपम मिश्र को भी याद करता है।

ताल कैसे अस्तित्व में आए, किस-किस प्रकार का जतन इनके लिए हुआ, इस सबको अनुपम मिश्र ने 'आज खरे हैं तालाब' में सुघड़ता

से सहेजा है। 'ताल' के साथ 'भीम' का नाम रेखांकित करते हुए लेखक कहता है कि चेतना सदा से ही आस्था का दामन थामती है।

बुद्ध का प्रथम 'धर्मोपदेश स्थल' शीर्षक लेख के अंतर्गत 'सारनाथ' का उल्लेख लेखक ने बड़ी गरिमा के साथ किया है। वाराणसी के पास ही है, बुद्ध का धर्मचक्र प्रवर्तन स्थल सारनाथ। सारनाथ में ही तो बुद्ध ने 'चरथ भिक्खवे चारिक' का ऐतिहासिक मार्गदर्शन भिक्षुओं को दिया था। बुद्ध ने यहीं अपने पाँच पुराने परिव्राजकों को धम्म उपदेश दिया था। स्कंदपुराण के अनुसार, सारनाम को 'विष्णु का स्थान' भी कहा गया है। कहते हैं, यहीं भगवान विष्णु ने बुद्ध का रूप धारण किया था। बहुत से मत इसी पर आधारित हैं कि बुद्ध भगवान विष्णु के ही अवतार थे। लेखक ने और कई पौराणिक संदर्भों के साथ 'सारनाथ' की महत्ता को रेखांकित किया है। बुद्ध ने यहीं कहा था 'चरत भिक्खवे चरथ' यानी भिक्षुओं चलते रहो।

भोपाल की यात्रा करने वाला यदि 'भोपाल ताल' न देखे तो यह मान लीजिए की भोपाल की यात्रा कोई मायने नहीं रखती। 'ताल तो भोपाल ताल' शीर्षक के अतंर्गत लेखक राजा भोज का उल्लेख बड़े गौरव के साथ करता है। राजा भोज ने दो पहाड़ियों के बीच बाँध बनवाकर कभी यह ताल बनवाया था। लेखक के अनुसार, इतिहासविद् और पुरातत्वविद् डब्ल्यू. किनकैड ने ताल के इतिहास का सर्वेक्षण करने के बाद जिस किंवदंती का जिक्र किया है, वह खासी रोचक है। अपने इस छोटे से यात्रा-वृत्तांत में लेखक ने भोपाल ताल का रोचक वर्णन किया है।

यात्रा-वृत्तांत संग्रह में 'गाँव' की यात्रा का वृत्तांत न हो तो वह संग्रह खाली-खाली-सा लगेगा। इस संग्रह में 'गाँव में गोधूलि' लेख के अंतर्गत लेखक ने गाँव में पसरी गोधूलि बेला के मनोहारिणी दृश्य को अपनी लेखनी से जीवंत बना दिया है।

'औरंगजेब ने जहाँ दारा शिकोह को कैद रखा' लेख में लिखा है कि मुगल सम्राट औरंगजेब ने 17वीं शताब्दी में बियाबान में बने काँकवाड़ी दुर्ग में अपने भाई दारा शिकोह को कैद रखा था। कहते हैं, 24 घंटे हजारों सैनिक वहाँ पहरा देते थे। ऐसा माना जाता है, अपने अंतिम दिनों में वहीं दारा शिकोह ने वेदों का फारसी में अनुवाद किया था।

यह बात समझ में नहीं आती, ऐसे बियाबान दुर्ग के आस-पास चौबीस घंटे हजारों सैनिक आखिर क्यों पहरा देते थे? और वहीं दारा शिकोह ने वेदों का फारसी में अनुवाद किया। औरंगजेब जैसा क्रूर शासक जो वेदों, पुराणों से घृणा करता था, दारा शिकोह को इतनी छूट क्यों देता कि वह वेदों का फारसी में अनुवाद करके जगप्रसिद्ध बने।

इस संग्रह में ऐसा कोई लेख नहीं है, जिसमें लेखक की बहुमुखी प्रतिभा न झलकती हो, मसलन-प्राकृतिक विशिष्टता, सामाजिक संरचना, संस्कृति, स्थानीय भाषा। मिथकों, प्रतीकों, अलंकारों के प्रयोग से यात्रा-वृत्तांत और रोचक बन गया है।

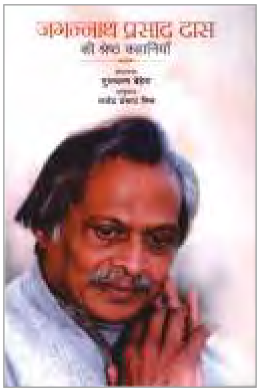

समीक्षक : **सुधांशु गुप्ता**

संपादक : **गुरुचरण बेहेरा**

अनुवादक : **राजेंद्र प्रसाद मिश्रा**

प्रकाशक : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली-110070

पृष्ठ : 274

मूल्य : रु. 335/-

जगन्नाथ प्रसाद दास की श्रेष्ठ कहानियाँ

ओड़िया कथाकार जगन्नाथ प्रसाद दास एक कवि, नाटककार, उपन्यासकार, अभिनेता, चित्रकार और शोधकर्ता हैं। इतना ही नहीं उन्होंने 1958 में आईएएस की परीक्षा भी उत्तीर्ण की। वह अकाल पीड़ित कालाहांडी जिले में कलेक्टर रहे। जाहिर है उनके अनुभव का दायरा बहुत व्यापक रहा, लेकिन उनकी पहली कहानी छपी 1980 में, 'शब्दभेद' शीर्षक से। बाद में उन्होंने और भी बहुत-सी कहानियाँ लिखीं और कई संग्रह प्रकाशित हुए। उनके बारे में कहा जाता है कि ओड़िया कहानी को भावुकता से मुक्त करके संयत, वस्तुनिष्ठ और आधुनिक बनाने के क्षेत्र में जगन्नाथ प्रसाद दास की अहम भूमिका रही।

गुरुचरण बेहेरा द्वारा संपादित और राजेन्द्र प्रसाद मिश्र द्वारा ओड़िया से हिंदी में अनूदित, 'जगन्नाथ प्रसाद दास की श्रेष्ठ कहानियाँ' पढ़ने के बाद यह बात और साफ हो जाती है। उनकी कहानियों में भाषा का वैभव, आडंबर, भावुकता, मार्मिकता और नकलीपन दिखाई नहीं पड़ता। उनके विषय जीवन से लिए गए हैं, लेकिन वह घटनाओं को जस का तस नहीं परोस देते। वह अनुभव के साथ विचारों को भी बराबर तरजीह देते हैं। संग्रह की पहली कहानी 'शब्दभेद' को उनकी कहानियों का उत्स माना जा सकता है। शब्दभेद का नायक भवनाथ कवि है। शब्दों से खेलना उसका काम है। उसकी कविता की एक पंक्ति को लेकर राजनीतिक दलों में विवाद छिड़ जाता है। उसका कहना है कि प्रेम की तरह ही उसकी कविता को समझना भी आसान नहीं है। कहानी के भीतर और भी कहानियाँ हैं। यह सोचना पाठक का काम है कि वे यथार्थ हैं या कल्पना। वास्तव में कहानी के भीतर कहानी (मेटाफिक्शन) उनकी लगभग हर कहानी में मिलेगी। यथार्थ उनके लिए वही नहीं है जो घटित हुआ, बल्कि वह भी है जो घटित होते-होते रह गया। वह अपनी कल्पनाशीलता से उसे कहानी में दर्ज करते हैं। उनका अमरत्व, साहित्यकार, सब-कुछ है,

कुछ भी नहीं है और कविता की उम्र लंबी है जैसी कहानियाँ साहित्य की दुनिया के झूठ सच उजागर करती है। इन कहानियों में आप मौजूदा साहित्यिक दुनिया के चेहरे देख सकते हैं।

'पहचान' और 'स्पर्श' कहानी में जगन्नाथ प्रसाद दास स्त्री अस्मिता की खोज करते हैं। 'पहचान' कहानी की नायिका पढ़ी-लिखी है, योग्य है। वह समाज में अपनी पहचान अपने दम पर चाहती है। बहुत संघर्ष करने के बाद आखिर उसे नौकरी मिल जाती है। लेकिन पुरुष प्रधानता यहाँ भी उसका पीछा नहीं छोड़ती।

जगन्नाथ प्रसाद दास कहानी के अपने विषयों को सीमित नहीं करते। 'मृत्युबोध' कहानी में वह आत्महत्या की कोशिश करने के बाद पुनः जीने की कोशिश करते एक व्यक्ति की कहानी 'एकालाप' के रूप में कहते हैं। यह कहानी निरंतर यथार्थ-अयथार्थ के बीच यात्रा करती है। 'मरा हुआ आदमी' में लेखक दिखाता है कि उसके बाद का जीवन कैसा है। कैसा हो सकता है। उसके लिए जो शोक प्रकट किया जा रहा है, वह कितना दिखावटी है, स्वयं को मृतक के अधिक निकट दिखाने की प्रतिस्पर्धा चल रही है। यह प्रतिस्पर्धा कोई निजी नहीं है, बल्कि हम सबको ही इसका सामना करना पड़ता है।

ऐसा लगता है जगन्नाथ प्रसाद विश्व प्रसिद्ध लेखक काफ्का से भी खूब प्रभावित हैं। 'सत्य-असत्य' कहानी में यथार्थ और स्वप्न के बीच का सफर तय करते हैं। कहानी अदालत से शुरू होती है, जहाँ नायक-पद्मधर किराये के मकान को खाली करने का मुकदमा लड़ रहा है। पद्मधर को अदालत एक मेले जैसी लग रही है, जहाँ अदालत का फैसला सुनने आए लोग अंगूठे का निशान, कोर्ट फीस, स्टांप पेपर, तारीख, वकालतनामा और समन जैसी छोटी-छोटी चीजें खरीदकर चले जाते हैं। इस अदालती मेले से कुछ फुर्सत पाकर पद्मधर बाहर एक पुस्तकों की दुकान पर पहुँचता है और काफ्का का 'दि ट्रायल' उपन्यास खरीद लेता है। कहानी फैंटेसी में अनेक स्तर पर चलती है। कहानी में सच को झूठ, झूठ को सच में बदल देने की झूठी प्रतिद्वंद्विता, झगड़ा, नाटकीयता के बीच सच को कैसे छुपाया जाता है, यही दिखाया गया है। काफ्का का नजरिया ही दिखाई पड़ता है 'पात्र-परिचय' कहानी में। इसमें नायक (जो लेखक है) एक अपहरण के चलते कारणहीन, तर्कहीन यंत्रणा का शिकार होता है। कहानी में नायक के दो चेहरे हैं, पहला बौद्धिक, अभिजात और गंभीर साहित्य लिखने वाला और दूसरा, पैसा कमाने के लिए डिटेक्टिव, हलके अश्लील उपन्यास, सस्ती राजनीतिक कहानी और रोमांचकारी थ्रिलर लिखने वाला। जगन्नाथ प्रसाद दास इस कहानी में साहित्य की सीमा से परे जाकर वास्तविक दुनिया में साहित्य के संक्रमण और विस्तार की ओर इशारा करते हैं।

जगन्नाथ प्रसाद दास की श्रेष्ठ कहानियों को पढ़ना जीवन को ही अलग अंदाज में देखना है। भावुकता और मार्मिकता से कोसों दूर ये कहानियाँ यथार्थ और अयथार्थ के बीच पुल बनाती हैं।

एडल्ट चुस्कियाँ

(काव्य-संग्रह)

समीक्षक : **कमलेश पांडे 'पुष्प'**

लेखिका : **दीप्ति अंगरीश**

प्रकाशक : सरोजिनी पब्लिकेशंस, नई दिल्ली।

पृष्ठ : 108

मूल्य : रु. 200/-

आपने यदि किसी से प्रेम किया है, तो आपका हर पल जेहन में कहीं-न-कहीं सुरक्षित होगा। जरा-सी हवा की बयार बही और आप उसी दौर में चले जाएँगे। कविताओं में यह ताकत होती है। हाल ही में पत्रकार-लेखिका दीप्ति अंगरीश की कविताएँ इसी तासीर की हैं। एक भी कविता आपने पढ़ी, तो आप अपने प्रेमी-प्रेमिका को याद किए बिना नहीं रह सकते हैं।

तभी तो कहा गया है कि कविताएँ समय की धारा के साथ समाज के महत्वपूर्ण हिस्सों से साक्षात्कार करती चलती हैं। ये कविताएँ जीवन को सहज स्पर्श करने वाले आदर्श विचारों से ओत-प्रोत हैं, तो मन के भीतर फूल खिलने का एहसास कराती हैं। इस काव्य संग्रह की प्रत्येक कविता स्मृति के कैनवस पर जैसे जिंदगी के खूबसूरत चित्रों को उकेरती हैं। कवयित्री की संवेदनाएँ पाठकों को गहरी अनुभूति तो कराती ही हैं, मन को सुकून देने में समर्थ हैं। जीवन का यथार्थ इन रचनाओं में जीवंत दृश्यों की झलक दिखलाता है।

काव्य संग्रह के शीर्षक पर आधारित पहली कविता 'एडल्ट चुस्कियाँ' में कवयित्री को बहुत ही मधुर क्षणों का एहसास हो रहा है। इस कविता में बरफ की घिसाई का ठंडा स्पर्श उन बातों की याद दिलाता है, जो सिर्फ चुस्कियों के आनंद के साथ होती थीं। कविता की पंक्तियाँ शब्दों के माध्यम से बहुत कुछ व्यक्त करती हैं—

मिस करती हूँ/ठंडी-ठंडी आँखों का मजा/
चुस्की में टेस्ट था, कलर था/ और/ बर्फ की घिसाई का ठंडा मजा/
मजे में कितनी बातें होतीं

कवयित्री अपने मन की भावनाओं की अभिव्यक्ति बड़ी साफगोई से करती हैं, तभी तो मन की कुलबुलाहट हौले से उसके दिल की चाहत को शीतल फुहारों में परिणत करने में सफल हो जाती है। कविता भीगी चाहत की पंक्तियाँ हालात के आगे मनुष्य की मजबूरी को बेबाक शब्दों में व्यक्त करती हैं—

बस, हालातों के आगे मनुष्य की मजबूरी/आज भी नहीं हुए हैं बेहतर
हालात/सही-गलत का फैसला समाज नहीं/करता है हमारा अंतर्मन

काव्य संग्रह की कविताओं में सकारात्मकता कूट-कूट कर भरी है। लगता है जिंदगी का हर लम्हा ही खुशियों और उपलब्धियों की सौगात लेकर उपस्थित हो रहा है। मन में उम्मीद की लौ का हर क्षण जलना यह सिद्ध करता है कि हमें कठिनाइयों से डटकर मुकाबला करना है, प्रगति की राह में कितनी भी बाधाएँ आएँ, हमें बिलकुल नहीं घबराना है। कवयित्री 'फूल से कली...' कविता में उम्मीद का दामन थामे हुए कली से फूल और अपने हिस्से की सुगंध पाने की बात कितनी सरलता से कह जाती हैं।

प्रेम को सर्वोपरि रखते हुए कवयित्री अपनी कविता में यादों को जीने की आकांक्षा रखती हैं। यादों को सहेजते जाना प्रेम को परिपक्व बनाता है। यादें ही वे आईना हैं जिसमें उसके लिए अर्थात एक प्रेमिका या प्रेमी को प्रेम के हर पल की जीवंत तस्वीर देख पानी संभव हो पाती है। 'यादों का लिबास' कविता में यह बिंब देखा जा सकता है—

पता है तुम्हें/मैंने कल आलमारी खोली/उन यादों को निहारा/
महसूस किया/कितनी यादें टँगी हैं/वो काला लिबास/
अंदर से सुर्ख लाल-सा एहसास

कवयित्री का मन बहुत ही संवेदनशील हो उठा है काव्य सृजन करते समय, तभी तो वह अपने अंतस में बहुत गहरे छिपी हुई भावनाओं को पंक्तियों में ढाल पाने में सफल हो पाई हैं। दिल के किसी कोने में एक ऐसी कामना दबी बैठी है, जो अकसर मनुष्य की हार्दिक कामना कही जा सकती है। इसकी कामना की पूर्ति के लिए वह 'विधाता के हवाले' कविता में लिखती हैं—

सुनती आई हूँ/कर्म और मंत्र के अधीन होते हैं देवता/
पूछूँगी नहीं/बस/पूरी कर दो मेरी मनोकामना/
जल्द आऊँगी अपने अंश को लेकर

काव्य संग्रह की कविताएँ केवल प्रेम और भावनाओं के ही इर्द-गिर्द नहीं घूमतीं, बल्कि इन कविताओं में समर्पण का भाव है तो सपनीली दुनिया की झूठी खुशी भी मन को प्रेरणा से ओत-प्रोत करती है।

इस काव्य संग्रह की बेहतरीन कविताओं में शामिल हैं—'न मुँह मोड़ पतझड़', 'मेरा रंगरेज', 'ऑनलाइन लाइफ', 'फूल तो भेजे पर जंगली', 'सोचा था अंबर होगा मेरा', 'छुप न सका मेरा राज', 'कॉरिडोर लव', 'अजीब है हमारा प्यार' और 'चलो न'।

काव्य संग्रह की भाषा सरल एवं प्रवाहपूर्ण है। क्लिष्ट शब्दों का प्रयोग मन में पवित्र भावों को उत्पन्न करता है। कोई भी कविता बोझिल नहीं करती। जिंदगी के हर लम्हों को कविता में खूबसूरती से समाहित करने का सफल प्रयास है।

समीक्षक : **सूर्य कांत शर्मा**

लेखक : **शुनम्यो मसूनो**

अनुवादक : **रचना भोला 'यामिनी'**

प्रकाशक : मंजुल पब्लिशिंग हाउस, भोपाल।

पृष्ठ : 208

मूल्य : रु. 350/-

जेन : सरल जीवन जीने की कला

मनुष्य से अधिक विचित्र कुछ भी नहीं! यह उक्ति आज के मानव पर पूर्णतया खरी और औचित्यपूर्ण है। आज जब जीवन में दौड़ और होड़ दोनों अपनी-अपनी चरम सीमा पर हैं। यह बात भी अब आम-सी हो चली है कि आधुनिकता के समय में हमें सारी सुविधाएँ, कौशल, भविष्य में झाँकने और उसे आँकने में भी सक्षमता मिल गई है। वास्तु, ज्योतिष, फेंगशुई, आर्ट ऑफ लिविंग, योग, जीवन जीने की कला के विशेषज्ञ अब अपने व्याख्यानों को महँगे-से-महँगे दामों पर बेचना और इन वर्तमान पीढ़ियों का वहाँ पहुँचना भी एक कड़वी सच्चाई है। वो तो कोरोना ने मनुष्य को आधारभूत सत्य से परिचित कराया, भले ही क्रूरतम अंदाज में? पर पुनः मानव को पहले से ही प्रचलित, प्रभावी, अनुभव जनित और सफल जीवन परिपाटियों, विचारों, जीवन अंदाज पर निर्भर हो! पर हमारा देश जनसंख्या बहुल है और आमजन पैसे की ताकत से कोसों दूर, तब अच्छी पुस्तकें ही एक व्यावहारिक विकल्प बचता है। बस एक बार पुस्तक खरीदी और लीजिए आप, आपके परिवार की बौद्धिक क्षमता और थाती में बढ़त भी ही गई।

हाल ही में प्रस्तुत पुस्तक बाजार में आई है। यह पुस्तक मशहूर जेन मास्टर शुनम्यो मसूनो की मूल पुस्तक का अनूदित रूप है और हिंदी भाषा के पाठकों के लिए सौगात से कम नहीं है। देखा जाए, तो कोरोना महामारी के माहौल से निकलता भारत अब ऐसी पुस्तकों की दरकार में खड़ा है, जहाँ पुस्तकें मनोवैज्ञानिक, डॉक्टर, प्रोत्साहन कर्मियों, बड़े-बजुर्गों की कमी को पूरा करती हों, और यह पुस्तक इस ओर एक सशक्त सार्थक कदम या पहल कही जा सकती है। पुस्तक मूलत चार खंडों में विभाजित है जिसमें स्व से लेकर अपने उन्नयन, कार्य करने के तरीके आदि व्यवहार, दूसरों से कार्य लेना और दूसरों के लिए कार्य करना, समाज के प्रति जिम्मेदारी कुछ ऐसे विषय हैं जिन पर अभी काम होना शेष है।

'जेन' संस्कृत भाषा का संस्कृत शब्द है जिसका अर्थ है—'शांत भाव से मनन करना' और इसी पर बौद्ध धर्म और जापानी संस्कृति ने ऐसा जीवन तंत्र बना डाला जो आज के युवा को जीवन में सहजता,

सरलता और धैर्य से जीना सिखाता है। इस पद्धति के सभी विचार भारतीय संस्कृति, जीवन पद्धति से बेहद मेल खाते हैं क्योंकि आधारभूत सत्य किसी भी भाषा और संस्कृति में लगभग एक जैसा ही होता है।

चारों खंड में सर्वप्रथम स्व यानी व्यक्तिगत यथा स्वयं को ऊर्जावान करने के लिए आदतों में सूक्ष्म बदलाव की ओर प्रेरित करते हैं—छोटी आदतें जैसे समय पर सोना-उठना, अपने लिए समय निकालना, शांत मन, खाने के हर कौर पर रुकना, टेबल-कमरे को व्यवस्थित रखना इत्यादि है। दूसरा खंड जीने के साहस व विश्वास की प्रेरणा पाने की यतन-जतन बताता है। पुस्तक में लेखक ने सहज भाव से अपनी बात को बातचीत की श्रेणी में रखने की सफल कोशिश की है। तीसरे खंड में चिंता और भ्रम को दूर करने के लिए कुछ गुरों को बताया गया है।

पुस्तक का चौथा और अंतिम खंड दैनिक जीवन और दैनिक चर्या पर केंद्रित है। इसमें अपने ध्यान को वर्तमान क्षण पर केंद्रित करने के प्रयत्नों में मदद करने वाले उपायों को बताया गया है। पुस्तक का अंतिम अध्याय जो कि संयोगवश सौवाँ है, जीवन की सार्थकता पर बल देता है। बहुत सुंदर कथन है, "आपका जीवन आपका अपना है, परंतु यह आपकी संपत्ति नहीं है" एक इति वृत्तात्मक सोच के साथ पाठकों को नई ऊर्जा, नए उत्साह और प्रेरणा से भरकर कर्मयोग की ओर प्रवृत्त करती है।

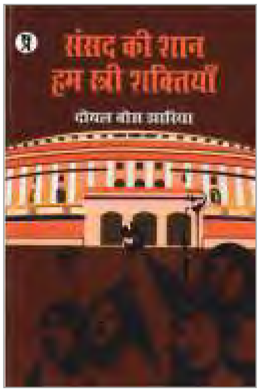

समीक्षक : **जनार्दन मिश्र**

लेखक : **दोयल बोस झारिया**

प्रकाशक : प्रभाकर प्रकाशन, दिल्ली।

पृष्ठ : 304

मूल्य : रु. 299/-

संसद की शान हम स्त्री शक्तियाँ

संख्या की दृष्टि से भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है और नारी सिर्फ भारत में ही नहीं, पूरे विश्व में मनुष्य जाति के आधे हिस्से का प्रतिनिधित्व करती है। नारी और पुरुष के परस्पर मिलन से ही नए जीव का सृजन होता है, पर आज भी राजनीतिक क्षेत्र में प्रतिनिधित्व के मामले में नारी हाशिए पर है। प्रभाकर प्रकाशन से प्रकाशित अपनी नवीनतम पुस्तक 'संसद की शान हम स्त्री शक्तियाँ' में लेखिका दोयल बोस झारिया ने 2019 के 17वें लोकसभा चुनाव में 542 सीटों में से 78 विजयी महिलाओं के जीवन से जुड़े अनेक पक्षों का उल्लेख किया है। 'बेस्ट जर्नलिस्ट ऑफ द ईयर अवार्ड' सहित कई पुरस्कारों से सम्मानित दोयल बोस झारिया कई पत्र-पत्रिकाओं में हिंदी, अंग्रेजी एवं बांग्ला भाषा में निरंतर लिखती रहती हैं।

वर्तमान में कुल लोकसभा सांसदों के अनुपात में 14.36 फीसदी महिला सांसद हैं। अब तक का यह सबसे शानदार प्रदर्शन है। 16वीं लोकसभा में कुल 62 महिलाएँ सांसद बनी थीं। प्रतिशत की दृष्टि से उनकी हिस्सेदारी लगभग 11 प्रतिशत थी। 1951 से 2019 तक महिला सांसदों की हिस्सेदारी बढ़ती रही है। देश के कई राज्यों में पुरुषों की तुलना में महिलाओं का मतदान प्रतिशत ज्यादा रहा, जिसमें अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम, केरल, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, बिहार, उत्तराखंड, मणिपुर, मेघालय और गोवा प्रमुख हैं।

17वें लोकसभा चुनाव में कई महिलाएँ अपनी सशक्त पारिवारिक पृष्ठभूमि से तो कई ग्लैमर इंडस्ट्री से जुड़ी होने के कारण सांसद बनी हैं। कई महिलाएँ अपने दम-खम पर भी आई हैं। वर्तमान में लोकसभा में लगभग 14.36 प्रतिशत और राज्यसभा में 10 प्रतिशत महिलाएँ सांसद हैं।

महिला आरक्षण विधेयक (33 प्रतिशत) को पहली बार एच.डी. देवगौड़ा सरकार ने 81वें संविधान संशोधन विधेयक के रूप में 12 सितंबर, 1996 को संसद में पेश किया था, लेकिन हमारे देश में महिलाओं के आरक्षण देने के विधेयक पर आम सहमति नहीं बन पाने के कारण वह विधेयक संसद में लंबित होकर अधर में लटका पड़ा है।

इस पुस्तक में पहला नाम है—अगाथा कोंगक्कल संगमा का। अगाथा 17वें लोकसभा चुनाव में 'नेशनल पीपल्स पार्टी' से मेघालय की 'तुरा' लोकसभा सीट से जीतकर तीसरी बार संसद पहुँचने में कामयाब रही हैं। 2014 में 'तुरा' लोकसभा सीट पर अगाथा के पिता पूर्व लोकसभा अध्यक्ष और 'नेशनल पीपल्स पार्टी' के उम्मीदवार पी.ए. संगमा की जीत हुई थी। वे अपने समय के कद्दावर राजनेता थे। पेशे से वकील अगाथा की पृष्ठभूमि राजनीतिक रही है यानी राजनीति उन्हें विरासत में मिली है।

अनुप्रिया पटेल, लोकसभा चुनाव 2019 में मिर्जापुर लोकसभा क्षेत्र से भाजपा 'अपना दल एस' की संयुक्त प्रत्याशी रहीं। उन्होंने अपने निकटतम प्रतिद्वंद्वी को भारी मतों से पराजित किया। पिछड़ा वर्ग से संबंध रखने वाली अनुप्रिया अपने संसदीय क्षेत्र में काफी लोकप्रिय मानी जाती हैं। उनके पति वित्तीय सलाहकार, सामाजिक कार्यकर्ता तथा उत्तर प्रदेश विधानसभा के सदस्य हैं। 07 जुलाई, 2021 से केंद्रीय वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय में राज्यमंत्री हैं।

फिल्मी जगत में ड्रीम गर्ल के रूप में मशहूर, कई फिल्मों की सफल अभिनेत्री, जाने-माने फिल्मी अभिनेता धर्मेंद्र की दूसरी पत्नी हेमा मालिनी 17वें लोकसभा चुनाव में उत्तर प्रदेश के धार्मिक स्थल मथुरा से भाजपा प्रत्याशी की हैसियत से दूसरी बार सांसद चुनी गईं। आज भी 73 वर्षीया हेमा मालिनी शारीरिक रूप से स्वस्थ हैं। फिल्मी

जगत के अलावा वह कई सरकारी, संस्थाओं की सदस्य एवं परामर्शदात्री हैं।

बांग्ला फिल्मों की मशहूर अभिनेत्री नुसरत जहाँ ने तृणमूल कांग्रेस के टिकट पर पहली बार चुनाव लड़ा और भाजपा प्रत्याशी को 3,50,369 लाख वोटों के अंतर से हराया। कोलकता के बिजनेस मैन निखिल जैन से शादी करने के कारण वे काफी चर्चा में भी रहीं।

परनीत कौर पटियाला लोकसभा से कांग्रेसी प्रत्याशी के रूप में जीत की हैट्रिक लगा चुकी हैं। उनके पिता ज्ञान सिंह कहलों भारतीय प्रशासनिक सेवा में अधिकारी थे। पटियाला के शाही घराने की बहू परनीत कौर के पति कैप्टन अमरिंदर सिंह ने पंजाब के मुख्यमंत्री के पद से त्याग पत्र दिया था। परनीत कौर मनमोहन सरकार में कई संस्थाओं की अध्यक्ष एवं सदस्य रहीं तथा मई 2009 से अक्तूबर 2012 तक विदेश मंत्रालय में राज्य मंत्री रहीं।

इस पुस्तक में 'लोकतंत्र का मंदिर भारतीय संसद का निर्माण', 'लोकसभा', 'राज्यसभा', 'संसद का कार्य और प्रक्रिया', 'संसद में प्रश्न पूछना', 'शून्यकाल (जीरो आवर)', 'संसद में बजट पेश करना', 'नई संसद का निर्माण', 'लोकतंत्र के मंदिर की देवियाँ' आदि के बारे में जानकारी दी गई है।

दामोदर के तट पर

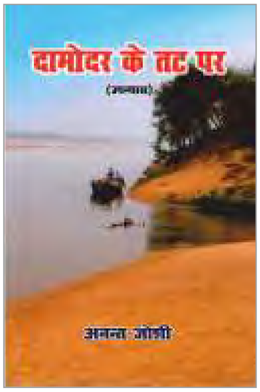

समीक्षक : **सुधांशु गुप्ता**

लेखक : **अनन्त जोशी**

प्रकाशक : मनसा पब्लिकेशंस, लखनऊ।

पृष्ठ : 208

मूल्य : रु. 250/-

अनन्त जोशी लेखन में लगभग तीन दशकों से सक्रिय हैं। उनके कविता संग्रह और कई उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। हाल ही में उनका एक उपन्यास प्रकाशित हुआ है—'दामोदर के तट पर'। यह उपन्यास झारखंड की पृष्ठभूमि पर रचा गया है। मूलतः दामोदर के तट पर स्थित झारखंड में बसे गरीबों, पीड़ितों, वंचितों और कोल माफियाओं द्वारा होने वाले शोषण पर आधारित है यह उपन्यास। भ्रष्टाचार के बारे में कहा जाता है कि वह नीचे से नहीं, ऊपर से शुरू होता है और नीचे तक फैल जाता है। आज भ्रष्टाचार हम भारतवासियों का स्वभाव बन गया है। कभी-कभी तो यह सोच कर भी डर लगता है कि यदि भ्रष्टाचार खत्म हो गया तो जीवन कैसे चलेगा! भ्रष्टाचार पर सालों से उपन्यास और कहानियाँ लिखी जा रही हैं। ये पढ़ी जाती हैं और इन पर चर्चा भी खूब होती है। लेकिन भ्रष्टाचार का सेनसेक्स कभी नीचे की ओर नहीं आता।

अनन्त जोशी का उपन्यास 'दामोदर के तट पर' एक सरकारी कोल कंपनी में फैले और निरंतर फैल रहे भ्रष्टाचार पर केंद्रित है। उन्होंने दिखाया है कि किस तरह झारखंड की कोयला खदानों में नौकरी पर लगे सरकारी कर्मचारी अपनी जगह गरीबों को किराये पर रख लेते हैं। 'बनिहारी' मराठी का शब्द है जिसका अर्थ है—तोतया या नकली आदमी। सरकारी आदमी तनख्वाह खुद लेते हैं और उनकी जगह गरीब बनिहारी या नकली आदमी काम करते हैं। जीवन सहज गति से चलता रहता है। जैसे-जैसे ट्रकों में कोयला लोड होता है, वैसे-वैसे बिचौलिये धनी बनते जा रहे हैं और गरीब और गरीब होता जा रहा है। पुलिस द्वारा जब छापे मारे जाते हैं तो बनिहारी ही पकड़े जाते हैं। उन्हें मारा-पीटा जाता है। फिर अधिकारियों को पैसे देकर उन्हें छुड़ा लिया जाता है। जीवन इसी तरह चलता रहता है और इसी तरह चलता है भ्रष्टाचार। उपन्यास में कई उपकथाएँ भी समानांतर चलती हैं। कर्मचारी कल्याण अधिकारी कीर्ति पटेल (जिसे उपन्यास की नायिका भी कहा जा सकता है) कॉलेज के दिनों में पीयूष मंडल से प्रेम करती थी और उसी से विवाह भी करना चाहती थी। किन्हीं नाजुक पलों में दोनों के बीच संबंध बन जाते हैं और कीर्ति गर्भवती हो जाती है। पीयूष के घरवाले विवाह के लिए इनकार कर देते हैं। वह अनेक स्थानों पर नौकरी करने के बाद रामगढ़ कोल फील्ड्स लि. में वेलफेयर अधिकारी बनकर आ जाती है। मजदूरों के प्रति उसकी सहानुभूति है। वह अकसर पीयूष को याद करती रहती है। कीर्ति एक मजबूत किरदार है, जो अपना जीवन तमाम बाधाओं के अपने अनुसार चलाती है। कई पुरुषों से उसके रिश्ते बनते हैं। इन रिश्तों को बनाने में उसके सामने नैतिकता का कोई प्रश्न खड़ा नहीं होता। वह रिक्शाचालक तक को अपने घर में रख लेती है ताकि उसकी शारीरिक जरूरतें पूरी हो जाएँ। कीर्ति पितृसत्ता के खिलाफ खड़ी स्त्री है। उपन्यास में दूसरी सशक्त महिला किरदार है रेणुका माने। वह डिप्टी एस.पी. (सुपरिंटेंडेंट ऑफ पुलिस है)। डिप्टी कलेक्टर कृपालसिंह रेणुका के पीछे पड़ा रहता है। अंत में दोनों का विवाह हो जाता है। कीर्ति और रेणुका दोस्त बन जाते हैं। रेणुका भी मानवीय मूल्यों की पक्षधर है। एक स्थान पर वह कहती है, 'मानव जीवन का मूल्य है या नहीं। मगर आजकल लोग उसकी उपेक्षा करते हैं। औरतों के ऊपर होने वाले बलात्कार और अत्याचार बढ़ रहे हैं। मेरे जैसी और तुम्हारे जैसी (कीर्ति जैसी) महिलाएँ जिनका समाज में कुछ स्थान है, हैसियत है, उन सबको मिलकर इन सब अत्याचारों के खिलाफ खड़े होना चाहिए। आंदोलन करना चाहिए।'

लेकिन उपन्यास में ऐसा कहीं होता नहीं दिखाई देता। कोई ऐसा प्रयास उपन्यास में नहीं दीखता जो इस शोषण और भ्रष्टाचार

के विरुद्ध आंदोलन की शक्ल अख्तियार कर सके। उपन्यास में जग्गू माँझी और उसकी पत्नी राधा भी अहम किरदार हैं। जग्गू बनिहारी का काम करता है। वह उपन्यास में शोषण की पराकाष्ठा है। प्रतीक है।

उपन्यास में पठनीयता है। अनन्त जोशी ने यह दिखाने की कोशिश की है कि बुरे कर्मों का नतीजा बुरा ही होता है। बुरे आचरण और भ्रष्ट चरित्र वाले कई किरदारों का अंत बुरा ही होता है, लेकिन जीवन में ऐसा नहीं होता। अगर ऐसा होता तो जग्गू और राधा का अंत क्यों बुरा होता, अंत में क्यों मजदूर मारे जाते, कीर्ति को इतना एकाकी जीवन क्यों बिताना पड़ता और भी बहुत से सवाल हैं। 'दामोदर के तट पर' भ्रष्टाचार की एक परत तो जरूर खोलता है।

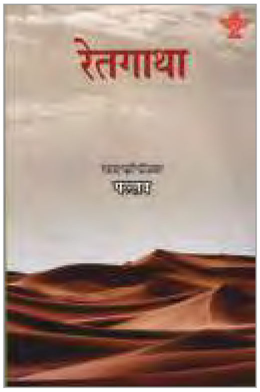

समीक्षक : **ललित श्रीमाली**

संपादन एवं संकलन : **पल्लव**

प्रकाशक : साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली।

पृष्ठ : 292

मूल्य : रु. 230/-

रेतगाथा

'रेतगाथा' साहित्य अकादेमी द्वारा हाल ही का प्रकाशित कहानी संकलन है। इस कहानी संग्रह में संपादक और कहानी के अध्येता पल्लव ने जिन कहानियों को संकलित किया है, उनके केंद्र में रेत का जीवन है। हमारे देश के पश्चिम में फैले थार के रेगिस्तान के असली जीवन की कहानियाँ यहाँ संकलित की गई हैं। संकलन में कुल 23 कहानियाँ संकलित हैं जिनमें पुरानी पीढ़ी के वरिष्ठ कहानीकार यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' से लेकर समकालीन युवा कहानीकार गौरव सोलंकी तक की कहानियों को लिया गया है। यहाँ आया रेगिस्तान का जीवन और कुशल कथाकारों द्वारा उसका वर्णन सचमुच दस्तावेजी महत्व का है।

हम जानते हैं कि रेगिस्तान का जीवन बहुत ही कष्टप्रद होता है, यहाँ के निवासियों को अपनी बुनियादी आवश्यकता—पीने के पानी के लिए भी कोसों दूर जाना पड़ता है। प्रत्येक तीसरे वर्ष यहाँ अकाल रहता है। अकाल के बावजूद यहाँ के निवासियों का मातृभूमि के प्रति प्रेम अटूट है। यहाँ के निवासियों की जिजीविषा इन कहानियों का प्रमुख विषय है। यहाँ के लोगों को भोजन और रोजगार की तलाश में भटकना पड़ता है, किंतु वे अपने जीवन से निराश या हताश नहीं हैं। रोजगार के लिए यात्राएँ उनके जीवन का हिस्सा बन चुकी हैं। लाखों संकट उठाने के बाद भी इन लोगों में जीवन के प्रति आस्था है।

हमारे देश के इस अभावग्रस्त क्षेत्र को केंद्र में रखकर रची गई ये कहानियाँ हमें यहाँ के निवासियों के हर्ष-संघर्ष एवं आकांक्षाओं से परिचित करवाती हैं। देश की भौगोलिक स्थितियाँ इतनी विविधता लिए हुए हैं कि कश्मीर का निवासी इस कल्पना से ही सिहर उठता है कि थार के रेगिस्तान में पचास डिग्री तापमान में भी मनुष्य रहते हैं। हमारे कहानीकारों ने यहाँ के लोगों के कठोर जीवन से भी मानवता का अंकन करवाने में सफलता हासिल की है। इस संकलन में संकलित कहानियों से हम यहाँ की प्रकृति के अनूठे सौंदर्य के साथ-साथ यहाँ की जीवन-शैली से भी परिचित होते हैं।

संकलन की प्रथम कहानी 'अकाल आकृतियाँ' हमें यह बताती हैं कि लोग अकाल के कारण पलायन कर रहे हैं, संघर्ष कर रहे हैं, लेकिन हार नहीं मान रहे हैं। इस क्षेत्र के लिए अकाल ही समस्या नहीं है। कभी थोड़ी-सी ज्यादा बरसात हो जाए तो भी वह मुसीबत का कारण बन जाती है। 'पानीदार' और 'बाढ़ में वोट' ऐसी ही कहानियाँ है। 'कमायचा' ऐसी कहानी है जो इस शुष्क क्षेत्र के निवासियों के जीवन में संगीत की उपस्थिति दर्शाती है। यहाँ के जीवन में कई चुनौतियाँ हैं, दिन जितने गर्म होते हैं रातें उतनी ही ठंडी होती हैं। रेत के धोरे (छोटे टीले) हवा से अपनी जगह बदलते रहते हैं। रेगिस्तान के इस कठिन जीवन को इन कहानियों में मार्मिकता के साथ उकेरा गया है। युवा कथाकार संदीप मील की कहानी 'कोकिला शास्त्र' में यहाँ के जीवन का एक दृश्य आया है कि स्त्रियाँ ईंधन के लिए लकड़ियाँ लाने जातीं तो वे अपने छोटे बच्चों से छिपकर जातीं, उन्हें यह डर रहता कि धूल भरी हवाओं में उनका बच्चा कहीं गुम न हो जाए। हवा में कहीं उड़ नहीं जाए। रेत के धोरे में दब नहीं जाए।

रेत के जीवन का अनूठा चित्र स्वयं प्रकाश की कहानी 'उस तरफ' के प्रारंभ में आता है, "खैर! तो महाशय गाँव पहुँचे। वे रेतीली कठिन यात्रा से पस्त हो रहे थे और कई बार ताज्जुब और अफसोस कर चुके थे कि आखिर ये लोग रेल-सड़क-आबादी-वनस्पति-मशीन सभ्यता से इतनी दूर गाँव बसाकर क्यों रहते हैं? जबकि वहाँ कुछ भी तो नहीं है। एक पेड़ तक नहीं।" अपनी मातृभूमि किसको अच्छी नहीं लगती? हाँ, सुविधाभोगी मनोवृत्ति वाले यह समझ नहीं पाते। स्वयं प्रकाश की इस कहानी में रेगिस्तान के लोगों का तेजस्वी और स्वाभिमानी स्वभाव का भी सुंदर वर्णन हुआ है।

यहाँ के निवासियों के पास वर्षपर्यंत रोजगार नहीं होने से केवल बरसात पर ही इनका काम-धंधा निर्भर रहता है। अगर बरसात अच्छी हुई तो भी तीन या चार महीने ही काम रहता है। ऐसे में ये लोग उत्सवधर्मी हो गए हैं। ये अपने लोक देवताओं के रतजगे करवाते हैं। लेकिन यहाँ के समाज में कुरीतियाँ और अविश्वास भी है जिसकी परिणति दुख में होती है। इसके चित्र हमें मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानी 'कठपुतलियाँ' में मिलते हैं जहाँ एक गर्भवती महिला को अग्नि परीक्षा

से गुजरना पड़ता है। क्योंकि लोगों को शक है कि उसके पेट में जो बच्चा है वो उसके प्रेमी का है। 'सौनेली मींझर' कहानी में पितृ सत्तात्मक व्यवस्था कैसे स्त्री को नष्ट करने पर आमादा है, यह दिखाया गया है।

संपादक ने रेगिस्तान के जीवन से जुड़ी हुई इन कहानियों को परिश्रमपूर्वक एक जगह एकत्र किया है। इस बंजर भूमि में रचे-बसे मनुष्य जीवन को समेकित पहचान देने का प्रयास इस दृष्टिपूर्ण आयोजन में हुआ है।

नए ढंग के इस कहानी संकलन को पाठक भी पसंद करेंगे और इससे कथा साहित्य की संपन्नता का भी एहसास होगा कि हमारे देश का खास तरह का स्थानिक एवं सांस्कृतिक जीवन है। हिंदी कहानी संसार में इस अनूठे संकलन का स्वागत है।

ज्ञान का भारतीय दृष्टिकोण : टैलेंट सूत्र

समीक्षक : **रमेश कुमार सिंह**

लेखक : **देवदत्त पट्टनायक**

अनुवादक : **नीलम भट्ट**

प्रकाशक : मंजुल पब्लिशिंग हाउस, भोपाल।

पृष्ठ : 142

मूल्य : रु. 250/-

देवदत्त पट्टनायक पौराणिक प्रसंगों की आधुनिक प्रबंधन के संदर्भ में व्याख्या करने वाले लेखक और वक्ता के रूप में लोकप्रिय हैं। समीक्ष्य पुस्तक उनकी सूत्र सीरीज की अन्य पुस्तकों–'बिजनेस सूत्र', 'सक्सेस सूत्र', और 'लीडरशिप सूत्र' की एक कड़ी है। लेखक के अनुसार, यहाँ 'सूत्र' का अर्थ सूक्ति भी है और धागा भी। ये सूत्र भारत में निर्मित हैं, लेकिन पूरी दुनिया के लिए हैं। साथ ही लेखक आगाह करता है कि ये सूत्र आधुनिक मैनेजमेंट के अनुपूरक हैं, विकल्प नहीं। लेखक के अनुसार, यह पुस्तक कार्यस्थल पर रचनात्मकता और प्रतिभा के पोषण तथा टीमवर्क के महत्व पर केंद्रित है।

पुस्तक में छोटे-छोटे अध्याय हैं। प्रत्येक अध्याय का शीर्षक एक सूक्ति पर आधारित है। जैसे, 'हम वैसा ही दिखना चाहते हैं, जैसी हम स्वयं की कल्पना करते हैं', 'ग्रहण करने के बजाय प्रदान करने को प्राथमिकता देना वृद्धि का सूचक है'। इन सूक्तियों की व्याख्या किसी-न-किसी मिथकीय पात्र या कहानी के माध्यम से की गई है। ये कहानियाँ रामायण, महाभारत और पुराणों से ली गई हैं। ये लोक-परलोक, स्वार्थ-परमार्थ, नीति-अनीति, धर्म-अधर्म, राग-विराग की कहानियाँ हैं। हर अध्याय के अंत में प्रबंधन से जुड़ी एक छोटी-सी कहानी भी है, जिसे देवदत्त पौराणिक कथा के निष्कर्ष से जोड़ते हैं।

यह पुस्तक चार भागों में बँटी है। पहले भाग का नाम 'अलगाव' है। इसमें देवदत्त ने दृष्टि और दृष्टिकोण से संबंधित दृष्टांत दिए हैं। वह कहते हैं, "हम अन्य लोगों द्वारा देखा जाना चाहते हैं, लेकिन हम स्वयं अकसर अन्य लोगों को देखने में असमर्थ रहते हैं।" वह महाभारत में दुर्योधन की आक्रामकता का कारण उसके माता-पिता द्वारा उसकी निराशा और असुरक्षा की भावना को नहीं देख पाना मानते हैं। महाभारत के एक और पात्र 'सत्यवती' की कहानी में लेखक मानता है कि उसकी रानी बनने और अपने पुत्रों को राजा बनाने की महत्वाकांक्षा की जड़ें उसके उपेक्षित बचपन में छिपी हैं।

पुस्तक के दूसरे भाग, 'चिंतन' में हमारे प्रति अन्य लोगों का दृष्टिकोण दिखाया गया है। यहाँ एक अध्याय का शीर्षक है–'हम अकसर भूल जाते हैं कि अन्य लोग दुनिया को अलग तरीके से देखते हैं'। संगठन में पदक्रम के अनुसार, काम करने वालों का लक्ष्य और अधिकार के प्रति दृष्टिकोण अलग-अलग हो सकता है। लेखक के अनुसार, 'हम जिस तरह दूसरों को देखते हैं, उससे हमारा व्यक्तित्व उजागर होता है' और 'लोग जिस प्रकार हमें देखते हैं, उससे हमारे बारे पता चलता है'। राम और शबरी की कहानी में राम के चरित्र को एक सीईओ के व्यक्तित्व में देखते हुए देवदत्त लिखते हैं, "...ने कभी किसी का मजाक नहीं उड़ाया, उन्होंने कभी किसी को छोटा महसूस नहीं करवाया।"

पुस्तक के तीसरे भाग–'विस्तार' में, विकास या वृद्धि में सहायक सूत्रों की पड़ताल की गई है। देवदत्त के अनुसार, "विकास तब होता है, जब हम दूसरों को अपने साथ शामिल करते हैं, चाहे दूसरा हमें शामिल न भी करे।" वह विकास के लिए आवश्यक स्थितियाँ बताते हैं, जैसे–'विकास होता है, जब महत्वहीन भी महत्वपूर्ण हो जाए', 'जब हम दूसरों को उठाने का प्रयास करते हैं, तो वृद्धि होती है'। महाभारत के युद्ध के दौरान सारथी कृष्ण घोड़ों को तरोताजा रखने के लिए उन्हें थोड़ी देर आराम देते हैं। इसी तरह लेखक किसी भी संगठन के उन कर्मचारियों के साथ समानुभूति रखने का सुझाव देता है, जो 'छोटी चीजों' का ध्यान रखते हैं, ताकि हम 'बड़ी चीजों' को हासिल करने के काबिल हो सकें।

पुस्तक के अंतिम भाग में 'समावेश' से संबंधित सूत्र हैं। पुस्तक की प्रस्तावना में भी लेखक ने विभिन्न सूत्रों के समावेशन के बारे में कहा है–"यहाँ मुद्दा अपने मस्तिष्क का इतना विस्तार करने का है कि अधिक-से-अधिक दृष्टिकोणों को समाहित किया जा सके और उन्हें एक अलग संपूर्ण सूत्र में पिरोया जा सके।"

देवदत्त ने अपनी सूत्र सीरीज की पुस्तकों में पौराणिक पात्रों और शब्दों को नए अर्थ दिए हैं। उनके अनुसार, "नए शब्दों के साथ नए विश्व बनते हैं, क्योंकि वे नए विचारों का वाहक होते हैं। वे मानस के

विस्तार की प्रक्रिया को सक्षम बनाते हैं।" इस पुस्तक में लेखक ने कुछ शब्दों के पारंपरिक अर्थ और आज के व्यापार संदर्भ में अर्थ दिए हैं। उदाहरण के लिए, 'अग्नि' का पौराणिक अर्थ 'अग्नि देवता' है। लेकिन व्यापारिक संदर्भ में, अग्नि वह पदार्थ है, जिसका उपयोग प्रकृति को अनुकूल बनाने व नियंत्रित करने में किया जाता है। इसी तरह नए संदर्भ में 'बलि' का अर्थ है—वह जो निर्माण की प्रक्रिया में नष्ट होता है।

यह पुस्तक अंग्रेजी से अनूदित है, किंतु नीलम भट्ट के अनुवाद कौशल के कारण यह अनूदित पुस्तक नहीं लगती। इस पुस्तक में देवदत्त ने रेखाचित्र भी बनाए हैं, जो सूत्रों की व्याख्या में सहायक हैं। पौराणिक प्रसंगों की उनकी व्याख्या आज के व्यावसायिक युग के अनुकूल है, इसलिए लोकप्रिय है। प्रबंधन और पौराणिक गाथाओं में रुचि लेने वाले पाठकों को यह पुस्तक पसंद आएगी।

समीक्षक : **रमेश कुमार सिंह**

लेखक : **संजीव जायसवाल 'संजय'**

प्रकाशक : किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली।

पृष्ठ : 152

मूल्य : रु. 380/-

रॉकी अहमद सिंह

कहानी साहित्य की सबसे लोकप्रिय विधा है और इसमें सर्वाधिक विविधता भी दिखाई देती है। कई कथाकारों की शैली और शिल्प तो पुरानी होती है, लेकिन विषयवस्तु बिलकुल समसामयिक। संजीव जायसवाल 'संजय' के कहानी संग्रह में इसी शिल्प और शैली की बारह कहानियाँ हैं। ये कहानियाँ आधुनिक समाज की त्रासदी दिखाती हैं। बिलकुल सरल कथा शैली में ये उन विडंबनाओं का आइना बनती हैं, जिन्हें हम सब देखते हैं, लेकिन अखबार में छपी खबर की तरह तुरंत भूल भी जाते हैं।

संग्रह की पहली कहानी 'उसकी रोटी' रोजी-रोटी की तलाश में भटकते एक बाल मजदूर की कहानी है, जिसके मुँह का निवाला छीनकर समृद्धवर्ग अट्टहास कर रहा है। यह देश के लाखों बाल मजदूरों की कहानी है, जिन्हें उपहास में 'छोटू' कहा जाता है। इसका शीर्षक इसी नाम की मोहन राकेश की प्रसिद्ध कहानी 'उसकी रोटी' की याद दिलाता है। किंतु शीर्षक साम्यता के अलावा दोनों रचनाओं की जमीन में कोई समानता नहीं है।

'गुनाह...' शीर्षक कहानी की नायिका रजिया एक खूंखार आतंकवादी को खत्म कर न केवल अपनी सहेली रजनी की हत्या का बदला लेती है, बल्कि देश को भी भयानक तबाही से बचाती है। कहानी संदेश देती है कि अपने देश से प्यार करना और इंसानियत ही सबसे बड़ा धर्म है।

'रॉकी अहमद सिंह' इस संग्रह की शीर्षक कहानी है। इसमें इसी नाम का मुख्य पात्र है, जो अपने नाम के अनुरूप सांप्रदायिक एकता का प्रतीक नहीं है, बल्कि एक खासा नकारात्मक चरित्र है। प्रेम के प्रभाव से उसमें बदलाव आता है और वह भक्षक से रक्षक बन जाता है। वैसे ही जैसे खुशवंत सिंह के उपन्यास 'ट्रेन टू पाकिस्तान' का जुग्गा सिंह।

'क्रांति शुरू होती है' स्त्री विमर्श की कहानी मानी जा सकती है, किंतु यह जातीय दंभ के टूटने की कहानी भी है। इसमें दुष्कर्म पीड़िता नायिका के संघर्ष में साथ देने के लिए दुष्कर्मी के परिवार की महिलाएँ भी आ जाती हैं।

'तुम निहारिका नहीं हो' एक प्रेमकथा है। इसका आदर्शवादी नायक अपनी प्रेमिका के आदर्श चरित्र के विखंडन को स्वीकार नहीं कर पाता और स्वयं को एक अन्य लक्ष्य के प्रति समर्पित कर देता है। 'कर्ज' भी एक प्रेम कहानी है। प्रेमियों के परिस्थितिवश विछोह और फिर से मिलने की कहानी। प्रेमी व्यावहारिक है, प्रेमिका आदर्शवादी, स्वाभिमानी और त्याग तपस्या की मूर्ति। अंत में दोनों बदलते हैं और एक ही दिशा में चल पड़ते हैं।

'प्रतिशोध' कहानी में एक डॉक्टर अपने कर्तव्य का निर्वाह करते हुए उस दुर्घटनाग्रस्त व्यक्ति की जान बचाती है, जिसने उसके साथ दुष्कर्म किया था। नायिका में बदले की आग बुझी नहीं है। किंतु वह दुष्कर्मी को ग्लानि के नरक में झोंक कर दूसरे तरीके से बदला लेती है।

'आखिरी सलाम' कहानी में एक अबोध बालक समझ नहीं पाता कि उसके शहीद सैनिक पिता के शव को लोग इतना सम्मान क्यों दे रहे हैं। अंततः वह भी अपने पिता को सलामी देता है। लेखक ने 'डिस्क्लेमर' जैसा दिया है कि यह कोई बाल कहानी नहीं है। इस बयान की आवश्यकता नहीं थी। रचनाओं के स्तर का निर्धारण पाठक स्व-विवेक से कर लेता है।

कहानी 'बेड़ियाँ' में धर्म का एक धंधेबाज खुद ठगा जाता है, जब उसका एक 'भक्त' उसकी सारी कमाई हड़प लेता है। धोखेबाजी के इस धर्म के अंजाम पर पाठक मुस्कुराएगा, लेकिन ठगी की शृंखला बन जाने का उसे रोना भी आएगा।

'व्हाइट-मेलिंग' चतुराई और साहस से एक भ्रष्ट व्यक्ति को मजा चखाने की कहानी है। यहाँ एक प्राइवेट शिक्षण संस्थान के कर्ताधर्ता द्वारा स्टॉफ के हर तरह के शोषण का एक शिक्षिका द्वारा प्रतिकार किया जाता है। शोषण के जाल को आधुनिक तकनीक की कैंची काट देती है। संग्रह की अगली कहानी 'मंजिल के करीब' की नायिका भी ऐसी ही चतुराई से अपने प्रभुत्व का बेजा इस्तेमाल करने वाले एक लंपट को सबक सिखाती है। इस कहानी की पृष्ठभूमि फिल्मी दुनिया है। 'सूरज की पहली किरण' इस संग्रह की आखिरी कहानी है। इसमें नायक निहायत फिल्मी अंदाज में नायिका की प्रेम परीक्षा लेता है।

संग्रह की कहानियों के विषयों में विविधता है। ये आज के जीवन की समस्याओं से जूझती हैं। ये कहानियाँ कहानी के आज के मुहावरे से अलग हैं, लेकिन ये समसामयिक युग बोध की हैं। इनमें टिपिकल आदर्शोन्मुख यथार्थ है। संजय प्रवाहशील भाषा में परिवेश और चरित्रों का सृजन करते हैं।

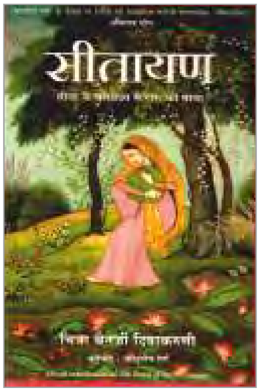

सीतायण

समीक्षक : **डॉ. योगेंद्र नाथ शर्मा 'अरुण'**

लेखक : **चित्रा बैनर्जी दिवाकरुणी**

अनुवादक : **आशुतोष गर्ग**

प्रकाशक : मंजुल पब्लिशिंग हाउस, भोपाल।

पृष्ठ : 350

मूल्य : रु. 342/-

अमेरिका के ह्यूस्टन में रहने वाली भारतीय मूल की पुस्तक लेखिका, कवयित्री और शिक्षिका चित्रा बैनर्जी दिवाकरुणी की 340 पृष्ठों की कृति 'सीतायण' को 'सीता के मुख से कही गई रामकथा की कृति' ही कह सकता हूँ। श्री अमिताव घोष ने इस कृति को 'भारतीय नारी के जीवन पर लिखी गई असाधारण रूप से काव्यात्मक अभिव्यक्ति' कहा है, तो पुस्तक के अंतिम पृष्ठ पर लिखा गया है—"रामायण, विश्व के महानतम महाकाव्यों में से एक होने के अलावा एक दुखांत प्रेमकथा भी है। इसके पुनर्कथन में लेखिका ने सीता को उपन्यास के केंद्र में रखा है और यह सीता के परिप्रेक्ष्य से लिखी गई कथा भी है।"

अंग्रेजी की इस पुस्तक 'सीतायन' का हिंदी में अनुवाद किया है—आशुतोष गर्ग ने और इसके आरंभ में ही कई टिप्पणियाँ छापी गई हैं।

कौतूहल से भरे मन से मैंने भी 'सीतायन' को बड़ी उत्सुकता और लगन से पढ़ा, तो लगा कि चित्रा जी ने वाल्मीकि से लेकर तुलसी सहित अन्य रामकथाओं से खूब 'जोड़-तोड़' करते हुए 'रामकथा' को जनक की पुत्री और श्रीराम की पत्नी 'सीता' के मुख से कहलाकर अपनी 'स्त्रीवादी' सोच का जमकर खुलासा किया है।

एक विवादास्पद मान्यता को लेखिका चित्रा बैनर्जी दिवाकरुणी ने लंका-युद्ध के बाद मृत्यु-शय्या पर लेटे हुए रावण और सीता की भेंट के समय मंदोदरी के मुख से उद्घाटित कराते हुए 'सीता को रावण की पुत्री' कहा है। हालाँकि इसे तर्कसंगत नहीं माना जा सकता। मरते हुए रावण को मंदोदरी वह रहस्य बताती है, जो बेहद अटपटा-सा लगता है—मंदोदरी ने कहा, "उसे याद करो। हमारी एक सुंदर कन्या थी, जिसे आपने पैदा होते ही मार डालने का आदेश दे डाला था। परंतु मैंने उसे मरने नहीं दिया। मुझे आपको यह बात बहुत पहले बता देनी चाहिए थी, परंतु मैं आपसे डरती थी।" और बड़े ही असमंजस में लेखिका सीता से बुलवाती हैं—"इससे पहले कि मैं हिल पाती, रावण ने अचानक काँपते हाथों से मेरा पैर पकड़ लिया।" (पृष्ठ-227)

लेखिका चित्रा बैनर्जी ने अपनी इस पुस्तक 'सीतायन' में सीता को केंद्र में रखकर वास्तव में अपनी 'सत्यवादी सोच' को खुलकर अभिव्यक्ति दी है और रामकथा के कई स्त्री पात्रों; जैसे—सूर्पनखा, मंदोदरी, कैकेयी और विभीषण की पत्नी सरमा के साथ ही सीता के चरित्र को भी स्वेच्छा से शब्दों में पिरोया है। पारंपरिक 'रामकथा' के आध्यात्मिक और पौराणिक स्वरूप को बदलकर चित्रा जी ने इसे 'आधुनिकता और मिथक' को जोड़ करके फिल्मी स्क्रिप्ट में बदल दिया है।

लंका-विजय के पश्चात जब राम, सीता और लक्ष्मण के साथ अयोध्या लौटते हैं, तो लेखिका ने बड़ी अनूठी कल्पना करते हुए 'पुष्पक विमान' में ही सीता और राम की 'रति-क्रिया' का अवकाश ढूँढ़ लिया और संकेत दे दिया कि सीता के गर्भ में जीव आ गया है।

बेस्ट-सेलर पुस्तक होने का दावा करने वाली, अमेरिका के ह्यूस्टन शहर में बैठकर अंग्रेजी में 'स्त्रीवादी' रंग में रंग कर 'सीतायन' में भारतीय रामकथा के रूप को 'सीता' के माध्यम से बदलने वाली इस पुस्तक में 'मिथकीय चेतना' की रक्षा हो पाई है, नारीत्व की गरिमा को उच्चता मिली है, ऐसा प्रतीत नहीं होता। कुछ विशेष वर्ग के लोगों को यह 'सीतायन' भले ही पसंद आ जाए, किंतु इसे जनमानस शायद ही स्वीकार कर पाए?

सच यह है कि लेखिका चित्रा बैनर्जी की मूल पुस्तक का नाम है— 'The Forest of Enchantmant' अर्थात 'वन का आकर्षण'। शायद इसीलिए राम के 'वनवास' को लेखिका ने राम-सीता-लक्ष्मण की साधना का माध्यम न मानकर 'आकर्षण का केंद्र' मानते हुए सीता को केंद्र में रखकर यह पुस्तक रची है।

लेखिका ने चर्चित रामकथा के कई प्रसंगों को अपनी नई कल्पना या भिन्न-भिन्न रामकथाओं से प्रसंगों को लेकर बदल दिया है। 'सीता की अग्नि-परीक्षा' लंका के युद्ध के समय स्वयं सीता द्वारा दी जाती है। अयोध्या आकर सूर्पनखा द्वारा राम की बहन शांता का रूप लेकर सीता से 'रावण का चित्र' बनवाने और राम द्वारा उसको देखकर सीता पर संदेह करने जैसे प्रसंग लिए गए हैं। लेखिका ने सीता को आयुर्वेद, जड़ी-बूटी आदि में निपुण दिखाया है, तो युद्ध-कला में भी पारंगत चित्रित किया है।

लेखिका ने स्त्रियों को लेकर कई प्रश्न उठाए हैं, लेकिन जनमानस में भीतर तक आस्था का केंद्र बनी हुई सीता के इस नए 'अवतार' को भारत में मान्यता मिलना असहज लगता है। कौतूहल के लिए पुस्तक पढ़ी जा सकती है।

प्रेम किहे दुख होय

डॉ. सुरेश प्रकाश शुक्ल

यह अवधी भाषा का उपन्यास है। उपन्यास में ग्रामीण नारी जीवन को रूपायित करने का सफल प्रयास किया गया है। पुस्तक में भारतीय नारी की मर्यादा, उसकी विवशता और गरिमा से जुड़े प्रसंग पाठकों के अंतर्मन को छूते हैं। कथानक में दुलारी और भँवर दोनों ही निम्न आय वर्ग से हैं। उनकी प्रेमकथा में आए व्यवधान से लेकर जीवन के अंतिम सोपान तक विभिन्न सामाजिक आयामों को उपन्यास में रूपायित किया गया है।

उद्योग नगर प्रकाशन, गाजियाबाद।

पृ. 136; रु. 250.00

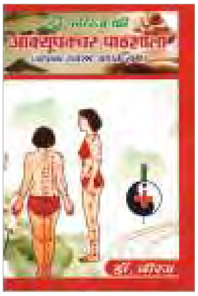

आक्यूपंचर पाठशाला

डॉ. नीरज

प्रस्तुत पुस्तक में आक्यूपंचर चिकित्सा से रोगों के निदान के बारे में अच्छी जानकारी दी गई है। कुल 36 अध्यायों में विभिन्न अंगों से जुड़े बिंदुओं की जानकारी दी गई है। पुस्तक में बताया गया है कि सभी सामान्य व्याधियों को आक्यूपंचर पद्धति से ठीक किया जा सकता है। यह बहुत ही सुरक्षित चिकित्सा पद्धति है। पुस्तक में चित्रों के माध्यम से इन बिंदुओं की जानकारी दी गई है।

कॉन्सिल ऑफ योग एंड नेचरोपैथी, मुंबई।

पृ. 182; रु. 300.00

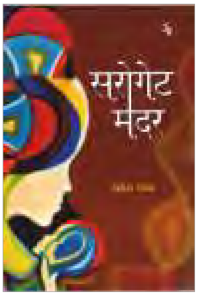

सरोगेट मदर

निर्देश निधि

इस निबंध संग्रह में पर्यावरण को स्वच्छ रखने पर आधारित लेख हैं। इन लेखों में जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, मृदा प्रदूषण के कारकों और उनके निदान पर विभिन्न तथ्यों को बहुत ही स्पष्ट तौर पर व्यक्त किया गया है। साथ ही, मनुष्य को पर्यावरण के प्रति जागरूक रहने की सलाह भी दी गई है।

अनन्य प्रकाशन, नवीन शाहदरा, दिल्ली।

पृ.152; रु.350.00

कहत कबीरन

(काव्य-संग्रह)

रश्मि बजाज

इस कविता संग्रह की कविताएँ चार खंडों में विभाजित हैं। ये खंड हैं : साँच-पथ, कोरोना काले, स्त्री और ऐ मेरे देश। ये कविताएँ देश के साहित्यिक, सामाजिक एवं राजनीतिक परिदृश्य की उथल-पुथल के साथ ही कोरोना वायरस जैसी भीषण वैश्विक महामारी की त्रासदी से साक्षात्कार कराती हैं तो इनमें कुछ अनकही, अनसुनी व्यथाएँ भी हैं जो मन को झकझोरती हैं।

अयन प्रकाशन, महरौली, नई दिल्ली।

पृ. 120; रु. 280.00

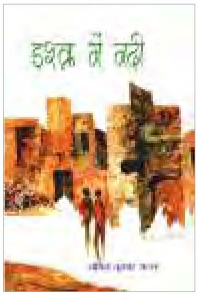

इश्क में नदी

अमित कुमार मल्ल

इस संग्रह की अधिकतर कविताओं में बुनियादी प्रेम झलकता है। कुछ कविताओं में सामाजिक विसंगति पर भी प्रहार किया गया है। कवि ने अपनी कविताओं में उन पलों को शब्दों में सहेजने का प्रयास किया है जब किसी क्षण उसकी बेचैनी बढ़-सी गई है। कवि इन कविताओं में मनुष्य मन की कामनाओं की नई व्याख्या करता है।

अंश प्रकाशन, दिल्ली।

पृ. 112; रु. 225.00

हम हैं जादूगर भैया!

राजेंद्र निशेश

प्रस्तुत पुस्तक में व्यंग्य कविताएँ हैं। कवि ने इन कविताओं में आम आदमी के सपनों, उसकी आशा-निराशा तथा संघर्ष को व्यंग्यात्मक शब्दों में ढालने का सफल प्रयास किया है। इन कविताओं के शीर्षक में ही व्यंग्य का पुट झलकता है, जैसे कि 'सेल दूल्हों की', 'तोंद और प्रगति', 'सिंहासन पर राजा है', 'हम हैं जादूगर भैया' इत्यादि। इन सभी कविताओं में अलग-अलग विषयों पर करारा व्यंग्य है, जिन्हें आत्मसात कर पाठक के मन में गुदगुदी उठना स्वाभाविक है।

समदर्शी प्रकाशन, मेरठ।

पृ. 108; रु. 150.00

नास्त्रेदमस की अचूक भविष्यवाणियाँ

अशोक कुमार शर्मा

इस पुस्तक में लेखक ने नास्त्रेदमस की भविष्यवाणियों का उल्लेख किया है। पुस्तक में कुल नौ अध्याय हैं। इन सभी अध्यायों में उन भविष्यवाणियों का उल्लेख किया गया है जो कि सत्य हुई हैं। जैसे कि कोरोना के चीन से फैलने की भविष्यवाणी। पुस्तक में 21वीं सदी और उसके आगे की भविष्यवाणियों का भी उल्लेख किया गया है।

डायमंड पाकेट बुक्स प्रा.लि., दिल्ली।

पृ. 192; रु. 195.00

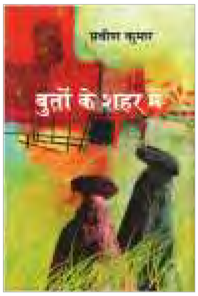

बुतों के शहर में

प्रवीण कुमार

प्रस्तुत काव्य-संग्रह की कविताओं में मानवीयता के अनेक पहलू दिखाई देते हैं। सहज-सरल भाषा में रचित ये कविताएँ जहाँ पाठकों में जिज्ञासा उत्पन्न करती हैं, वहीं सामाजिक सरोकारों से जोड़ने में भी सक्षम हैं। 'जरा ठहरो', 'हरसिंगार', 'प्रेम परिहास', 'अभिशप्त प्रेम', 'आखिरी बार' आदि कविताओं में प्रेम के विविध रूपों को दर्शाया गया है। कविताओं में छोटे-छोटे क्रियाकलापों की सार्थक अभिव्यक्ति है।

अनुभव प्रकाशन, गाजियाबाद।

पृ. 104; रु. 150.00

मेरे गीत मीत जीवन के

डॉ. राम स्वरूप साहू 'स्वरूप'

प्रस्तुत काव्य-संग्रह में 101 कविताएँ हैं। इन गीतों में श्रृंगार व शौर्य के साथ ही गीतों से संबंधित सभी तत्वों का समावेश है। ये कविताएँ गहरी संवेदना में डूबकर सृजित की गई हैं। इन पंक्तियों में जनता के प्रति कवि के हृदय के उद्‍गार व्यक्त हुए हैं। गीतों की भाषा सरल एवं प्रवाहपूर्ण है। यह संग्रह निश्चित तौर पर पठनीय एवं संग्रहणीय है।

उद्योग नगर प्रकाशन, गाजियाबाद।

पृ. 112; रु. 250.00

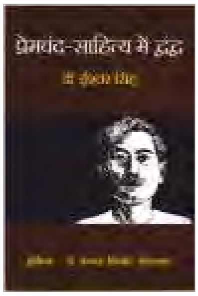

प्रेमचंद-साहित्य में द्वंद्व

डॉ. ईश्वर सिंह

प्रस्तुत पुस्तक में कुल नौ अध्यायों में प्रेमचंद के साहित्य में द्वंद्व होने के भाव को प्रमाणित किया गया है। वास्तव में द्वंद्व का अर्थ दो विपरीत शक्तियों, व्यक्तियों, विचारों, भावों, मान्यताओं व परंपराओं का टकराव या संघर्ष है। इन अध्यायों में यह दिखाया गया है कि प्रेमचंद युगीन सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, दार्शनिक व आर्थिक आदि परिवेश द्वंद्व के तत्वों से परिपूर्ण था।

ए.आर. पब्लिशिंग कंपनी, शाहदरा, दिल्ली।

पृ. 360; रु. 725.00

हिंदी-समीक्षा का प्रपात

डॉ. पंकज साहा

प्रस्तुत लेख संग्रह में कुल 21 अध्याय हैं। इन लेखों में यह बताया गया है कि समीक्षा किस तरह से किसी कवि या लेखक के सृजन का सटीक मूल्यांकन कर पाठकों के मन में सकारात्मक या नकारात्मक भाव उत्पन्न करती है। पुस्तक में बहुत ही चर्चित लेखकों पर आधारित समीक्षाओं को संदर्भित करते लेख हैं। यह लेख संग्रह विभिन्न लेखकों के सृजन में समाहित मूलभूत तथ्यों से पाठकों को रू-ब-रू कराता है।

अधिकरण प्रकाशन, खजूरी खास, दिल्ली।

पृ. 124; रु. 305.00

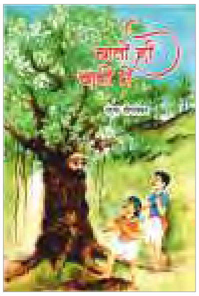

बातों ही बातों में

पद्‍मा चौगांवकर

इस पुस्तक में 21 बाल कविताएँ हैं। आज हर दिन बदलते परिवेश में बच्चों की मानसिकता और मनोविज्ञान में भी बदलाव आ रहा है। ये कविताएँ प्रकृति से जुड़ी होने के कारण बच्चों को पर्यावरण व प्रकृति की चेतना से जुड़ने का सहज ही आमंत्रण देती हैं। संग्रह में कविताओं पर आधारित चित्र भी दिए गए हैं जिससे कि बच्चों को कविताएँ पढ़ते समय सजीवता की गहनतम अनुभूति हो सके। विषय के वैविध्य की दृष्टि से यह संग्रह बाल जगत को समृद्ध करने वाला है।

बोधि प्रकाशन, जयपुर।

पृ. 36; रु. 100.00

राँची में त्रिदिवसीय अनुवाद कार्यशाला आयोजित

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली और डॉ. रामदयाल मुंडा जनजातीय शोध कल्याण संस्थान, राँची (टीआरआई) के संयुक्त तत्वावधान में टीआरआई कॉम्प्लेक्स में त्रिदिवसीय (08-10 मार्च, 2022) अनुवाद कार्यशाला का आयोजन किया गया। कार्यशाला में झारखंड की तीन विलुप्त हो रही जनजातीय भाषाओं—सबर, परहिया और कोरबा में बच्चों की 15 पुस्तकों के अनुवाद का कार्य किया गया। कार्यशाला का उद्घाटन पारंपरिक रूप से नगाड़ा बजाकर किया गया।

न्यास के हिंदी भाषा के संपादक श्री पंकज चतुर्वेदी ने अनुवाद कार्यों की बारीकियों के बारे में जानकारी दी। इस अवसर पर टीआरआई के निदेशक डॉ. रणेन्द्र कुमार, राँची विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति श्री सत्यनारायण मुंडा, प्रो. हरि उराँव, श्री गुंजल इकिर मुंडा, श्री महादेव टोप्पो, प्रो. के.सी. टुडू, श्रीमती बंदना टेटे, डॉ. इंदिरा बिरुआ, श्री गणेश मुर्मू, श्री सोमा सिंह मुंडा, प्रो. अनिल बिरेन्द्र कुल्लू, डॉ. दमयंती सिंकु आदि उपस्थित रहे।

खालसा कॉलेज में अमृतसर पुस्तक मेला

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत द्वारा खालसा कॉलेज, अमृतसर में 05-13 मार्च, 2022 तक 'अमृतसर पुस्तक मेले' का आयोजन किया गया। उद्घाटन सत्र के अवसर पर पंजाब के माननीय राज्यपाल श्री बनवारी लाल

पुरोहित ने विद्यार्थियों को पुस्तक संस्कृति से जुड़ने का आह्वान किया। उन्होंने पुस्तक प्रदर्शनी का अवलोकन भी किया। इस अवसर पर न्यास-निदेशक श्री युवराज मलिक, खालसा कॉलेज चेरीटेबल ट्रस्ट के अध्यक्ष सरदार सत्यजीत सिंह मजीठिया और निदेशक सरदार राजेन्द्र मोहन सिंह छीना, पंजाबी विभाग के अध्यक्ष डॉ. आत्म सिंह रंधावा उपस्थित थे।

मेले के दौरान विभिन्न सांस्कृतिक-साहित्यिक गतिविधियाँ भी संपन्न हुईं। साथ ही दो दिवसीय अनुवाद कार्यशाला में 18 अनुवादकों ने भाग लेते हुए 27 पुस्तकों को अनूदित किया।

इस नौदिवसीय पुस्तकोत्सव का लाभ लगभग 2.5 लाख पुस्तकप्रेमियों ने उठाया। मेले में 73 प्रकाशक शामिल हुए।

'चंबल के महानायक' पुस्तक राष्ट्रपति को भेंट की

अर्जुन सिंह भदौरिया द्वारा लिखित और राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत से प्रकाशित पुस्तक 'चंबल के महानायक : अर्जुन सिंह भदौरिया (कमांडर)' पूर्व सांसद श्री सुधींद्र भदौरिया और श्री के.सी. त्यागी ने महामहिम राष्ट्रपति महोदय को भेंट की। उन्होंने राष्ट्रपति महोदय से पुस्तक के विषय में विस्तृत चर्चा की। इसके अलावा श्री सुधींद्र भदौरिया ने पुस्तक की एक प्रति सांसद व राज्यसभा के उपसभापति श्री हरिवंश नारायण सिंह को भेंट की। यह पुस्तक श्री सुधींद्र भदौरिया के पिता, सांसद और क्रांतिकारी श्री अर्जुन सिंह भदौरिया के चंबल घाटी में आजादी और समतामूलक समाज के लिए किए गए संघर्ष की दास्तान है।

गुजरात के माननीय राज्यपाल को पुस्तक भेंट की

पद्मश्री कनुभाई हसमुखभाई टेलर पर लिखित और राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'वॉरियर ऑन व्हील' गुजरात के माननीय राज्यपाल श्री आचार्य देवव्रत को भेंट की गई। इस औपचारिक भेंट में पुस्तक के लेखकद्वय—सुश्री आभा खेतरपाल और रचना जिगर पहाड़ियावाला ने राज्यपाल महोदय से पुस्तक की विषय-वस्तु पर विस्तृत चर्चा की।

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत ने आयोजित किया बिहार पुस्तक मेला

बिहार दिवस के उपलक्ष्य में 22-24 मार्च, 2022 तक गांधी मैदान, पटना में राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत द्वारा बिहार पुस्तक मेले का आयोजन किया गया।

कार्यक्रम का उद्घाटन प्रो. अरुण कुमार भगत, माननीय न्यास-सदस्य और सदस्य, बिहार लोक सेवा आयोग, पटना ने किया। उद्घाटन उद्बोधन के दौरान उन्होंने कहा कि बुके की जगह बुक देने की परंपरा शुरू होनी चाहिए।

इस अवसर पर न्यास के उपनिदेशक श्री राकेश कुमार उपस्थित रहे।

लखनऊ पुस्तक मेले में राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत का स्टॉल

न्यास में आए एमआईटी स्कूल ऑफ गवर्नमेंट के छात्र

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत ने 28 मार्च, 2022 को एमआईटी स्कूल ऑफ गवर्नमेंट, पुणे से राजनीतिक नेतृत्व और सरकार में मास्टर प्रोग्राम के 17वें बैच के छात्रों का नई दिल्ली में अपने मुख्यालय में स्वागत किया। छात्रों का न्यास-निदेशक श्री युवराज मलिक के साथ एक संवादात्मक सत्र था। इस अवसर पर श्री संकल्प सिंघई, ऑफिसर ऑन स्पेशल ड्यूटी, एमआईटी वर्ल्ड पीस यूनिवर्सिटी, पुणे ने भी श्री मलिक को मेमेंटो देकर सम्मानित किया।

राजस्थान के राज्यपाल को न्यास-निदेशक ने पुस्तकें भेंट कीं

श्री युवराज मलिक, निदेशक, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत ने राजस्थान के माननीय राज्यपाल श्री कलराज मिश्र से मुलाकात की और न्यास द्वारा प्रकाशित पुस्तकों का एक सेट प्रस्तुत किया। भारतीय संविधान को बढ़ावा देने के लिए माननीय राज्यपाल के प्रयासों पर चर्चा करते हुए श्री मलिक ने संविधान और आदर्श जीवन-मूल्यों से संबंधित पुस्तक संस्कृति को बढ़ावा देने के बारे में चर्चा की।

हैदराबाद के बेगमपेट हवाई अड्डे पर 24-27 मार्च, 2022 तक आयोजित किए गए 'विंग्स इंडिया 2022' कार्यक्रम में राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत के स्टॉल पर पुस्तक खरीदते पुस्तकप्रेमी

पाठकीय प्रतिक्रिया

'पुस्तक संस्कृति' का अक्तूबर-दिसंबर, 2018 अंक पढ़ने का अवसर प्राप्त हुआ। प्रत्येक अंक की भाँति इस अंक में भी अच्छी-खासी सामग्री है। पत्रिका की विशेषता इस बात में निहित है कि इसमें जहाँ प्रौढ़ साहित्यिक-सांस्कृतिक परिवेश देखने को मिलता है वहाँ साहित्य की नींव माने जाने वाले क्षेत्र बालसाहित्य पर भी अतुलनीय चर्चा/सामग्री पढ़ने को मिलती है। 'पुस्तक समीक्षा' कॉलम के माध्यम से भी चेतना की खिड़कियाँ खुलती हैं। उत्तमता के साथ ऐसी लाभकारी सामग्री प्रदान करने के लिए हार्दिक बधाई और साधुवाद!

—**डॉ. दर्शन सिंह 'आशट'**, पटियाला, पंजाब

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत की प्रतिष्ठा में वृद्धि करने वाली द्विमासिक पत्रिका 'पुस्तक संस्कृति' का मार्च-अप्रैल, 2022 का अंक 'शौर्य विशेषांक' के रूप में मिला, जो निस्संदेह बेजोड़ और संग्रहणीय बन गया है। कविता शइकिया राजखोआ का आलेख '1961 : चीन से भिड़ंत और भूपेन हाजरिका' तो इस अंक को सार्थक बना रहा है। महत्वपूर्ण युद्ध-इतिहास को उकेरते इस आलेख में असमिया कवि भूपेन हाजरिका को याद किया जाना पत्रकारिता की सार्थकता ही है। विनीत शर्मा, बजरंगलाल जेठू के शौर्यपूर्ण आलेखों के साथ उत्तराखंड के गौरव 'भारतीय सैन्य अकादमी' पर सचित्र आलेख देकर तो उत्तराखंड का सम्मान बढ़ा दिया है और इस गौरवशाली प्रतिष्ठान का पूरे भारत को परिचय दिया है। इस अंक का सर्वाधिक महत्वपूर्ण आलेख है—'सेना के शौर्य, पराक्रम की गाथा फिल्म 'हकीकत'', जिसमें प्रदीप सरदाना ने जनमानस की अनेक स्मृतियों को फिर से सजीव कर दिया है।

कुल मिलाकर मैं कह सकता हूँ कि आपके संपादन में आया यह 'शौर्य विशेषांक' भारतीय रक्षा सेनाओं के उच्चतम पराक्रम को पाठकों तक पहुँचाने में पूर्णतः सफल है और इसे मैं पत्रकारिता का गौरव कह सकता हूँ। आपको और राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत को अशेष बधाइयाँ देता हूँ।

—**डॉ. योगेन्द्र नाथ शर्मा 'अरुण'**, रुड़की

आज अनायास ही पत्रिका 'पुस्तक संस्कृति' को पढ़ने का सौभाग्य मिला। हर माह कई पत्रिकाएँ आती हैं और कई पढ़ी नहीं जातीं। यदि यह पत्रिका भी यूँ ही निकल गई होती तो मैं आपके इस संपादकीय से वंचित रह जाता जिसने मेरी आत्मा को भी झकझोर कर रख दिया। एक स्थान पर आपने बैगा जनजाति के एक घर का जिक्र किया है और उसके चार-पाँच साल के बच्चे का जोर-जोर रोने का भी। बच्चे के रोने का कारण उसकी भूख और उसकी माँ द्वारा बताया गया निदान तो सचमुच किसी भी भले आदमी को रुलाने के लिए काफी है। कितने ही प्रश्न सामने आकर खड़े हो जाते हैं। आपने अपने संपादकीय को सटीक शीर्षक दिया है—'गणतंत्र हमसे एक प्रश्न पूछता है'।

ऐसे लेख के लिए न्यास के अध्यक्ष महोदय को बहुत-बहुत बधाई!

—**बी.एल. गौड़**

लंदन पुस्तक मेले में साहित्यकार मिलन

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत ने लंदन पुस्तक मेले (05-07 अप्रैल, 2022) में सक्रिय सहभागिता निभाते हुए भारतीय साहित्य और संस्कृति को दूर देश तक पहुँचाने में अहम भूमिका निभाई। न्यास के स्टॉल का उद्‌घाटन उप उच्चायुक्त श्री सुजीत घोष ने किया। मेले के दौरान ही न्यास ने एक और पहल करते हुए 'साहित्यकार मिलन' कार्यक्रम का आयोजन किया। यह आयोजन 'कथा यू.के.' के संयुक्त तत्वावधान में भारतीय उच्चायोग में किया गया। इस अवसर पर न्यास के अधिकारियों ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में लंदन के योगदान पर एक पुस्तक प्रकाशित करने की इच्छा जाहिर की, जिसमें वहाँ के लोगों, संस्थाओं एवं स्थान विशेष के योगदान को शामिल करने की

बात कही। श्री सुजीत घोष ने उपस्थित साहित्यकारों से ब्रिटेन में हिंदी की स्थिति पर विस्तृत जानकारी हासिल करने के लिए सबसे सवाल-जवाब किए। इस आयोजन में हिंदी के 12 लेखक शामिल हुए। इस अवसर पर काउंसलर श्री मनमीत सिंह नारंग मिनिस्टर (कोऑर्डिनेशन); श्री संदीप सिंह, सेकंड सेक्रेट्री प्रशासन; श्रीमती नंदिनी साहू, हिंदी अधिकारी; डॉ. अरुणा अजितसरिया; इंदु बैरॉठ; श्री के.सी. मोहन; श्री आशुतोष कुमार; श्री प्रदीप गुप्ता; श्री नंद अजितसरिया; श्रीमती अलका राय; न्यास के उपनिदेशक श्री मयंक सुरोलिया व हिंदी भाषा के संपादक श्री पंकज चतुर्वेदी मौजूद रहे। सभी ने चर्चा में सार्थक सहयोग दिया। कार्यक्रम का संचालन श्री तेजेन्द्र शर्मा एम.बी.ई. (महासचिव 'कथा यू.के.' एवं संपादक 'पुरवाई') ने किया।

यूनेस्को पहुँचा एनबीटी का प्रतिनिधिमंडल

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत के प्रतिनिधिमंडल ने आगामी पेरिस बुक फेस्टिवल, 2022 में भारत-अतिथि सम्मान प्रस्तुति हेतु तैयारी के लिए पेरिस का दौरा किया। फ्रांस में भारत के माननीय राजदूत श्री जावेद अशरफ के साथ एक विस्तृत बैठक की गई।

न्यास-निदेशक श्री युवराज मलिक ने यूनेस्को में भारत के माननीय राजदूत श्री विशाल वी. शर्मा को इंडिया/75 शृंखला की पुस्तकों का एक सेट उपहार में दिया। इस अवसर पर डॉ. के.एम.पी. शर्मा, डीसीएम; श्री कुमार विक्रम, वरिष्ठ संपादक और परियोजना प्रमुख, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास; श्री जोनक दास, वरिष्ठ संकाय, एनआईडी और श्री टी. शर्मा, प्रथम सचिव उपस्थित थे। प्रतिनिधिमंडल ने यूनेस्को प्रकाशन के प्रमुख श्री इयान डेनिसन के साथ पेरिस में उनके मुख्यालय में भी बैठक की।

कोच्चि में बालसाहित्य महोत्सव आयोजित

कोच्चि अंतरराष्ट्रीय पुस्तक महोत्सव (01-10 अप्रैल, 2022) में राष्ट्रीय पुस्तक न्यास ने दो दिवसीय बालसाहित्य महोत्सव का आयोजन किया। आयोजन का उद्‌घाटन गोवा के माननीय राज्यपाल श्री पी.एस. श्रीधरन पिल्लई ने किया। इस अवसर पर श्री ई.एन. नंदकुमार, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास बोर्ड के सदस्य; श्री मनकोम्बू गोपालकृष्णन, निदेशक, कोच्चि लिटरेचर फेस्टिवल; श्री के.एल. मोहना वर्मा, लेखक; सुश्री नदीन ब्रून कॉस्मे, फ्रेंच बच्चों के लेखक उपस्थित थे। इस दो दिवसीय बालसाहित्य महोत्सव में मलयालम, अंग्रेजी और फ्रेंच में कहानी सुनाने और रचनात्मक थिएटर सत्र आयोजित किए गए।

RNI NO. DELHIN / 2016 / 68219

मनोरंजन, ज्ञान और जिज्ञासा की अनूठी दुनिया!

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत के कुछ नए प्रकाशन

न हन्यते...

जीवन आख्यान

नेताजी सुभाष चंद्र बोस

सच्चिदानन्द चतुर्वेदी

नेताजी सुभाष चंद्र बोस के जीवन आख्यान पर 62 अध्यायों में विस्तृत प्रकाश डाला गया है। इन अध्यायों में नेताजी की गिरफ्तारियों से लेकर स्वराज पार्टी, आजाद हिंद फौज के कुशल प्रबंधन, बगावत और समर्पण, विदेशों में उनकी लोकप्रियता, वहाँ राजनयिकों के साथ उनके संबंध आदि पर महत्वपूर्ण जानकारी है। पुस्तक में नेताजी के जीवन से संबंधित सभी तथ्यों को क्रमानुसार सही तिथि व घटनाक्रम के साथ देने का प्रयास किया गया है।

पृ. 242; रु. 310.00

चंबल के महानायक

अर्जुन सिंह भदौरिया

(कमांडर)

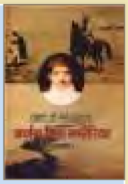

अर्जुन सिंह भदौरिया

कमांडर अर्जुन सिंह भदौरिया ने अपनी जुझारू प्रवृत्ति और अपनी संगठन कुशलता से 'लाल सेना' के नाम से एक ऐसी क्रांतिकारी सेना का गठन किया जिससे ब्रिटिश सरकार हिल गई थी। उन्होंने चंबल के आस-पास के क्षेत्र को केंद्र बनाकर रेल, डाक और तार सेवाएँ ठप कर सरकार की नाक में दम कर दिया था। उन्हें 44 साल कैद की सजा सुनाई गई। यह पुस्तक भदौरिया जी के जीवन-संघर्ष व इतिहास के कई अनछुए पहलुओं का दस्तावेज है।

पृ. 296; रु. 400.00

पेड़ चोरों का रहस्य

कल्पना कुलश्रेष्ठ

चित्र : **फजरूद्दीन**

यह बाल उपन्यास 9 से 12 वर्ष तक के बच्चों के लिए है। इस उपन्यास में विज्ञान कथा के माध्यम से बच्चों को ज्ञानवर्द्धक बातें बताई गई हैं। रोचक प्रसंगों के द्वारा घटनाक्रम को आगे बढ़ाया गया है। कहानी में रोचकता तब आती है जब दिल्ली के संरक्षित वन क्षेत्र से 65 विशाल पेड़ गायब हो जाते हैं। उन पेड़ों को जड़ समेत मिट्टी से उखाड़ लिया गया था। मिट्टी के अंदर सिर्फ उनकी जड़ों के निशान दिखाई दे रहे थे। यह उपन्यास बच्चों में पढ़ने की उत्सुकता जगाता है।

पृ. 96; रु. 70.00

इतिहास, समाज और परंपरा

धर्मपाल के आलेख

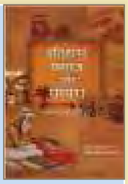

संकलन एवं संपादन :

लक्ष्मी नारायण मित्तल

प्रस्तुत पुस्तक में धर्मपाल जी के लेखों का संग्रह है। पुस्तक दो खंडों में है। प्रथम खंड में तीन अध्यायों में धर्मपाल जी का परिचय है, जबकि द्वितीय खंड में 19 अध्यायों के माध्यम से धर्मपाल जी के लेखन के बारे में बताया गया है। उन्होंने भारत की श्रेष्ठ शिक्षा-पद्धति को उजागर किया है। इन लेखों में आधुनिक पाश्चात्य सभ्यता के दुष्प्रभावों का भी प्रभावी वर्णन है।

पृ. 238; रु. 300.00

कोरोना काल में शिक्षा

बदलाव और नए प्रयोग

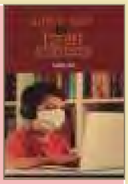

संजीव राय

इस पुस्तक में कुल नौ अध्याय हैं।

प्रत्येक अध्याय में महामारी को केंद्र में रखकर शिक्षा जैसे महत्वपूर्ण अनुशासन पर प्रकाश डाला गया है। शिक्षा में तकनीक की अपनी भूमिका है, लेकिन बच्चों के इंटरनेट-टी.वी.-मोबाइल के उपयोग को लेकर अभिभावकों-शिक्षकों की रणनीति क्या होनी चाहिए? लेखक ने इस विषय पर भी महत्वपूर्ण जानकारी दी है। पुस्तक में भारतीय स्कूलों के संदर्भ में 'ऑनलाइन शिक्षा' और 'होम स्कूलिंग' को नए ट्रेंड के रूप में बताया गया है।

पृ. 100; रु. 160.00

छोटानागपुर के टाना भगत

विजय पाणि पाण्डेय

अनुवाद : **धनंजय चोपड़ा**

प्रस्तुत पुस्तक में कुल सात अध्याय हैं, जिनमें प्राचीन आदिवासी परंपराओं और संस्कारों पर प्रकाश डाला गया है। छोटानागपुर के उराँव लोगों ने वैष्णव को अपनाया और ईश्वर-भक्ति को प्रारंभ किया, जिसने भगत संस्कृति का रूप ले लिया। प्रस्तुत पुस्तक में टाना भगतों की एक पंथ के रूप में उत्पत्ति से लेकर उनकी सामाजिक संरचना, जीवन-यात्रा के संस्कार, आर्थिक संरचना और उनके लोकगीत आदि के बारे में विस्तृत जानकारी दी गई है।

पृ. 128; रु. 205.00

महावीर

लाचित बरफुकन

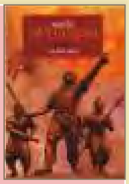

राजलक्ष्मी खाउंद

पूर्वोत्तर भारत के 'वीर शिवाजी' कहे जाने वाले लाचित बरफुकन 17वीं शताब्दी के एक महान सेनापति और वीर योद्धा थे। असम के अहोम साम्राज्य के सेनापति लाचित बरफुकन ने 1667 ई. में औरंगजेब की सेना को पराजित किया था। इस पुस्तक में लाचित बरफुकन के जीवन और उनके वीरतापूर्ण कृत्यों का रोचक वर्णन है।

पृ. 138; रु. 195.00

nbt.india

एकः सूते सकलम्

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत

शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार

नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया, फेज़-II, वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070.

फोन : 011-26707761 ● **ई-मेल** : nro.nbt@nic.in

वेबसाइट : www.nbtindia.gov.in